आकार कल्पना

आशीर्वाद

कलागुरू श्री असित कुमार हालदार

प्रस्तावना

कलागुरू श्री जगन्नाथ मुरलीधर अहिवासी

लेखक

रणवीर सक्सेना

बी० ए०, एफ० एल० एस० ए०, जी० डी० आर्टस०

अध्यक्ष चित्रकला विभाग

डी० ए० वी० कालिज,

देहरादून

All rights reserved by the author.

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्रकाशक

रेखा प्रकाशन कार्यालय

देहरादून

745.4
S98A

145080

प्रकाशक

श्रीमती सरला रमण

रेखा प्रकाशन कार्यालय

९ आनन्द स्वरूप क्वार्टर्स

देहरादून

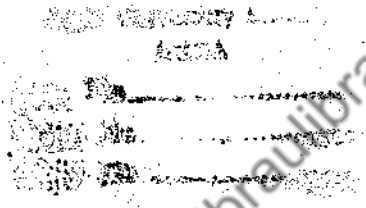

प्रथम संस्करण जनवरी सन् १९५८ ई०

मूल्य १०)

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

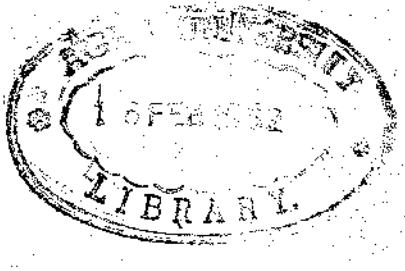

मुद्रक

श्री जगदीश शरण

राष्ट्रीय प्रेस, मथुरा।

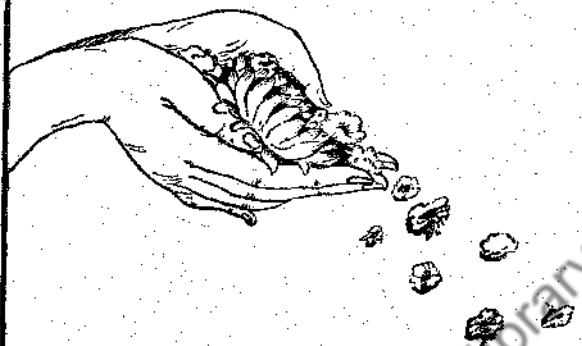

समर्पण

जिनकी प्रेरणा एवं शुभाशीर्वाद

से

इस रचना को जन्म मिला

उन

परम पूजनीया भाभी

श्रीमती सुमित्रा देवी सक्सेना

के

चरण-कमलों

में

सादर समर्पित

Downloaded from www.ebraulibrary.org

फर्श की आकार कल्पना

आशीर्वाद

अपने शिष्य 'श्री रणवीर सक्सेना' की आलेखन पुस्तक आकार-कल्पना का ललित-कला एवं कौशल के जिज्ञासुओं से परिचय कराते हुये मुझे हर्ष है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि देश के कला साहित्य में यह एक अमूल्य योग होगा। उत्तर-प्रदेश की उच्चतर माध्यमिक एवं माध्यमिक कक्षाओं में चित्र कला एवं आलेखन की शिक्षा व्यवस्था होते हुए भी परम्परागत एवं मौलिक आकारों पर पुस्तकों का अभाव है।

मुझे प्रसन्नता है कि लेखक ने अपनी उक्त पुस्तक में भारतीय परम्परागत कला का गूढ़ विवेचन किया है, तथा पश्चिमी पद्धति पर आधुनिकता लाने का प्रयास नहीं किया है। सौन्दर्य सज्जा के हेतु जीवित पदार्थों के आकार में भी परिवर्तन किया जा सकता है किन्तु ललित कलाओं के सम्बन्ध में अजन्ता एवं मुगल तथा राजपूत काल के कलाकारों ने यह सिद्ध कर दिखाया है कि सृष्टि की स्वाभाविक कृतियों को सम्मुख रखते हुए बिना किसी प्रकार का हेर-फेर किये भी आकारों की सुन्दर रचना की जा सकती हैं।

हमारे कलाकार प्रभावशाली आकारों की रचना करने में सिद्धहस्त थे और उन्होंने यह प्रमाणित कर दिखाया कि केवल कल्पना के सहारे साधारण रेखाओं और आकारों के आधार पर प्रभावशाली चित्र की रचना की जा सकती है।

अपनी संस्कृति के आधार पर 'कला' को तीन 'गुणों' के अन्तर्गत रखा जा सकता है।

प्राकृतिक सौन्दर्य का ध्यान रखते हुये, भौतिक एवं मानवीय विज्ञान की उन्नति को सम्मुख रखते हुये प्रकृति के साथ कलाकार का जब रागात्मक सम्बन्ध दृष्टि गोचर होता हो तो कला सत्व गुणमयी होगी। भौतिक विज्ञान का गूढ़ अध्ययन करने पर अभिव्यक्ति भावात्मक तो हो सकती है किन्तु स्वाभाविकता के प्रतिकूल नहीं।

वह कला जो सौन्दर्य की अभिव्यक्ति केवल रजनार्थ एवं व्यावसायिक दृष्टि में करती हो रजोगुण प्रधान होती है। पोस्टर व्यंग्यात्मक चित्र और संपूर्ण सज्जा के हेतु की गई कला कृतियों का केवल व्यावसायिक मूल्य ही होता है। स्वाभाविकता एवं प्राकृतिक सौन्दर्य में हेर-फेर करने से केवल इसी प्रकार की कला का जन्म होता है।

तामसी कला वह है जिसका जन्म बालक द्वारा निर्मित निरर्थक आकारों से होता है। आधुनिक मनोवैज्ञानिक कला, यथार्थवाद जिसके जन्म दाता यूरोप के पिकासो एवं मैटेसी है, भी इसी के अन्तर्गत है।

श्री सक्सेना की "आकार कल्पना" में प्राकृतक आकारों की संतुलित एवं सुन्दर अभिव्यंजना है। ऐसी अनुपम पुस्तक के लिए मैं अपने प्रिय छात्र को बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि अन्य प्रकाशकों एवं कला-साहित्य प्रेमियों के लिये यह पुस्तक पथ-प्रदर्शक बनकर चित्रकला एवं आलेखन को पाठ्य क्रम में स्थान देने वाले शिक्षा केन्द्रों के लिये भी माप-दण्ड का काम देगी।

असितकुमार हालदार

Downloaded from www.dsraulibrary.org.in

धन्यवाद प्रकाश

मैं आगरा विश्व विद्यालय के प्रति अपना विशेष आभार प्रकट करता हूँ जिसकी १५००) की उदार आर्थिक सहायता से ही इस पुस्तक का प्रकाशन सम्भव हो सका है। विश्व विद्यालय के वर्तमान उप-कुलपति श्री लेफ्टिनेन्ट कर्नल कालका प्रसाद भटनागर तथा संस्था के अन्य अधिकारियों के प्रति मैं विशेष रूप से कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने अपनी इस उदारता से मुझे प्रोत्साहित किया है। आशा है, इन महानुभावों की स्नेहमयी छाया में मेरी कला भविष्य में अधिक फूले-फलेगी।

रणवीर सक्सेना

Downloaded from www.dsalibrary.org.in

* विषय सूची *

	पृष्ठ
आशीर्वाद	
प्रस्तावना	अ—ब
अपनी बात	स—र
आकार कल्पना— सौन्दर्य क्या है ? 'अभिव्यक्ति और सौन्दर्य', कला के नाना रूप और चित्रकला, आकार कल्पना और चित्रकला, प्रकृति स्वयं आकार बनाती है, आकार की चार विशेष बातें, रेखा निरूपण, आकार कल्पना के कारण, आकार कल्पना में रेखा और रङ्ग।	१—१४
रंग का महत्व— समन्वयात्मक वर्ण योजना, प्रतियोगितात्मक वर्णयोजना, प्रतियोगिता समन्वय रङ्ग योजना।	१४—१८
किनारी डिजाइन—	१८—२०
भीतरी सजावट वाले आकार— वाल पेपर, कर्टेन डिजाइन	२०—२४
रंग योजना—	२५—२७
आल ओवर पैट्टर्न—	२८—३०
काढ़ने बुनने के लिये आकार कल्पना— टेक्सटाइल डिजाइन	३१—३४

Downloaded from www.dharulibrary.org.in

पृष्ठ

नवीन आकारों के लिए मूलाधार— ३४–३६

अल्पना आलेख्य— ३४–४६

अन्तः कक्ष प्रसाधन आकार— ४८–५४

आकार कल्पना का विश्व प्रिय रूप—

अजन्ता, उड़ीसा, अमरावती, बाघ की गुफायें, एलेरा, एलीफेन्टा, बादामी, मथुरा, सांची, भरहुत, प्राचीन पुस्तकों में बने आकार ५५–६५

जाली का काम— ६६–६७

जड़ाई पच्चीकारी का काम— ६८–६९

टाइल— ७०–७३

१०१ रेखाकार आकार कल्पनाऐं और ४ रंगीन आकार कल्पनाऐं

Downloaded from www.dhraulibrary.org.in

आकार कल्पना

'प्रस्तावना'

मानव जीवन के मधुर मादक क्षणों की अनुभूति की वर्णमय विवृत्ति ही कला का कमनीय कलेवर धारण करती है। यद्यपि कलाकार युगानुकूल ही हृत्तंत्री के तारों को झंकृत करता है किन्तु वह शाश्वत झंकार अपने प्रसारित रूप में युगयुगान्तरों तक मानव की मनोमय जगती पर अखन्ड राज्य करती है। कलाकार के अन्तस्तल की यह पंचधा पुलकावलि विश्व-हृदय को रस निमज्जित कर युगीय प्रतारणाओं में हित सम्पादन करती है।

यदि प्रभाव एवं प्रसाधनों की सूक्ष्मता के कारण साहित्य को शीर्ष स्थान मिला तो व्यापकता (स्थूल और सूक्ष्म दोनों रूपों में) की दृष्टि से चित्रकला को केन्द्र स्थान। कोई भी कलाकार हो, भावों को व्यक्त करने के पूर्व उनका एक चित्र मन पटल पर अवश्य चित्रित कर लेता है। चित्रकला में यही सूक्ष्म स्थूल बन कर "आकार कल्पना" संज्ञा से अभिहित होता है। इसी परिणति के सिद्धान्त इस पुस्तक, 'आकार कल्पना' के विषय हैं।

प्रस्तुत पुस्तक चित्रकला-साहित्य के क्षेत्र को श्री रणवीर सक्सेना जी की अनुपम देन है। यद्यपि इस विषय पर अभारतीय भाषाओं में बहुत कुछ लिखा जा चुका है और लिखा जा रहा है, किन्तु भारतीय संस्कृति एवं चित्रकला (भारतीय) परम्परा से भिन्न होने के कारण भारतीय विद्यार्थी को उससे पूर्ण सन्तुष्टि नहीं होती। इसके अतिरिक्त भारत में चित्रकला का प्रत्येक विद्यार्थी उन भाषाओं से अभिज्ञ न होने के कारण उन पुस्तकों से लाभ नहीं उठा पाता। अतः हिन्दी में इस विषय का विवेचन करने वाली पुस्तक का अभाव प्रतीत होता था जो इस पुस्तक ने पूरा कर दिया।

चित्रकला एक ऐसा विषय है जिसमें प्रयोग को सिद्धान्त की अपेक्षा अधिक महत्व दिया जाता है। किन्तु अध्यापन कार्य में हर समय प्रयोग का अवसर नहीं मिलता और सिद्धान्तों का मौखिक विवेचन आवश्यक हो जाता है। अतएव अध्यापकों के कार्य को सुगम बनाने में भी यह पुस्तक अत्यन्त उपादेय सिद्ध होगी।

विषय की दृष्टि से इस पुस्तक में 'आकार कल्पना' के सभी अङ्ग-उपांगों का पूर्ण विवेचन हुआ है। लेखक की सर्वाधिक सफलता इस बात में है कि उसने इन सभी को एक सच्चे भारतीय के दृष्टिकोण से देखा है और उदाहरणों के लिये भारतीय वस्तुओं को लिया है। अपने कथन की पुष्टि के लिए मैं पाठकों का ध्यान 'प्रकृति स्वयं आकार बनाती है' और नवीन आकारों का मूलाधार' जैसे विषयों की ओर आकर्षित करता हूँ।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

'आकार कल्पना' के अन्तर्गत उसके 'कारण', 'रूप' और 'रङ्ग-योजना' का महत्व अधिक है। प्रथम दो के सम्बन्ध में लेखक के मौलिक विचार विषय को अत्यन्त स्पष्ट कर देते हैं। साधारणतया किसी फलक पर रेखाओं से बने और रंगों से पूर्ण चित्र ही सुन्दर और उद्भावना शक्ति के परिचायक समझे जाते हैं और 'आकार कल्पना' कहलाते हैं। यहाँ लेखक के अनुसार उपयोगिता भी सौन्दर्य का प्रकार बन कर 'आकार कल्पना' के क्षेत्र को अति विस्तृत बना देती है। इसी प्रकार 'आकार कल्पना के रूप' के अन्तर्गत 'प्राकृतिक रूप' अब तक की रूढ़िगत संकुचित धारणा का विरोध करता है। यहीं यदि हम 'ओल ओवर पैटर्न' पर ध्यान दें तो मेरा मत पूर्णरूपेण पुष्ट हो जाता है।

अन्त के चार लेख जो देश के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में प्रचलित कपड़े पर अङ्कित आकार कल्पनाओं से सम्बन्धित हैं, विद्यार्थियों के ज्ञान पुष्ट करने में विशेष सहायक होंगे। मैं समझता हूँ कि इस प्रकार से आकार कल्पना पर वैयक्तिक और परम्परा सम्मत विचारों को प्रकट करने वाली यह पहली पुस्तक है और आशा करता हूँ कि इन्टर और बी० ए० के विद्यार्थी भी इससे पर्याप्त लाभ उठायेंगे।

धन रहीम जलपंक को लघु जिय पियत अघाय।
उदधि बड़ाई कौन है (सो) जगत पियासों जाय।

अनेक बड़े ग्रन्थों की अपेक्षा (जो हमको तृप्त न कर सकें) उत्तम हो यदि यह छोटा सा ग्रन्थ कला-पिपासुओं की प्यास बुझाने में सहायक हो।

आशीर्वाद

२-११-१९५५

जगन्नाथ अहिवासी

अध्यक्ष ललित कला विभाग

सर० जे० जे० स्कूल आफ आर्टस, बम्बई

Downloaded from www.dhaulibrary.com

अपनी बात

'आकार कल्पना' मेरे जीवन के कुछ क्षणों का स्वरूप उपस्थित करती है। इसे पाठकों के, कला-प्रेमियों के कर-कमलों में देते हुये आज मुझे जो हर्ष हो रहा है उसका प्रकाशन कुछ शब्दों में करना असम्भव है। कला के आज के युग में जीवन का अन्तर निगूढ़ रूप आज के विचारक के समक्ष यथार्थ रूप से स्पष्ट हो रहा है, मानव भाव जगत् की अन्तस्थली में मार्मिक विचारशील मस्तिष्क स्वतः प्रविष्ट हो जायेंगे और वे आकार कल्पना के कलेवर में ग्रन्थकार का उद्देश्य पालेंगे।

'आकार कल्पना' के सम्पूर्ण लोक जीवन और परमार्थ जीवन में अपना वैशिष्ट्य है, इसी से सृष्टि कर्त्ता, मानव, धर्म, सभ्यता, संस्कृति के जीवन, विकास अभ्युदय और युगान्तरों की चेतना का इतिहास स्पष्ट होता है। व्यक्तिगत जीवन से लेकर विराट जीवन तक का विकास ह्रास का मुखरण हम जीवन से सम्बन्धित सभी आकारों में पाते हैं। पुराकाल से लेकर अब तक सभ्य समाज उत्कृष्ट संस्कृतियों में इसका निगूढ़ तथ्य युगान्तरों की परिस्थितियों के अनुसार हमारे समक्ष सिद्धान्तों, इतिहासों, कथाओं, एवं प्रत्यक्ष दर्शनों में उपस्थित करता रहा है। कलाकार की सम्पूर्ण कलात्मक भावनाओं का केन्द्रीकरण एक छोटे से पदार्थ और थोड़े से स्थान पर किसी विशेष प्रयोजन सिद्धि के लिये सम्पूर्ण परिश्रम और धैर्य सहित जब होता है तभी अमूल्य आकार कल्पना होती है। इसी आकार कल्पना से यह स्पष्ट होता है कि किसी सभ्यता, संस्कृति, देश आदि के निर्माण में आकार कर्त्ताओं का कितना बड़ा हाथ है। भारतीय आकार कल्पना को देख कर उससे हमें भारत के उज्ज्वल भूत काल का ज्ञान, वर्तमान में उसी का परिवर्तित परन्तु प्रभावशाली स्वरूप एवं भावी युग के लिये उसकी उन्नतिशीलता का आभास हो जाता है। अजन्ता, साँची, अवन्ती, मथुरा, अमरावती, भिरौत, सारनाथ के आकार हमारी कला के गौरव-आलोक-स्तम्भ हैं। प्रस्तुत पुस्तक में यद्यपि थोड़ा सा प्रकाश हम इस पर दे गये हैं परन्तु प्रधानतः इस पुस्तक को सुकुमार बुद्धि के नव शिक्षा योग्य कलाकारों के लिये हमने निर्मित किया ताकि आकार कल्पना के गम्भीर सागर में सरलता से अपना पथ प्रशस्त कर सकें।

'आकार कल्पना' से हमें प्रत्येक देश-निवासी उनकी रुचि अभिरुचि रहन-सहन के ढङ्ग, शील स्वभाव, जीवन की परिस्थितियाँ, राजनीतिक उलटफेर आदि अवगत होते हैं। किसी विशेष युग में

Downloaded from www.dhrauvlibrary.org.in

पाये जाने वाले आकारों से हमें उस युग का स्वरूप दर्शन हो जाता है। प्राचीन रूढ़ि युग के बर्तनों, वस्त्रों तथा उन पर पशुओं के बने आकार देख हमें तत्कालीन जन जीवन और उसकी रुचि का ज्ञान होता है। आकार कल्पना शाश्वत है। जब तक मानव समाज की मार्मिक भावानुभूतियाँ रहेंगी तब तक यह भी रहेगीं, सौन्दर्य की उपासना जब तक मानव करता रहेगा और उसे जब तक जीवन में साकार बनाने का प्रयास करता रहेगा तब तक आकार कल्पना अमर रहेगी। आकार कल्पना का रूप चाहे पूर्व पश्चिम में कहीं हो, चाहे स्वर्ग पर हो, वस्त्रों पर, दीवारों पर, गहनों पर, पृथ्वी पर कहीं भी हो वहीं वह निसर्ग सौन्दर्य की अनुभूति से उत्पन्न आनन्द प्रदान करेगा। यह भी निर्विवाद है कि आकार कल्पना का प्रादुर्भाव पूर्वीय देशों में ही सर्व प्रथम हुआ, विशेषकर भारत में। सभ्य संसार में वह यहीं से गई। मध्ययुग में आकार कल्पना का जीवन व्यवस्थिति में–उसकी समस्याओं के सुलझाने में बड़ा भारी महत्व रहा है। चीन जापान में इसी आकार कल्पना ने कसीदे का अनुपम रूप लिया। विभिन्न भूखण्डों ने इस कला को अपने जीवन की समस्याओं और सुविधाओं के अनुसार अपनाया। ईरान के कालीन के आकार, काश्मीर के शालों के आकार, चीन, अजन्ता की छतों के आकार गुफाएँ सभी अपने में एक विशिष्ट भावानन्द को निहित रखती हैं।

पूर्वी देशों से ही आकार कल्पना पश्चिमी भूखण्डों की ओर गई। आज के योरोपियन आकार कल्पनाकार हमारी प्राचीन आकार कल्पना को ही नवीन रूप में उपस्थित कर रहे हैं। कमल, घट, स्तम्भ, फूल, केला आदि पवित्र वस्तुओं के आकार हमारे यहाँ बहुत प्राचीन काल से ही प्रसाधना में आते रहे जिन्हें आज पश्चिम के कलाकार अपनी मौलिक कलाकृति के रूप में उपस्थित करते दीखते हैं।

आकार कल्पना हमारे आत्म-प्रकाशन का भावमय चित्रण है। जिसमें निर्माण के तत्व हैं, जो सामान्य मानव भाव राज्य में एक से व्यापक हैं। नृत्य, संगीत, कविता, वास्तुकला, मूर्तिकला, सभी में यह एक जान सी बन गई। यह अमीर गरीब दोनों जन समुदाय को एक सा अलौकिक आनन्द देने वाली है, इसी से वातावरण में आकर्षण, मादकता, नवीनता उपस्थित होती है, इसके अभाव में जीवन शुष्क, समाज जड़ और मानव भावनाएँ सुप्त दीखती हैं। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हमें इसकी आवश्यकता है। मन्दिर, घर (गोबर के घर) विशाल भवन सभी में आकार कल्पना का सामान्य अथवा विराट रूप पाया जाता है।

मुझे इस छोटी सी पुस्तक को इस रूप में उपस्थित करने में अपने गुरुजन, प्रियजन, छात्र तथा सहधर्मिणी से जो समय २ पर अमूल्य सहायताएँ प्राप्त हुई हैं उनका यद्यपि उल्लेख करना उनके सभी के प्रेम महत्व को हल्का करना होगा परन्तु भाव इसमें मेरा मौन रहा तो भी मेरा कर्त्तव्य पूरा न समझा जायगा।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

अपनी कला साधना में मुझे जिन गुरुजनों का आशीर्वाद प्राप्त हुआ, जिनके साधक जीवन से मुझे अनन्त प्रेरणाएँ मिलीं उनका मैं हृदय से आभारी हूँ। उनमें सर्वश्री पूज्यपाद राजेश्वर घोष का प्रारम्भिक कला दीक्षण, श्री पूज्य असित कुमार हलधर, श्री पूज्य नन्दलाल वसु, श्री पूज्य अवनिसेन, आदि पूज्य जनों के कलात्मक संस्कार मेरे जीवन की निधि बने।

परमादरणीय जे० एम० अहिवासी महोदय की कला साधना से मेरे जीवन की कला साधना का प्रयोगात्मक प्रारम्भ होता है। इन भारतीय सांस्कृतिक कला के अमर साधक का दीक्षान्त प्रसाद मुझे आज भी शक्तिसम्पन्न बनाये हैं। गुरुदेव ने भूमिका लिख कर और भी उपकृत किया। अपने बहुमूल्य सुझाव दिये। प्रत्येक प्रकार से पुस्तक को उपयोगी बनवाया।

मैं अपने पूज्य अग्रज डा० रामनारायण सक्सेना, डाइरेक्टर आफ इंस्टीट्यूट आफ सोशल साइंस का जीवन ऋणी हूँ। उन्हीं की कृपा दृष्टि से आज इस योग्य बन पाया कि साधना में निर्विघ्न चल सकूँ। मेरे जीवन के कुछ क्षणों में उनकी ममता का वरदहस्त उस समय मेरे शिर पर रहता जबकि मेरी तूलिका अपनी साधना में रत रहती और वे वात्सल्य भाव से चटाई पर मेरे पास आ बैठ मेरी व्यस्त साधना देखते। इतने बड़े व्यक्तित्व के लिये उस साधना में आदर की सुविधाएँ न होती थी और मैं अपने को सौभाग्यशाली समझता हूँ जब कि वे आज भी मेरी ममता के अधिकार को मेरे लिये सुरक्षित किये हुये हैं।

मैं अपने मान्य प्रिंसिपल महोदय श्री ए. एस. सिन्हा को किन शब्दों में धन्यवाद दूँ जिन्होंने हमारी सभी प्रकार की सहायता की। उनकी कला संस्कृति विकास में रहने वाली धारणा के आधार पर हमें अपनी साधना में सदा बल, साहस और प्रेरणाएँ मिलीं।

मैं अपने आदरास्पद प्रिय बन्धु श्री पुरुषोत्तम डोभाल का हृदय से अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने आकार कल्पना की भाषा को सुसंस्कृत बनाने में मेरा पूरा हाथ बटाया। इनके बिना इतनी सुसंस्कृत भाषा होना असम्भव था।

श्री रायकृष्ण दास जी, श्री धूपेश्वर कर जी, श्री एडेकोस्टा, डा० मोती चन्द्र जी, डा० सतीश चन्द्र काला, डा० सीतावर सरन, श्री दण्डामती मठ, श्री शिवराम मूर्ति, श्री कृष्ण दत्त बाजपेयी, श्रीमती चन्द्रावती लखनपाल, प्रो० सत्यव्रत, श्री भाई अवध विहारी लाल जौहरी, श्री जानकी शरण श्रीवास्तव आदि वयोवृद्धों का भी आभारी हूँ जिन्होंने प्रस्तुत पुस्तक में मुद्रण से पूर्व अपने सुझाव और प्रोत्साहन दिये। यह प्रयास तभी इस रूप में आ पाया था जब उपर्युक्त सज्जनों का प्रोत्साहन मिला।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

मेरे प्रिय विद्यार्थी श्री कृष्ण लाल शर्मा और श्री रघुवीर पंवार ने प्रस्तुत पुस्तक को सुन्दर बनाने में मेरी पूरी सहायता की। उन्हें आशीर्वाद के अतिरिक्त और दे ही क्या सकता हूँ।

विशेषकर मेरी सहधर्मिणी आयुष्मती सरलामन मेरी कला साधना की स्फूर्ति बन सदा मुझे आगे बढ़ाने में शक्ति सम्पन्न बनाती रही है और प्रस्तुत पुस्तक की मुद्रण प्रतिलिपि एवं पुस्तक के प्रत्येक अंग को उपयोगी व सुन्दर उन्होंने ही बनाया।

मैं अपने परम पूज्यनीय ताऊजी श्रीमान् अयोध्या प्रसाद जी का किन शब्दों में आभार प्रदर्शित करूँ जिनके आशीर्वाद तथा दया दृष्टि के बिना मेरा यह कार्य पूर्ण होना असम्भव था।

अन्त में मैं उन सभी ज्ञात अज्ञात सहयोगियों का भी कृतज्ञ हूँ जिनसे थोड़ी भी सहायता इस पुस्तक में पाई हो। पुस्तक की त्रुटियाँ मेरी हैं और इसका सौन्दर्य कला प्रिय सहृदयों का है।

३-१-१९५७
रेखानिकुञ्ज, देहरादून।

रणवीर सक्सेना

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

छत की आकार कल्पना

आकार कल्पना

सौन्दर्य क्या है ?

सम्पूर्ण विश्व का विराट् रूप देखकर विचार और भावों की जो एक तीव्रता हमारे भीतर होती है उसमें एक ही केन्द्र निश्चित रहता है, और वह है सौन्दर्य। सौन्दर्य सम्पूर्ण जड़-चेतन जगत् में स्थूल से स्थूल और सूक्ष्म से सूक्ष्म रूप में विद्यमान है। इस सौन्दर्य का अनुभव सृष्टि का प्रत्येक प्राणी करता है, और सौन्दर्य की अनुभूति में उसका साथ देने वाली हैं उसकी इन्द्रियाँ हाथ, पैर, नाक, आँख, कान, जिह्वा आदि। विभिन्न इन्द्रियों की सहायता से चेतन जगत्-प्राणीमात्र-सौन्दर्य का उपभोग करता है। सौन्दर्य की अनुभूति के लिए देश-काल-परिस्थितियों में हमारी ये इन्द्रियाँ जागृत रहती हैं, और अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुसार अनुभूति पाती हैं। सम्पूर्ण विश्व का संचालन इसी सौन्दर्य की प्रेरणा से होता है। हमारे विभिन्न अङ्ग और उनकी शक्ति का स्वरूप बनने वाली इन्द्रियाँ एक मात्र सौन्दर्य का ही साक्षात्कार करने को नित्य उद्यत रहती हैं। यही सौन्दर्य विभिन्न समयों में विभिन्न स्वरूप धारण करता है; विभिन्न भावनाओं का प्रादुर्भाव भी चेतन प्राणियों में इसी से होता है। प्रेम, सत्य, आनन्द, रस, प्रकाश, हर्ष, दीप्ति नाम इसी सौन्दर्य के हैं।

अब प्रश्न उठता है कि सौन्दर्य है क्या ? इसका उत्तर संसार के विभिन्न विचारकों ने अपने-अपने माध्यम के अनुसार और अनुभव के आधार पर दिया है। सौन्दर्य वह चेतना-प्रद अस्तित्व है, जो किसी स्थूल विनाशी तत्व में ही केन्द्रित नहीं रहता अपितु नित्य प्रगतिशील, प्रभावशाली स्वरूप में कभी व्यक्त और कभी अव्यक्त रह विश्व को संचालित करता रहता है। बस सौन्दर्य के लक्षण पर यदि सूक्ष्म रूप से विचार किया जाय तो ज्ञात होता है कि वह वास्तव में चेतनाप्रद पदार्थ है; वह नित्य प्रगतिशील रहता है; देश काल परिस्थितियों में मनुष्य-समाज के साथ-साथ उसके स्वरूप में भी परिवर्तन होता है। वह चिर और अविनाशी शक्ति से नित्य प्रतिष्ठित है। सौन्दर्य कभी व्यक्त (स्थूल रूप में) रहता है कभी अव्यक्त (सूक्ष्म रूप में)। इस व्यक्त और अव्यक्त का भेद मानव शक्तियां करती हैं; अन्यथा सौन्दर्य तो नित्य अखण्ड चेतनामय रूप है। संस्कृत के महाकवि माघ ने

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

सौन्दर्य का लक्षण इसीलिए 'क्षणे-क्षणे यन्नवतामुपैति तदैव रूपं रमणीयतायाः' किया है; अर्थात्-प्रत्येक क्षण जिसमें नवीनतापूर्ण आकर्षण हो, प्रत्येक हल जो हमें विलक्षण और नूतन ही लगे वही सौन्दर्य है। एक पाश्चात्य विचारक के शब्दों में "जिसमें विलक्षणता हो उसे सौन्दर्य कहते हैं।" वस्तुतः सौन्दर्य विलक्षण ही होता है। दूसरे शब्दों में सौन्दर्य वह तत्व है जो हमें अपनी ओर आकृष्ट कर हमारे कष्ट, श्रान्ति, मलिनता, चिन्ता, क्षोभ के क्षणों में विश्रान्ति देता है; हम उसमें इतने खो जाते हैं कि हम अपना व्यक्तिगत सुःख दुःख सब भूल जाते हैं। बस सौन्दर्य ही कलाकार की प्रेरणाओं को जागृत कर उसे कला साधना में प्रवृत्त करता है।

यदि हम सूक्ष्मतया विचार करें तो सम्पूर्ण जगत सौन्दर्य से प्रादुर्भूत हुआ ज्ञात होगा। चराचर सृष्टि में प्रत्येक पदार्थ में सौन्दर्य का विलक्षण वैभव बिखरा दिखाई देता है। सृष्टि की कोई भी वस्तु ऐसी नहीं जिसमें सौन्दर्य न हो। विचित्र सृष्टि के नाना प्राणी नित्य इसी सौन्दर्य की ओर उन्मुख रहते हैं। यह सौन्दर्य उनकी रुचि, भावना और वृत्तियों के अनुसार अनन्त रूपों में सम्पूर्ण जड़ चेतन के भीतर और बाहर है। इसी को प्रत्येक प्राणी अपने-अपने प्रयत्न द्वारा पाना चाहता है। अनन्तात्मा ने जड़ चेतन पदार्थ सौन्दर्य से अनुप्राणित करके उत्पन्न किए हैं। लता, वनस्पति, सूर्य, चन्द्र, तारे, मनुष्य, पशु, पक्षी रङ्ग, सभी में विश्वात्मा का सौन्दर्य निहित है। कलाकार इसी सौन्दर्य की प्रतिष्ठा अपनी कला में करता है। वह स्थूल सौन्दर्य को सूक्ष्म और सूक्ष्म सौन्दर्य को स्थूल कर सकता है; अव्यक्त सौन्दर्य को व्यक्त और व्यक्त को अव्यक्त करता है। अव्यक्त सौन्दर्य का व्यक्तीकरण ही कला है। सूक्ष्म सौन्दर्य स्थूल रूप में कला ही ला खड़ा करती है। प्रत्येक वस्तु के दो रूप हैं, एक भावात्मक और दूसरा प्रत्यक्ष-मूर्त रूप। किसी भी वस्तु का भावात्मक रूप हमारे भीतर तब तक रहता है जब तक उस वस्तु को कोई बाहरी आकार हम नहीं दे देते। कला के जगत् में दोनों का महत्व है। कलाकार पहले किसी वस्तु को अपनी इन्द्रियों (आंख, कान, नाक, जीभ, इत्यादि) द्वारा प्रत्यक्ष करता है, फिर उस वस्तु के रूप गुण तथा उपयोग के अनुसार उसे स्थूल आकार देता है। जब तक कोई वस्तु भाव रूप में कलाकार के भीतर रहती है तब तक वह हमारे नेत्र, कान, मन अथवा हृदय का विषय नहीं बन सकती, जब कलाकार किसी वस्तु को अपने कौशल द्वारा मूर्त रूप दे देता है तब वह वस्तु हमारे समक्ष उपस्थित होती है। अमूर्त को मूर्त दे देना ही कला का कार्य है। अमूर्त वस्तु भी तभी मूर्त रूप धारण करती है जब उसमें तीव्र प्रेरणा-दायिनी शक्ति हो। कलाकार किसी भी तीव्र प्रेरणामयी वस्तु से प्रेरित होकर अपनी साधना में,

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

अपनी अनुभूति को दूसरों तक पहुंचाने के लिए प्रेरित होता है। दूसरे शब्दों में हम यों कह सकते हैं कि कला हमारे भीतर के सौन्दर्य को जो भाव-रूप में अव्यक्त रहता है, अपने द्वारा स्थूल रूप में प्रकट करा देती है।

'अभिव्यक्ति और सौन्दर्य'

सौन्दर्य जहाँ भी है उसमें अभिव्यक्ति (Expression) स्वतः आ जाती है, सौन्दर्य का आलोक इतना तीव्र होता है कि वह छिपाया नहीं जा सकता। अन्धेरे में रखा हीरा अपने आलोक से गोचर हो जाता है। वस्त्र में लिपटी कस्तूरी अपनी सुगन्धि को बाहर फेंक ही देती है। पवित्र भावों वाला हृदय अपने चेहरे पर एक पावन आकर्षण बता ही देता है। स्वर्ण की चमक, चाँदी की सफेदी, बादलों का घिरना, नदी की बाढ़, सूर्योदय इत्यादि सभी अपने-अपने भीतर छिपे सौन्दर्य को स्पष्ट कर देते हैं। विश्व के प्रत्येक पदार्थ के भीतर गुप्त या सुप्त सौन्दर्य को कलाकार ही अभिव्यक्त कर देता है। जिस-जिस भाव-स्थिति का कलाकार होगा उसी-उसी भावस्थिति की कला को वह जन्म देगा। जो कलाकार ताज महल जैसे भव्य भवन का निर्माण करेगा वह भी सौन्दर्य भावना को ही मूर्त रूप देगा। छेनी हथौड़ी से किसी भद्दे पत्थर को मानव या किसी भी रूप में परिणित करना, उसे आकर्षक रूप में हमारे समक्ष उपस्थित कर देना भी कला का सौन्दर्य विधान है। इसी प्रकार भावों की सुन्दर अनुभूति किसी यन्त्र द्वारा स्वर और लय से जहाँ होती है उसमें भी सौन्दर्य ही प्रधान होता है। सूक्तियों से सुन्दर मधुर शब्दों से भावों की अभिव्यक्ति कर उससे किसी के हृदय को आनन्दित कर देना भी कला का सौन्दर्य विधान है। इन सभी कलाओं में अमूर्त सौन्दर्य ही मूर्तिमान किया जाता है। सौन्दर्य को मूर्तिमान करना ही कला का कार्य है और यही अभिव्यक्ति कहलाती है। सरल शब्दों में हम यों कह सकते हैं कि जब कोई भी व्यक्ति किसी वस्तु के गुण से प्राप्त किए हुए आनन्द को किसी माध्यम से प्रकट करता है तो ठीक उसी प्रकार का आनन्द वह दूसरों के भीतर भी उत्पन्न कर देता है। यही अभिव्यक्ति है, और इसी आनन्द की अभिव्यक्ति को 'कला' कहा जा सकता है। यहाँ "आनन्द" और "सौन्दर्य" दोनों को हम एक दूसरे का पर्याय ले रहे हैं। सौन्दर्य जब तक किसी गतिमती प्रेरणा का रूप धारण न कर केवल अपने में ही अस्पष्ट रहता है तब तक वह सौन्दर्य है, जब वह किसी तीव्र-प्रेरणा का रूप बन किसी के मन में और आत्मा में जागृत हो उसे अपनी सत्ता, अपने आस-पास का वातावरण भुला देता है तब वही आनन्द कहलाता है। कला में दोनों समान रूप से प्रतिष्ठित रहते हैं।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

कला के नाना रूप और चित्रकला

ऊपर हम स्पष्ट कर आये हैं कि कला एक सौन्दर्य-आनन्द की अनुभूति है। वह समय, आधार, और परिस्थिति के अनुसार अनेक रूपों में हमारे समक्ष आती है। विचारकों ने उसके वास्तु, मूर्ति, संगीत, काव्य और चित्र इतने स्वरूप बताए हैं। वास्तु कला में भवन-निर्माण का कार्य आता है। इसमें किसी भीतरी भाव को ही भवन (मूर्तिमान) के रूप में उपस्थित किया जाता है। मूर्ति में भी अव्यक्त सौन्दर्य किसी मनुष्य या पशु-पक्षी का रूप लेकर प्रकट होता है। इसी प्रकार संगीत में नाद-स्वर-लय द्वारा अमूर्त (अप्रत्यक्ष) सौन्दर्य को प्रत्यक्ष किया जाता है। वास्तु और मूर्ति सौन्दर्य को हमारी आँखें ग्रहण करती हैं। बुद्धि हृदय पर उनका अपेक्षाकृत कम प्रभाव पड़ता है, पड़ता भी है तो आँख की प्रधानता उसमें पहले है। संगीत कला से हमारी श्रोत्रेन्द्रिय का सम्बन्ध है। कानों द्वारा नाद-लय-स्वर को प्राप्त कर हम हृदय में उसे पहुंचाकर आनन्द पाते हैं। काव्य कला का सम्बन्ध हमारी सभी इन्द्रियों से है परन्तु प्रधानता उसमें हृदय-बुद्धि-आत्मा की है। आत्मा में अलौकिक आनन्द की जागृति करना ही विशेष रूप से काव्य कला का कार्य है। इन सबसे यह स्पष्ट हो जाता है कि अमूर्त या गुप्त-सुप्त सौन्दर्य स्पष्ट करने की की प्रवृत्ति कला है। प्रत्येक कला में बिम्बग्रहण अथवा सूक्ष्म आनन्द को स्थूल रूप में प्रत्यक्ष कराने का प्रयास रहता है। चित्रकला में रंगों रेखाओं द्वारा यह सम्पन्न होता है। चित्रकला का एक अपना व्यापक सिद्धान्त है अमूर्त को मूर्त करना। वास्तुकार सर्व-प्रथम चित्रकला की सहायता से किसी भवन विशेष का स्वरूप निश्चित करता है। किसी भी मकान को बनाने से पूर्व उसका मानचित्र बनता है, तब वास्तुकार उसके आधार पर अपने कार्य में जुटता है। मूर्तिकार के समक्ष भी उसकी कल्पना में पहले किसी वस्तु का रूप रंग, वर्ण, रेखाएँ लम्बाई चौड़ाई आती हैं तभी वह मूर्ति का निर्माण कर सकता है। इसी प्रकार संगीतकार पहले किसी राग की स्वर लिपि का चित्रण करता है और बाद में उसे वाद्य पर घटित करता है। काव्य लेखक अक्षरों की रूप रेखा बनाने पर ही अपनी साधना में प्रवृत्त हो पाता है। तात्पर्य यह कि चित्रकला का क्षेत्र बहुत व्यापक है। सभी कलाओं में उसकी महत्ता एवं सत्ता प्रतिष्ठित है। सृष्टि के प्रारम्भ में चित्रकला ही विश्वात्मा की कल्पना में रही होगी। चित्रकला में आकार कल्पना प्रधान है।

आकार कल्पना और चित्र

चित्रकला में अमूर्त भावों को मूर्त रूप देने का नाम आकार कल्पना है। यह आकार कल्पना इतने बड़े विश्व में दो प्रकार की है। प्रकृति द्वारा बनी आकार कल्पना

तथा मनुष्य द्वारा बनी आकार कल्पना। कुछ आकार प्राकृतिक प्रेरणाओं से बने हैं, कुछ मनुष्यों द्वारा।

प्रकृति स्वयं आकार बनाती है

प्रत्येक वस्तु प्राकृतिक प्रेरणाओं से अपने भीतरी-संघर्ष को आकार देती है। अपनी सामर्थ्य और परिस्थिति के अनुसार प्रत्येक पदार्थ का आकार दूसरे पदार्थों के संघर्ष में आकर सुन्दर बन जाता है। पहाड़ों से नदियों में बहते हुए भद्दे पत्थर कितने गोल चिकने आकार के बन जाते हैं। बड़ी-बड़ी शिलाएँ लोगों के रोज बैठने से चिकनी पड़ जाती हैं। तात्पर्य यह है कि प्रकृति स्वत: आकार बनाती है और कभी-कभी मनुष्य प्राकृतिक आकारों में भी परिवर्तन कर अपनी रुचि के अनुकूल आकार बनाता है। प्रत्येक आकार में कुछ न कुछ अर्थ निहित रहता है। भूत, भविष्य, वर्तमान में घटित होने वाली घटनाएँ इन्हीं आकारों से कभी-कभी स्पष्ट हो जाती हैं।

आकार में एक निश्चित पद्धति रहती है, कोई भी वस्तु अपनी देश-काल परिस्थितियों के अनुसार एक निश्चित आकार पाती है। यदि उसका नियमित आकार है तब वह सुन्दर लगेगी और सब उसे अपनाने की इच्छा रखेंगे यदि उसमें नियमित और स्वाभाविकता नहीं रहती तो वह भद्दी और कुरूप मानी जायगी। उसमें एक निश्चित प्रबन्धात्मकता होनी आवश्यक है। यदि कोई आदमी बौना हो तो हमें बहुत से लम्बे आदमियों में वह अस्वाभाविक लगेगा। यदि कोई स्त्री पुरुषों की वेश-भूषा धारण करेगी तो हमें उसका आकार अस्वाभाविक लगेगा। तात्पर्य यह कि निश्चित स्वाभाविक स्वरूप में जब तक कोई वस्तु है वह हमें ठीक लगेगी, इसके विपरीत भद्दी लगेगी। आकार कल्पना में भी यही बात है। सम्पूर्ण सृष्टि सृष्टिकर्ता ने एक निश्चित आकार में बनाई है। हमारे अङ्गप्रत्यंग अपने-अपने स्थान पर ठीक बने हैं। इनकी उपयुक्तता तब मालूम पड़ती है जब हमें इन अङ्गों से काम लेना होता है। आंख अपने स्थान पर ठीक है, नाक अपने स्थान पर ठीक है यदि ये दोनों इन्द्रियां किसी मनुष्य के कहीं होतीं और किसी के कहीं तो उन मनुष्यों का रूप भी अस्वाभाविक होता। सृष्टि कर्ता ने प्रत्येक इन्द्रिय को जिस प्रकार शरीर की आवश्यक सुविधाओं के अनुसार रखा उसी प्रकार प्रकृति की प्रत्येक वस्तु भी प्राणी जगत की ठीक २ सुविधाओं के अनुसार है। ये सभी आकार सप्रयोजन हैं। सभी किसी न किसी प्रयोजन को सिद्ध करते हैं। सृष्टि में कोई भी आकार निष्प्रयोजन नहीं। जिस प्रकार सृष्टि में हम प्रत्येक वस्तु का आकार सप्रयोजन मानते हैं, एक निश्चित नियम

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

में मानते हैं उसी प्रकार हमारे जीवन की सभी वस्तुएँ भी सप्रयोजन एवं निश्चित नियम के भीतर हैं। हमारा मकान, वस्त्र, आभूषण, खान-पान सबमें एक निश्चित नियम और सप्रयोजनता है। सारा संसार हमारे लिए ऐसा ही है। बचपन ही से हम साकार वस्तुओं के बीच बढ़ते हैं। हमारे शरीर, मन, बुद्धि, सब देश, काल और परिस्थिति के अनुसार आकार पाते हैं।

आकार जहां निश्चित नियम और सप्रयोजन हैं वहीं वे प्राकृतिक नियमों के साथ-साथ परिवर्तित भी होते जाते हैं। परिवर्तन विश्व का एक नियम है। प्रकृति के इस विशाल प्रांगण में वस्तुओं के परिवर्तन के साथ मनुष्यों के, प्राणिओं के, भावों तथा विचारों में भी परिवर्तन होता रहता है और इसीलिए आकार-प्रकार बदलते रहते हैं। मानव समाज की राजनीति, समाज-नीति, शरीर, वस्त्र, भूषण, खान, पान, सभी देश, काल और परिस्थितियों की आवश्यकताओं के साथ बदलते रहते हैं, जलवायु के परिवर्तन से स्वास्थ्य, रूप, रंग में भी परिवर्तन होता रहता है। गरम देश का मनुष्य काला होता है, ठंडे देश के मनुष्य गोरे होते हैं। मैदानों की गौएँ बड़ी ऊँची होती हैं, पहाड़ों की छोटी-छोटी। तात्पर्य यह कि प्राकृतिक परिवर्तनों के साथ २ आकारों में परिवर्तन अनिवार्य है। चित्रकला में इसी को वर्तमान चित्रकचार्य 'डिजाइन' कहते हैं, डिजाइन का शब्दार्थ है "किसी वस्तु को रूप देना" किसी खास प्रयोजन से और किसी सुन्दरता के लिए। डिजाइन का अर्थ है रेखाओं द्वारा किसी वस्तु को आकार देना। वे रेखाएँ सुन्दर ढंग से स्वाभाविक रूप से तथा उचित रूप में हों। दूसरे शब्दों में डिजाइन वह है जिसमें रेखाएँ किसी वस्तु को स्वाभाविक रूप से तथा सुन्दर रूप से बताएँ। इस डिज़ाइन के स्थान पर हम अब 'आकार' शब्द का ही प्रयोग आगे करेंगे।

आकार दो प्रकार के होते हैं। एक निर्माणात्मक और दूसरा शृङ्गारात्मक या प्रसाधनात्मक। पहले आकार में संसार की वे सभी वस्तुएँ आ जाती हैं जिन्हें हम देखते हैं, जिनके स्वरूप का दर्शन हम अपनी आंखों से एक निश्चित नियम और उपयोग के लिए करते हैं। इसमें नियमितता तथा उपयोगिता होनी आवश्यक है। उदाहरण के लिए हम पर्वतों, नदियों, वृक्षों, पक्षियों, घास, फ़ूल, घड़ा आदि किसी भी वस्तु को ले सकते हैं। ये सभी वस्तुएँ ईश्वर द्वारा या मानव द्वारा एक निश्चित रूप में बनाई हुई हमारे सामने आती हैं। जैसा कि हमने पहले कहा है कि इनका स्वाभाविक रूप ही हम देखते हैं तो हमें भद्दापन सा लगता है तथा एक अद्भुत बात सी मालूम पड़ती है। इस पहले प्रकार

Downloaded from www.dhrauliibrary.org.in

में हम उसकी ओर केवल उपयोगिता की दृष्टि से बढ़ते हैं। वह वस्तु हमारे उपयोग में आने योग्य होनी चाहिये उपयोगिता के साथ-साथ हमें उसमें सौन्दर्य देखने की लालसा भी बनी रहती है। हमारे दैनिक जीवन के उपयोग में आने वाली सब वस्तुएँ ऐसी ही हैं। दूसरे प्रकार का आकार केवल सजावट के लिए होता है। इसमें आकार बनाने वाला केवल सौन्दर्य-निर्माण तथा सौन्दर्य दर्शन का अभिलाषी होता है। वह रेखाओं द्वारा ऐसा आकार प्रस्तुत करता है जो सुन्दर हो, सुन्दर लगे और वह आकार एक रूप में नहीं अनेक रूप में "आकार निर्माता" द्वारा प्रस्तुत होता है। एक ही वस्तु अनेक रंगों द्वारा हमारे सामने आती है। हम उस एक को भी अनेक पाते हैं। यह दूसरा प्रकार निर्माता की इच्छा पर निर्भर है। वह जैसा चाहे वैसा बनादे। उस पर किसी का बन्धन नहीं। प्राकृतिक वस्तुओं के निश्चित आकारों को जो कि पहले प्रकार के आकार में हम बता चुके हैं आकार बनाने वाला बदल सकता है। पहले प्रकार का आकार बड़ी सुगमता से बनाया जा सकता है क्योंकि वह पहले ही प्रकृति की वस्तुओं में हमें मिलता है, फूल या पत्ते, पक्षी, या झरने, पर्वत पत्थर, चन्द्र, सूर्य ये सब नित्य-आकार में रहते हैं और सदैव हमारी आँखों के समक्ष रहते हैं। इसलिए इनका चित्रण करना कठिन नहीं होता। प्रकृति की विशाल गोद में रहने वाली उन सभी वस्तुओं, जिनको हम देखते हैं, उनका आकार बनाने में चित्रकार को कठिनाई नहीं होती। दूसरे प्रकार का आकार, जो कि उसे स्वयं बनाना पड़ता है या उसकी सूझ में स्वतः उद्बुद्ध होता है, कठिन है। यह आकार कैसे सुन्दर लग सकता है, लोगों की रुचि के अनुकूल कैसे बन सकता है यहाँ यह जानना अत्यन्त आवश्यक है। प्रसाधन आकार ही विशेष कर हम यहाँ स्पष्ट करेंगे। इससे पूर्व हम आकार के विशेष अंगों पर प्रकाश डालेंगे।

आकार में चार बातें विशेष होती हैं।

सन्तुलन, आंशिकनिष्पत्ति, केन्द्रीकरण और लयात्मकता। पहले में रेखाएँ एक निश्चित सन्तुलन के अनुकूल चलती हैं, चित्र का सम्पूर्ण कलेवर एक माप दण्ड पर निर्भर होता है। उसके लिए पहले से ही इसका निर्धारण आवश्यक है। दूसरे में चित्र के प्रत्येक अंग का निर्धारण एवं उसे पूर्णता देने का उपक्रम होता है। तीसरे में चित्र में जिस विशेष भाव पर कलाकार अपना मन्तव्य रखता है वह निर्धारित किया जाता है; और चौथे में लयात्मकता आती है, विशेष ध्यान रखना पड़ता है नियमितता पर। लयात्मकता से तात्पर्य यहाँ उससे है जो विशेष भाव या केन्द्र को सुन्दर तथा स्पष्ट बनाने के लिए आती है। प्रत्येक

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

रेखा, प्रत्येक निरूपण एक निश्चित भाव की अभिव्यक्ति के लिए हो; रेखाएँ व्यर्थ न हों और न उनकी आकृति भाव निरोधक हो। प्रत्येक रेखा आवश्यकता को रखे और उसका अङ्कन किसी भाव विशेष या केन्द्र विशेष को स्पष्ट अथवा समझाने में सहायक हों। इन चारों अंगों से युक्त आकार सर्वथा सफल और आकर्षक होता है। उसी में पूर्णता रहती है।

रेखा निरूपण

रेखाएँ आकार कल्पना में विशेष उपयोगी हैं, क्योंकि इनसे चित्र का सम्पूर्ण व्यूह तैयार होता है। अनेकों रेखाएँ जब दाएँ बायें से समानान्तर रूप से अथवा आदि, मध्य, अन्त में निरूपित होती हैं, इन्हीं रेखाओं से फिर सारा चित्र निर्मित होता है। उदाहरण के लिए यदि हम एक पत्ता लें तो हम उसमें देखेंगे कि उस पत्ते के दाएँ बायें आदि मध्य अन्त, के कोणों से रेखाएँ पत्ते के सारे शरीर को सजाते में उपयुक्त होती हैं। पत्ते के सम्पूर्ण कलेवर पर हम कुछ रेखाएँ दाएँ, बायें कुछ समानान्तर कुछ आदि अन्त मध्य में खिचीं हुई देखते हैं और उन्हीं से पत्ता अपने सम्पूर्ण रूप में हमारे सामने आता है। आकार कल्पना में भी हम इसी प्रकार आकार कर्ता को रेखाओं का उपयोग करते देखते हैं। कलाकार अपनी तूलिका से अनेकों सुन्दर रेखाओं द्वारा जिनमें आकार कल्पना की उपर्युक्त चारों बातें होती हैं एक सुन्दर रूप हमारे सामने प्रस्तुत करता है। रेखा निरूपण चित्र में अत्यन्त आवश्यक सामग्री है। आकार कल्पना में तभी सौन्दर्य उपस्थित हो सकेगा यदि कलाकार की रेखा निरूपण-पद्धति निर्दोष होगी। इसी प्रकार एक एक भू-भाग का चित्र यदि आकार कर्ता प्रस्तुत करता है तो उसमें भी दूरी, समीपता, बीच का भाग, संकोच तथा विस्तार ये सभी बातें रेखाओं द्वारा ही प्रस्तुत की जा सकेंगी। लम्बाई, चौड़ाई, गहराई, ये सभी स्पष्ट रेखाओं से बताकर फिर उन सब रेखाओं द्वारा केन्द्र को भी स्पष्टीकरण मिल जाता है। आकार कल्पना में रेखा निरूपण बहुत ही आवश्यक है क्योंकि इनसे चित्रों के सभी अंशों का पारस्परिक सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है।

आकार कल्पना के कारण

प्राकृतिक आकार कल्पना में हम कह आये हैं कि पदार्थों का कारण संघर्ष है। संघर्ष हुआ और आकार बना। मनुष्यकृत आकार कल्पना के विषय में विचारकों के अनुमान से बहुत से कारण हैं। सबसे पहला कारण वे आवश्यकता बताते हैं। आदिम-प्राणी-समाज को जैसे-जैसे जिन-जिन वस्तुओं की आवश्कताएँ प्रतीत हुई उन्हीं वस्तुओं के आकार उन्होंने

Downloaded from www.dhrauliblibrary.org.in

बना दिये। आदिम मनुष्य वृक्षों के नीचे, गुफाओं में, खाईयों में फिर झोपड़ियों में, फिर पक्के मकानों में और इसके भी बाद महलों में रहते रहे। उनके निवास स्थानों के आकार आवश्यकतानुसार बदलते गये। जिस पदार्थ से जैसी आवश्यकता प्रतीत हुई उसका वैसा स्वरूप उन्होंने बनाया। दूसरा कारण उन्होंने उपयोगिता बताया है। उपयोगिता से तात्पर्य है उपयोग या लाभ। अर्थात् वस्तुओं को उन्होंने उसी रूप में घटित किया जिस रूप में उनसे लाभ पहुंच सकता था। पत्थर तथा लोहे आदि के अस्त्र, वस्त्र तथा आराम के अन्य साधन सभी विशेष-विशेष रूपों में इसी उपयोगितावाद के दृष्टिकोण से बने। आकार कल्पना का तीसरा कारण वातावरण और जलवायु है। जिस प्रदेश का जलवायु जैसा रहा वैसे ही वहाँ वस्तुओं के आकार प्रकार बन गये। वातावरण से ही हमारी वेश-भूषा, रहन-सहन के व्यवहार में आने वाली वस्तुओं के आकार बनते हैं। चमड़े के कपड़े, जूते, लम्बे कोट, छोटे कोट, ये सभी वातावरण के कारण आकार पाते हैं। बर्फ या वर्षा वाले प्रदेशों में लम्बे बूट पहने जाते हैं। ठण्डे देशों में बड़ा बन्दगले का कोट सुन्दर लगता है। गरम देशों में ढीला कपड़ा या खुला वस्त्र सुन्दर लगता है। तात्पर्य यह कि वातावरण भी हमारी वस्तुओं के आकार बनाने में सहायक होता है। चौथा कारण आकार कल्पना में जातीय संस्कृति या जीवन के संस्कार होते हैं। किसी विशेष जाति या संस्कृति या जीवन के संस्कार होते हैं। किसी विशेष जाति या संस्कृति के उपयोग की वस्तुएँ दूसरी जाति या संस्कृति से भिन्न हैं, हिन्दू टोपी और मुसलमानी टोपी दोनों के आकार भिन्न हैं। अंग्रेजी टोप उन दोनों से भिन्न है। इस प्रकार आकार कल्पना में जातीय जीवन और संस्कृति विशेष भी झलकते हैं। पाँचवाँ कारण आकार कल्पना में पदार्थ भेद भी है। कोई आकार मिट्टी पर सुन्दर बनता है, कोई लकड़ी पर खिल सकता है और कोई तांबे-पीतल पर। पदार्थ भेद से भी आकार-भेद हो जाता है। आकार कल्पना में छठा कारण व्यक्तिगत रुचि भी है। व्यक्तिगत रुचियों से वस्तुओं में भेद पैदा हो जाता है। उदाहरणार्थ एक ही कपड़ा विभिन्न रुचियों से विभिन्न शरीरों पर विभिन्न रूप धारण कर लेताहै। कहीं बन्द गले का कोट, कहीं गोल कोट, कहीं अचकन, और कहीं लम्बा कोट बन जाता है। किसी का पायजामा चौड़ा, किसी का तंग और किसी का चूड़ीदार ये सब एक ही कपड़े के अनेक रूप हैं जो कि रुचि के अनुसार पृथक्-पृथक् हो गये हैं। ये सभी जितने प्रकार के आकार हैं हमेशा परिवर्तनशील हैं। किसी भी आकार को नित्य नहीं कह सकते हैं। ये सभी आकार सजावट के लिए होते हैं। मानव समाज क्या सारा चेतन-समाज सजावट के लिये ही आकारों को जन्म देता है। अब आकार कल्पना के भेदों पर हम क्रमशः विचार उपस्थित करते हैं।

Downloaded from www.dpbraulibrary.org.in

आकार कल्पना के वैसे तो कई रूप हैं परन्तु विचारकों ने मुख्यतः उसे चार भागों में बाँटा है :—

१—प्राकृतिक आकार कल्पना ।
२—आलंकारिक आकार कल्पना ।
३—ज्यामितिक आकार कल्पना ।
४—सूक्ष्म आकार कल्पना ।

१. प्राकृतिक—

पहले प्रकार की आकार कल्पना में प्राकृतिक वस्तुओं के रूप अङ्कित किये जाते हैं। वस्तु प्रकृति में जिस रूप में दिखाई देती है, उसी को हम कपड़े कागज़ आदि पर अङ्कित कर देते हैं। प्राकृतिक आकार कल्पना में इस बात का ध्यान अवश्य रखना पड़ता है कि जो कुछ कलाकार अङ्कित करना चाहता है उसमें अभिव्यक्ति भी हो केवल अनुकरण न हो। अभिव्यक्ति से तात्पर्य यह है कि जो आकार कर्त्ता देना चाहता हो उससे भाव पूरे स्पष्ट होने चाहिए, प्रत्येक रेखा प्रत्येक उपक्रम पूरे और एक निश्चित भाव की स्पष्टता करे। प्राकृतिक वस्तु का अनुकरण तो हो परन्तु उससे भाव का स्पष्टीकरण न हो तो आकार कल्पना सफल नहीं, पूर्ण अभिव्यक्ति ही आकार का सच्चा लक्ष्य है। प्रायः प्राकृतिक वस्तुओं के आकार निर्माण के समय यह ध्यान रखा जाता है कि उसमें स्वाभाविकता भी आजाय और सौन्दर्य भी। इन दोनों में भी जिस विशेष भाव को आकार कर्त्ता अभिव्यक्ति देना चाहता है वह होनी आवश्यक है। उसी व्यक्ति के बनाये हुए आकार भले लगते हैं जिनमें स्वाभाविकता और सौन्दर्य दोनों तत्व मूल भावों के साथ प्रकट हों। इसके लिए चित्रपट अर्थात् कपड़ा, कागज भी देखना आवश्यक है। किस प्रकार के वस्त्र या कागज़ पर कौन सा चित्र अङ्कित भली-भांति हो सकता है यह विचार करके ही काम करना चाहिए। आज कल चीनी और जापानी ढंग के आकार हमारे वस्त्रों और पटों पर दीखते हैं। लोग प्राकृतिक वस्तुओं के रूप अङ्कित करते हैं जिनमें केवल अनुकरण के और कुछ प्रतीत नहीं होता। न तो सौन्दर्य ही पूर्ण रूप से उतरता है और न स्वाभाविकता ही दृष्टिगोचर होती है।

२. आलंकारिक—

इसमें किसी वस्तु के स्वाभाविक रूप को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए कुछ विशेष प्रकार का उसमें आकर्षण उत्पन्न करने के लिए कलाकार का

प्रयोग स्वतन्त्र होता है। किसी फूल पत्ती के आकार को आलंकारिक रूप में परिवर्तित करके हम आकार बनाते हैं। इस प्रकार के आकारों में भी पुनरावृत्ति केन्द्रीकरण आदि आकार कल्पना के चारों अंग काम में आते हैं। इसका क्षेत्र अन्य प्रकारों से अधिक विस्तृत होता है। प्रायः बहुत प्राचीन काल से ही इस विषय में देखा गया है कि लोग अपने व्यवहार की सभी वस्तुओं को मनमाने ढंग से सजाने में प्रयत्नशील रहे। सभी देशों के सभी व्यक्ति इन आलंकारिक आकार कल्पनाओं की ओर आकर्षित होते रहे हैं। पहले प्रकार के आकारों से ये अधिक सुन्दर प्रतीत होते हैं। इनमें स्वाभाविकता की अवहेलना नहीं होती प्रत्युतः सौन्दर्य को प्रधानता दी जाती है। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि इनका उपयोग यथेच्छ किया जा सकता है। आकार कर्त्ता जैसा चाहे वैसा रूप इन्हें दे सकता है। सौन्दर्य होना अवश्यम्भावी है उनमें प्रागैतिहासिक काल से ही गाथी, फारसी, मुगल और राजपूत कालीन आलंकारिक शैली के प्रयोग प्रायः अधिकता से देखने में आते हैं।

३. ज्यामितिक—

हमारे भारतीय प्राचीन इतिहास के सुदीर्घ जीवन के साथ-साथ सांस्कृतिक, परम्परा है। इसमें हमारे जन्म से लेकर मृत्यु तक अनेक प्रकार के शृङ्गार-प्रसाधनी जन्म, नामकरण आदि संस्कारों के समय ब्राह्मण लोग करते हैं। स्त्रियां घर की दीवारों पर अनेक चित्रकारियाँ बनाती हैं। ब्राह्मण हवन की वेदी में चक्र आदि आटे हल्दी तथा रोली से बनाते हैं। आयत (चौड़ा-गोल) वृत्त सीधी वक्र (टेढ़ी) रेखाओं द्वारा अग्निदेव की पूजा का यंत्र मिट्टी की वेदी पर बनता है। इसी प्रकार अन्य विवाहादि कार्यों में मण्डप सजाने में इस आकार कल्पना को महत्व दिया जाता है। विशेषतः यंत्रों की पूजा हमारे यहाँ जो होती है, वह यही ज्यामितिक आकार कल्पना है। चित्रकला में इस प्रकार की ज्यामितिक रेखाएँ अलंकरण में काम आती हैं। इस प्रकार के आकार आवृत्ति, सम-प्रभाव सन्तुलन आदि के सिद्धान्तों के विभिन्न व्यावहारिक प्रयोगों की निपुणता पर निर्भर रहते हैं। इन आकारों में अनेक आकार जब तक एक साथ नहीं आते तब तक ये सुन्दर प्रतीत नहीं होते। उदाहरण के लिए हम एक सिपाही का यदि आकार बनाते हैं तो उसी के साथ अनेक सिपाहियों का भी आकार निर्माण वाञ्छनीय है। जब तक उस एक सिपाही के साथ अनेक सिपाहियों की पंक्ति का निर्माण हम नहीं करते तब तक वह एक सिपाही का आकार नहीं बनाता है। इसी प्रकार फूल, पत्ते, पौधे, जब एक साथ पंक्तिबद्ध रूप में एक लयात्मक रूप में हमारे समक्ष नहीं आते तब तक ज्यामितिक आकार नहीं बन पाता।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

पक्षी, फूल, जानवर, बर्तन, गाँव इन सभी का समूह, आवृत्ति, नियमितता, सन्तुलनात्मकता चित्र बनाने से पूर्व अच्छी प्रकार से निर्धारित कर लेना चाहिए। ज्यामितिक आकार कल्पना में पंक्ति बद्धता का आना अनिवार्य है।

४. सूक्ष्म आकार कल्पना—

इसमें सभी अन्य पूर्वोक्त आकार शैलियों का सम्मिश्रण रहता है। आजकल के मकान तथा वेशभूषाएँ इसी प्रकार की होती हैं। इनमें सरलता भी होती है, सादगी भी होती है और सजावट भी। सूक्ष्म आकार कल्पना में बहुत सादगी होती है। आलंकारिकता इनमें कम होती है। पहले तीनों प्रकार के आकार इनसे स्थूल रूप से मेल नहीं खाते। ये अलग ही ढंग के होते हैं। ज्यामितिक आकार कल्पना के कुछ रूप इनमें हैं जैसे घन त्रिकोण आदि। इनमें कलात्मकता अवश्य रहती है, वह किस सिद्धान्त और सन्तुलन की है यह कहा नहीं जा सकता। इनकी सजावट, बनावट सब निराली होती है। आज के मशीन युग में इस प्रकार के आकारों का प्रयोग बहुत हो रहा है। आज के वैज्ञानिक युग का प्रभाव हमारे इन आकारों पर द्रुतगति से पड़ रहा है क्योंकि जीवन इनसे प्रभावित है। इन आकारों में ऋजुता, पुनरावृत्ति, समानान्तर, असमानान्तर, क्रम वक्रता, त्रिकोण, ये सभी गुण होने चाहिए। इन आकारों में प्रवाह तथा समता के कारण कभी-कभी इनमें पहाड़ों, पत्तों के आकारों का सूक्ष्म आभास भी होता है। आज के युग में सूक्ष्म आकार कल्पना लोग अधिक पसन्द करते हैं क्योंकि इनमें सादगी अधिक होती है। किसी भी प्रकार का भाव या रंग सम्बन्धी बोझ इन चित्रों पर नहीं लाया जाता है।

आकार कल्पना में रेखा और रंग

आकार कल्पना में हम प्रायः दो प्रकार का विभाजन देखते हैं। एक वह जो केवल रेखाओं द्वारा अभिव्यक्ति पाता है और दूसरा वह जो उसी में रंगों द्वारा अभिव्यक्ति किया जाता है। दोनों में उद्देश्य अभिव्यक्ति ही है। अभिव्यक्ति के लिए उस वस्तु पर भी हमें विचार कर लेना चाहिए जिसका आकार बनाना हो। यहाँ हम अभिव्यक्ति केन्द्र पर भी थोड़ा विचार कर लेते हैं। जिस वस्तु का हम आकार बनायेंगे वह वस्तु रूप-गुण में क्या है? उसका हमारा दैनिक जीवन में क्या उपयोग होता है? यह सब देखकर ही हम उसका रूप बनाते हैं। उस आकार को बनाते हुए हम सौन्दर्य पर ही अधिक ध्यान रखते हैं; वह वस्तु सुन्दर रूप में हमारे समक्ष आये और उसका उपयोग भी स्पष्ट हो जाय।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

चित्रकार को ये दोनों रेखाओं-रंगों द्वारा बनाने पड़ते हैं। अतः उसमें इतनी योग्यता होनी चाहिए कि वह रेखाओं के सन्तुलन से वस्तु के रूप और गुण दोनों को स्पष्ट करदे। इस अभिव्यक्ति केन्द्र के लिए कलाकार के मन और हृदय के संस्कार प्रबल होते हैं। जिस प्रकार के मनोभावों या विचारों वाला कलाकार होगा वैसा ही आकार वह बनायेगा। कलाकार की अभिव्यक्ति का केन्द्र वही वस्तु बन सकती है जो उसकी अपनी ठीक-ठीक कल्पना में आगई हो। कलाकार की इस आकार कल्पना में उसके संस्कारों-अनुभूतियों का निरूपण पाकर हम उसके विषय में निर्णय कर सकते हैं कि उसका विचार तथा भाव-धरातल क्या है। उपयोगिता से हमारा तात्पर्य प्रभाव-उच्चता है। उच्च कोटि के आकारों में हमें निस्सन्देह कलाकार के भावस्तर की उच्चता का रूप मिलता है। सांस्कृतिक, या जातीय चित्रों में प्रायः कम कलाकार ही सफल हो सकते हैं। संस्कृति, धर्म—विशेष से सम्बन्ध रखने वाले चित्रों में सूक्ष्म भाव प्रदर्शन करने में कलाकार की निपुणता ही काम कर सकती है। राम के वन गमन के समय दशरथ, कैकेयी, सीता, लक्ष्मण प्रजा आदि के स्वरूपों को स्पष्ट करते हुए कलाकार की सबसे बड़ी सफलता यही है कि इन पात्रों के स्वरूप के साथ-साथ उनके सूक्ष्म मनोभावों को भी उनके चेहरों पर या अन्य अङ्गों में अभिव्यक्ति देदे। तभी चित्र का अर्थ, वातावरण और प्रभाव स्पष्ट हो सकता है। अभिव्यक्ति केन्द्र के यथार्थ-सौन्दर्य पूर्ण रूप अङ्कित करने में ही आकार कल्पना सफल समझनी चाहिए। औरंगज़ेब के चित्र में तिलिस्मी माला, कटारी, सुनहरी जरी, हीरे तथा ऊँचे ताज को बताने से कलाकार औरंगज़ेब की कट्टर धार्मिकता, कठोर राजनीति, शक्ति और प्रभाव को स्पष्ट करेगा। अकबर के चित्र में अकबर की सफेद सुथरी मूँछें, गुलाब का फूल, सादे कपड़े और हीरों की माला इन सभी वस्तुओं के चित्रण से कलाकार अकबर का सीधा ममता सज्जनता से भरा रूप अंकित करेगा। इसी प्रकार जहांगीर की वेशभूषा बनाकर उसके आकार चित्र से कलाकार जहांगीर की विलासी, शान्ति-प्रिय प्रकृति को स्पष्ट करेगा। अभिव्यक्ति केन्द्र को भली-भांति समझ बूझकर ही तूलिका आकार निर्माण के लिए उठानी चाहिए जिससे आकार की उपयोगिता पूर्णतः झलके। कुछ आकार इसी उपयोगिता की दृष्टि में अङ्कित होते हैं।

आकार कल्पना में अभिव्यक्ति केन्द्र के लिए यह भी आवश्यक है कि बच्चे बूढ़े और तरुणों के लिए किस प्रकार के आकार सम्भव हो सकते हैं। बच्चे के आकार में चटकमटक और हल्का भाव प्रकाशन होगा। बूढ़े के आकार में सरलता आदर और श्रद्धा-भाव-बोधक रेखाएँ होंगी। इसी प्रकार तरुणों के आकार निर्माण में उल्लास, मस्ती

Downloaded from www.dharmalibrary.org

आदि के भावों से सम्बन्धित कल्पना होगी। बच्चों के माँ बाप प्रायः अपने बच्चों को सजाने के लिए फूल पत्ते और फल वाले आकारों से युक्त वस्त्र पहनाते हैं। बच्चों के शृङ्गार इस प्रकार से किए जाते हैं कि बच्चा बहुत से बच्चों में एक अलग सौन्दर्य का केन्द्र होने से सबको अपनी ओर खींच सके। चटकीले वस्त्र, चटकीली वेशभूषा बच्चों की आकार कल्पना में दिखाना आवश्यक होता हैं। फूल, पत्ते, फूलों से बच्चों की आकार कल्पना का भाव यह होता है कि बच्चे फूलों की भांति कोमल, आकर्षक, फूलों की भांति लावण्य और हर्ष के केन्द्र हैं। आकार निर्माता को इसी प्रकार रंग रेखा लगाते हुए इसका पूरा रखना ध्यान पड़ता है कि जो आकार वह बना रहा है, उसका अभिप्राय पूर्णतः स्पष्ट हो रहा है या नहीं। चीनी कपड़ों के आकारों में प्रायः बच्चों के कपड़ों में यह देखा जाता है कि वे गुड्डों, सुन्दर चिड़ियों के आकार लेकर सजाये जाते हैं। जैसे-जैसे मनुष्य बड़ा होता चला जाता है उसका स्वभाव गम्भीर और सादा होता चला जाता है। इसी के सन्तुलन में यदि हम किसी बूढ़े के आकार में देखें तो मालूम होता है कि वह सफेद कपड़े सुन्दर मानता है। सजावट से उसका सम्बन्ध नहीं। इसी प्रकार गेरुए वस्त्र वाले के भावों से उसका आकार सात्विक भावों की अभिव्यक्ति के लिए ही होगा। इन सबका मतलब यह नहीं कि इन सबको और रूप में नहीं रखा जा सकता; रखा जा सकता है, परन्तु आकार कल्पना में यदि पहली ही बात पर हम चलें तो ठीक है। आकार की उपयोगिता और स्वाभाविकता ठीक भावाभिव्यक्ति में ही है।

जिस प्रकार आकार कल्पना से कलाकार की भावानुभूति स्पष्ट होती है उसी प्रकार जिस वस्तु का आकार कलाकार ने बनाया है उसका अन्तः और वाह्य जगत् भी इसी में स्पष्ट हो जाता है। अकबर, जहाँगीर, औरंगजेब के उदाहरणों में हम यह स्पष्ट कर चुके हैं। आकार कर्त्ता को सभी आकारों को ठीक समझ बूझकर तूलिका उठानी चाहिए। बाल, वृद्ध, तरुण की अवस्था परिस्थिति और मन का आकार में स्पष्टीकरण करके ही आकार कल्पना सफल मानी जा सकती है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

रंगों का महत्व

अब रंग के विषय में भी समझ लेना आवश्यक है। रंगों का रेखाओं के साथ गहरा सम्बन्ध है। जिस भाव विशेष को रेखाएँ स्पष्ट करती हैं, उसी में कुछ विशेष आकर्षण उत्पन्न करने के लिए आकार कल्पना में रंगों का उपयोग होता है। रंग कभी सन्तुलन और कभी किसी भाव विशेष की वृद्धि के लिए आते हैं। ये भी बच्चे, बूढ़े और तरुण की प्रकृति भेद से प्रयुक्त होते हैं। बच्चों के लिए प्रयुक्त होने वाले रंग चटकीले तथा हल्के भावस्तर के होते हैं। उनमें गम्भीर भावों की अभिव्यक्ति का प्रयास नहीं होता। युवावस्था के लोगों के योग्य प्रयुक्त होने वाले रंग प्रबल आकर्षण युक्त होते हैं। आस-पास के लोगों की दृष्टि का केन्द्र बनजाने की आकांक्षा प्रायः युवकों में होती है इसीलिए उनकी वेश-भूषा में भी इसी मनोविज्ञान की झलक होती है। आकार कल्पना में तरुण के स्वरूप का निर्माण ऐसे ही रंगों से किया जायगा जो दर्शकों को बलात् खींच लें। युवाओं के प्रेम, उल्लास, स्फूर्ति, मादकता, साहस, ओज, तेजस्विता आदि भावों की अभिव्यक्ति में ऐसे ही अनुकूल रंगों का प्रयोग आकारकर्ता को करना पड़ेगा। सारांश यह कि तरुणों की आकार निर्माण योजना में तथा पिता के आकार निर्माण में पावनता और सरलता बोधक रंगों का प्रयोग होगा। जब तक रंगों का समुचित प्रयोग नहीं होगा तब तक आकार कल्पना अपूर्ण और प्रभाव शून्य होगी। रंगों द्वारा परिस्थितियों, सूक्ष्मप्रवृत्तियों और विचारों को स्वतः स्पष्टता मिल जाती है। हमारे यहाँ तीन प्रकार के रंग प्रधान हैं, पीला, लाल और नीला, इन तीनों रंगों को मूल रंग कहा जाता है। प्रकृति में ये तीनों रंग प्रधानतः पाये जाते हैं और इन्हीं के साथ पारस्परिक सम्मिश्रण से तीन रंग और बन जाते हैं जैसा कि नीचे अङ्कित रंग-चक्र से स्पष्ट हो जायगा।

ऊपर रंग चक्र में नीले और पीले को समान मात्रा में मिलाने से हरा रंग बन जाता है; दूसरे लाल और पीला मिलाने से नारंगी रंग बन जाता है लाल और नीला मिल जाने से बैंगनी रंग बन जाता है। तीन प्रधान रंगों को ऊपर हम मूल रंग कह चुके हैं। दूसरे रंग जो परस्पर के संयोग से बने हैं मिश्रित या गौण रंग कहलाते हैं। इन छः रंगों के अतिरिक्त भी अनेक अन्य रंगों का निर्माण कलाकार कर लेते हैं। वे सभी पचासों प्रकार के रंग इन्हीं छः रङ्गों के अन्तर्गत हैं। केवल बुद्धि तथा रुचि का चमत्कार

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

इनके अनेक रूपों का कारण है। उदाहरणार्थ आटा, आलू और घी-नमक का प्रयोग साधारण गृहिणियाँ सीधे सादे भोजन के रूप में प्रस्तुत: कर देती हैं। परन्तु आधुनिक युग की वैज्ञानिक शिक्षा सम्पन्न महिला उसी आटे घी और आलू नमक से कई प्रकार के भोजन प्रस्तुत कर सकती हैं। इसी प्रकार वर्ण योजना (कलर स्कीम) में कलाकार अपने भावों की अभिव्यक्ति रुचि और प्रयोजन के अनुसार वर्णों (रङ्गों) द्वारा करेगा।

रङ्ग का प्रयोग करने के पाँच प्रकार हैं :—

१—समन्वयात्मक वर्ण योजना (Colour Scheme of Harmony)

इसमें कलाकार अपनी रुचि अथवा प्रयोजन के अनुसार किसी विशेष रङ्ग को छाँट कर आकार कल्पना में प्रयोग करता है। समन्वयात्मक वर्ण-योजना का तात्पर्य है एक विशेष रङ्ग का आकार कल्पना में प्रयोग करते हुए उसके समानान्तर या मिलते जुलते रङ्ग का भी प्रयोग होना आवश्यक होगा। जैसे लाल रङ्ग का उपयोग करते हुए उसके मित्र रङ्ग बैंगनी और नारङ्गी का भी प्रयोग करना आवश्यक है क्योंकि इन दोनों रङ्गों में लाल रङ्ग अवश्य रहता है। जहाँ लाल होगा वहीं नारङ्गी और बैंगनी अवश्य होने चाहिए तब आकार कल्पना सुन्दर होगी।

अब तक हमें मालूम हुआ है कि रङ्गों में से मित्र रङ्गों को लेकर समन्वयात्मिका शैली की आकार कल्पना होती है, परन्तु कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि बहुत से रङ्गों को विविध रूप में लेकर भी हम एक विशेष रङ्ग का पुट देकर उनमें समन्वय उपस्थित कर सकते हैं। वे विशेष रङ्ग दो ही हैं, काला और सफेद। ये अलग अलग प्रकार से प्रयुक्त होकर समन्वयात्मक शैली की रङ्ग योजना को बना सकते हैं। समन्वयात्मक शैली दो प्रकार की है—हल्की और भारी। हल्की में सफेद रङ्ग मिलाकर रङ्ग योजना होती है दूसरी में काला रङ्ग मिलाकर जो भी रङ्ग हम प्रयोग में लायेंगे उनके लिए काले और सफेद में से एक को समन्वय लाने के लिए हम प्रयुक्त कर सकते हैं। अच्छा होगा कि रङ्ग योजना करते समय हम इस रङ्ग चक्र को ध्यान में रखें या इन्द्र धनुष को ध्यान में रखें।

२—प्रतियोगितात्मक वर्ण-योजना (Colour Scheme of Contrast)

इसके अनुसार विपरीत रङ्गों का प्रयोग होता है। उदाहरणार्थ जहाँ लाल रङ्ग होगा वहां हरा रङ्ग, जो कि रङ्ग चक्र में ठीक उसके सामने है, लगाया जायगा। या

Downloaded from www.ubaulibrary.org.in

पीले रंग के साथ बैंगनी रङ्ग लगेगा। इस प्रतियोगितात्मक वर्ण योजना का प्रयोग भी कलाकार अपनी रुचि और बुद्धि के अनुसार ही करते हैं। प्रतियोगितात्मक वर्ण योजना सौन्दर्य का स्पष्टीकरण अच्छा करती है। जब तक विरोधी रङ्ग परस्पर प्रयुक्त नहीं दिखाये जाते तब तक आकार कल्पना में सौन्दर्य ग्रहण नहीं हो सकता।

३—प्रतियोगिता समन्वय रङ्ग योजना—

कभी समन्वयात्मक तथा प्रतियोगितात्मक दोनों योजनाओं का प्रयोग कलाकार एक साथ भी कर लेते हैं। दोनों में से कुछ थोड़ा अंश किसी एक का बढ़ा देते हैं। इसी को समन्वय तथा प्रतियोगितात्मक रङ्ग योजना अथवा प्रतियोगिता-समन्वय-रंग योजना भी कह सकते हैं। यह तीसरा प्रकार और चौथा प्रकार सौन्दर्य वृद्धि के लिए ही आता है। जैसे—किसी बड़े लम्बे लड़के की ऊँचाई को स्पष्ट करने के लिये उसके पास छोटे-छोटे लड़के अवश्य दिखाये जायेंगे। अथवा किसी को अत्यन्त सुन्दर बताने के लिए उसके पास कुरूप मनुष्य अवश्य ही बनाने पड़ेंगे। इसी प्रकार जो भी रंग योजना कलाकार प्रदर्शित करना चाहेगा तथा उसका साधारणीकरण दर्शकों में करना चाहेगा तो उसे ये शैलियाँ दिखानी होंगी।

पाँचवीं प्रकार की रङ्ग योजना सफेद या काले रङ्ग से थोड़ा बहुत परिवर्तन करने से सर्वानुपाती रङ्ग शैली कहलाती है। इसमें एक रङ्ग मुख्य रहता है और अन्य रंग हल्के रूप में सहायक बनाकर आकार कल्पना प्रस्तुत की जाती है। सफेद और काला इसमें परिवर्तन के मूल हैं। इसी को अंग्रेजी में मोनोक्रोम (monochrome) भी कह सकते हैं। हम रङ्ग मनोविज्ञान के विषय में पर्याप्त रूप से बता चुके हैं और इस निश्चय पर पहुंच चुके हैं कि प्राचीन इन्द्र धनुषी रङ्ग योजना अथवा नवीन रंग योजनाएँ जो ऊपर हम बता चुके हैं एतदर्थ प्रयुक्त की जा सकती हैं तथा सुन्दर आकार कल्पना प्रस्तुत की जा सकती हैं। इन सबका उपयोग यदि अपने उपयोग की वस्तुओं के शृंगार में करें तो वे सुन्दर प्रतीत होंगी; कपड़ों जैसे, साड़ी की किनारियाँ, लिहाफ, पहनने के कपड़े (बच्चों तथा तरुणों के) इत्यादि आते हैं। घर की दीवारें, छत फर्श आदि को सजाने के लिए और कालीन, दरी, मेजपोश इत्यादि के आकारों को सजाने में रंगों का उपयोग ऐसा करें जिससे वे आकर्षक तथा स्वाभाविक लगें। हमारे यहाँ रंग सिद्धान्त बहुत ऊँचे थे। चीन, फारस, यूनान आदि देशों में रंगों के सिद्धान्तों के विषय में उन लोगों को कुछ ज्ञान न था, वे केवल प्राकृतिक दृश्यों को देखकर रंग योजना को समझते थे। सूर्योदय के समय

Downloaded from www.dbpedialibrary.org.in

क्षितिज पर खेलने वाले अनेकों रंगों को देखकर उन लोगों ने अपनी कला में रंग योजना रखी। उदाहरणार्थ सूर्योदय के समय पूर्वाकाश में पहले लाल, उसके बाद गुलाबी, फिर नारंगी, उसके बाद पीला, उसके बाद हरा और उसके भी बाद नीला रंग देखने में आता है। रंग योजना में यही सिद्धान्त उन लोगों को मान्य रहा होगा। हमारे रंग योजना सीखने वाले विद्यार्थियों को इन्द्र धनुषी रंग योजना के नियम याद न रहें तो भी वे सूर्योदय और सूर्यास्त के समय को देखकर रंग योजना का ढंग समझ सकते हैं। प्रकृति से कलाकार बहुत कुछ सीखता है। पदार्थ, रंग, वेशभूषा इत्यादि सभी बातें प्रकृति की गोद में अनेक आकारों में दीखती हैं। लता, वृक्ष, जीव, जन्तु, पक्षी सभी अनेक आकारों में हमारे सामने आते हैं। इन सबके अनेक आकारों को देखकर कला का विद्यार्थी अपने लिए कला साधना की सामग्री ले सकता है। विद्यार्थियों को प्रकृति की सभी वस्तुएँ ध्यान से देखनी चाहिए। उन पदार्थों के भीतर क्या-क्या विशेषताएँ हैं जो आकार कल्पना, कल्पना का सौन्दर्य, दिखाने में सहायक हो सकती हैं। उदाहरणार्थ गुलाब के फूल, पत्ते, पंखुड़ियाँ, केसर कांटे, टहनी इन सबको भली-भांति समझ कर आकार देने वाला विद्यार्थी गुलाब का आकार सुन्दर स्वाभाविक रूप में प्रस्तुत कर सकेगा। सारांश यह कि प्रकृति के पदार्थों का सूक्ष्म निरीक्षण करने वाला सफल आकार कर्त्ता होगा। अब हम इतना कुछ कहने के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुंच गये हैं कि आकार कल्पना या डिज़ाइन में यह सभी कुछ कहाँ तक अपेक्षित है। अब हम आकार कल्पना के छोटे-मोटे सभी रूपों का विश्लेषण करते हैं और उनमें प्रयुक्त होने वाली सभी विशेषताओं को बताते हैं।

१. किनारी डिज़ाइन

ये कई प्रकार के होते हैं, कुछ तोड़ मोड़ वाले होते हैं, कुछ साधारण, और कुछ मिश्रित, जिनमें कई प्रकार के गोल चौकोर आकार परस्पर संयुक्त होते हैं। कुछ ऐसे होते हैं जिनमें फूल पत्ती, चिड़ियाँ, जानवर एवं प्राकृतिक दृश्यों का चित्रण होता है। कुछ बेलों के भी होते हैं, जैसे, अंगूर की बेल एवं अन्य ऊर्ध्वगामी बेलें। ये सभी उपर्युक्त वस्तुएँ साधारण हैं, परन्तु जब विद्यार्थी इनके अभ्यस्त हो जाते हैं तभी वे आगे की आकार कल्पना बना सकते हैं। इन सब वस्तुओं में से हम कब और किस वस्तु को लेकर किस आकार और किनारी के लिए कौनसी वस्तु का रूप छाँटें और उसे किस प्रकार नियमबद्ध करें यह कला के विद्यार्थी को स्वयं छाँटना चाहिए। इस सम्बन्ध में हम पर्याप्त चर्चा कर चुके हैं। इस प्रकार के आकारों में इस बात का ध्यान भी अवश्य रखना होगा कि किस प्रयोजन के लिए कौन सा रंग और रेखाएँ उपयुक्त होंगी। स्वाभाविकता और आकर्षण

Downloaded from www.dhrutiban.org.in

आकार या डिज़ाइन में तभी आयगा जब उसमें रंग और रेखाएँ उचित रूप में प्रयुक्त होंगी।

किनारी-आकार के लिए विद्यार्थी को धीरे-धीरे यह सीखना चाहिए; पहले सीधी रेखाएँ फिर उसके बीच में गोल, फिर कुछ टेढ़ी मेढ़ी रेखाएँ, फिर उन्हीं में फूल पत्ती। इस प्रकार धीरे-धीरे किनारी-आकार-कल्पना सुन्दरता से सीखी जा सकती है। कभी-कभी विद्यार्थी किसी बनी हुई वस्तु को देखकर घबरा जाते हैं और तुरन्त बहुत बड़े किनारी आकार बनाने के लिए आतुर हो उठते हैं परन्तु ऐसी स्थिति में धैर्य और धीरे-धीरे सोच समझ कर आगे बढ़ना ठीक होता है। जिस प्रकार प्रकृति का नियम है कि मीठा ही मीठा खाना अच्छा नहीं लगता मीठे के बाद नमकीन खाना अच्छा लगता है और नमकीन के बाद मीठा, इसी प्रकार किनारी आकार में बिल्कुल सीधी रेखाएँ लगातार ठीक नहीं लगतीं और लगातार गोल रेखाएँ भी ठीक नहीं लगती हैं। सीधी और गोल रेखाओं के पारस्परिक सन्तुलन से किनारी आकार सुन्दर बनता है। अजन्ता की आकार कल्पना में ऐसा ही आकार दिखाई देता है। रंगों के विषय में भी यही नियम है, वस्तु के आकार का ध्यान रखकर उसमें रंग देना होगा, जिस वस्तु के लिए भी हम किनारी का आकार बनायें उसी को ध्यान में रखकर सुन्दरता, उपयोग एवं आकर्षण उसमें भरेंगे। किनारी बनाने में विद्यार्थी जो ग़लती प्रायः कर जाते हैं वह है सातत्य (Continuity) का ठीक तरह से न बनना। दूसरी ग़लती कोने की हो जाती है। जब कभी किनारी बनाते-बनाते कोना बनाया जाता है तब उसमें भी त्रुटि आ जाती है। कोना हमेशा समानान्तर होना चाहिए जो कि दो बराबर एक जैसे भागों में बँट जाय। जैसा कि संलग्न चित्रों से स्पष्ट होगा। किनारी कई प्रकार की होती हैं उनमें से कौनसी किनारी किस प्रकार बनानी चाहिए यह एक प्रश्न है। साड़ी, शाल, दुसूती, कालीन, दरी, पलंग पोश, आदि पर कई ढंग से किनारियाँ बनती हैं। शाल-दुशालों में स्त्रियों के तथा पुरुषों के शाल आते हैं; पुरुषों के शालों में किनारी इत्यादि की आवश्यकता नहीं होती। स्त्रियों के शालों में प्रायः एक तो किनारों पर पतला बॉर्डर होता है, और उसके दोनों तरफ़ पल्लों पर खूब चौड़ा बॉर्डर होता है, अधिकतर ये आकार फूल पत्तियों के प्रसाधनात्मक (Decorative forms) तथा पारम्परिक आकारों (conventional forms) के होते हैं। काश्मीर के शालों के आकार इसके सुन्दर उदाहरण हैं। कभी-कभी बीच-बीच में उसी वस्तु का छोटा रूप बना दुहरा कर दिया जाता है। वैसे तो रंग योजना में कलाकार अपनी इच्छानुसार जो भी रंग चाहे भर सकता है परन्तु जिस रंग का शाल है उसी के

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

सर्वानुपाति रंग (Harmonious colour) लगाने ठीक होते हैं, जाड़े के कपड़े अधिकतर हल्के गहरे रंग के ही अच्छे होते हैं, चाहे वह हल्का कत्थई रंग हो चाहे काला हो अथवा और किसी प्रकार का रंग हो।

क़ालीन के आकार सबसे अच्छे फ़ारस और यूनान के प्राचीन काल से ही अधिक प्रसिद्ध चले आ रहे हैं। फ़ारसी क़ालीन सर्व-प्रिय हैं। सभी के मुँह से उनका नाम सुन लीजिए। इनमें अधिकतर फूल पत्ती जानवर के आकार पाये जाते हैं। ये प्राकृतिक रूप में नहीं होते अपितु कलाकार इनको अपना काल्पनिक रूप दे देता है। समय के अनुसार क़ालीन-आकार भी अब अधिक बदलते जा रहे हैं। दृश्यों का अङ्कन भी अब शेर, चीता, ऊँट आदि के आकारों को लेकर हो रहा है। उनकी चेष्टाओं से बनी आकृतियां आकारों में अङ्कित हो रही हैं। इनमें रङ्ग योजना अधिकतर चटक होती है, और उसमें भी परस्पर सर्वानुपातिता (Harmonious Scheme) होती है। इसी कारण सफेद चांदनी में गहरे रङ्ग का कालीन उसमें अधिक चमत्कृति (Dignifying position) लाने के लिए बिछाया जाता है।

दरी की किनारियाँ अधिकतर ज्यामितिक आलेखों पर निर्धारित होती हैं। इनमें कलाकार को अपनी कल्पना के लिए अधिक क्षेत्र नहीं मिलता क्योंकि जितनी ऐसी वस्तुएँ हैं जिनमें आकारों का उपयोग दूसरे लोग करते हैं तो उनकी कठिनाईयों का ध्यान रखना आवश्यक है। जुलाहे उस आकार को ताने बाने से बुन सकेंगे या नहीं? और उसमें कितना व्यय, श्रम पड़ेगा रङ्ग योजना में इनका ध्यान रखना कलाकार के लिए वाञ्छनीय है। उन रङ्गों के तागे मिलते भी हैं या नहीं, वे रङ्ग पक्के भी हैं या नहीं। रङ्ग के बक्से से तो कलाकार अनेक रङ्ग बना सकता है परन्तु तागों से विलक्षण रङ्ग नहीं बन सकते। यदि बन भी सकें तो उस पर खर्च और समय अधिक लगता है, और प्रत्येक तागा उसमें काम भी नहीं आ सकता।

भीतरी सजावट (Interior Decorations)—इनका क्षेत्र बहुत बड़ा है। प्राचीन भवनों में भी यह अनेक प्रकार की (Interior Decorations) मिलती हैं। दीवार पर मिट्टी उभार कर बनाए हुए आलेख तथा मूर्तियाँ भी प्राचीन समय की Interior Decoration में ही पाई जाती हैं। इसमें व्यय अधिक होता है। इसलिए आजकल इस प्रकार की सजावट कम मिलती है। आजकल भित्ति चित्र इत्यादि का बनाना एवं उनसे भवन सजाना सरल नहीं। राष्ट्रपति भवन में फारसी कलाकार उसके Interior Decoration

के लिए बुलाए गये थे। राष्ट्रपति भवन के भित्ति चित्र आज इस प्रकार की कला के स्पृहणीय उदाहरण हैं।

आज के बड़े धनी मानी लोग इस प्रकार के प्रसाधनों को अब कपड़े और कागज आदि पर अपने भवनों को सुसज्जित करते हैं। जिनमें **Decorated Wall papers** (डेकोरेटिड वाल पेपर्स), **Curtain Designs** (कर्टेन डिज़ाइन) आदि मुख्य हैं। अब हम **Curtain Designs** और **Wall paper Design** (वाल पेपर डिज़ाइन) पर प्रकाश डालेंगे।

२. कर्टेन और वाल-पेपर डिजाइन

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

व्यावसायिक Interior Decoration करने वाले मानव आकार अकेले अथवा पंक्तिबद्ध रूप में करना उचित समझते हैं। छत को सजाने में फूलों के बारीक आकार लगाना उचित समझते हैं। वे जयपुर और अजन्ता आदि तथा विदेशी शैलियों में भी हो सकते हैं। इटालियन शैलियों में काम करने वाले बड़े-बड़े प्राकृतिक दृश्य-चित्रों में लम्बे-लम्बे पेड़, बड़ी-बड़ी झाड़ियाँ, निर्झर, सरोवर, मोर आदि चिड़ियों का चित्रण करके Interior Decoration का सीमा-विस्तार बताते हैं। बागों के अन्दर प्रसाधित (Conventional clouds) बादल, वृक्षों, मन्दिरों की पंक्तियां, नृत्यरता-आकृतियाँ, सफेद वस्त्रों से सज्जित शङ्ख अथवा फूलों से विभूषित चौकियाँ, इस प्रकार के विषय आजकल लिए जाते हैं। इसमें गोपियों के साथ की रास लीला, मेघदूतादि आलंकारिक विषय, पौराणिक आख्यान, प्रेम कथाएँ आदि का अङ्कन आता है। देहली के बिड़ला मन्दिर में इस प्रकार के प्रसाधन व्यक्त करने की चेष्टाएँ हैं।

अब इस प्रकार के प्रसाधनों में रङ्ग योजना किस प्रकार की होगी? यद्यपि इस रङ्ग योजना पर पहले भी साधारण रूप से प्रकाश डाल चुके हैं, आगे Interior Decoration में तत्सम्बन्धी कुछ विशेष सुझाव स्पष्ट करेंगे।

यद्यपि सिद्धान्तों की दृष्टि से पूर्व पश्चिम के आचार्यों के प्रमाण बहुत हैं फिर भी मानव प्रवृत्तियों के परिवर्तनशील होने के कारण सिद्धान्तों का निश्चित रूप नहीं कहा जा सकता। Interior Decoration के सिद्धान्त भी समय और परिस्थितियों के साथ बदलते रहते हैं। हम यहाँ कुछ विशेष तथ्यों पर स्थिर विचार प्रकट करेंगे। Interior

Decoration के रङ्ग हल्के और रोचक होने आवश्यक हैं। उनमें चमत्कृति होनी आवश्यक नहीं। उसका चकाचौंधपन मानव मनोजगत् को शान्ति और स्वास्थ्य देने की क्षमता नहीं रखता अपितु कुछ भारीपन अथवा थकावट सी देता है। वास्तव में Interior Decoration का प्रयोग बाहर से थककर आए हुए मानव मन को शान्ति देने के लिए होना आवश्यक है। उसे देखते ही मनुष्य कुछ विलक्षण शान्ति का अनुभव करें। दूसरी बात इसमें यह भी होनी चाहिए कि जिस भीतरी भाग में यह प्रसाधन हो वहाँ की प्रधान वस्तु पर इसका दबाव न पड़े। यह उसको प्रभावशाली बनाने में सहायक हो। किसी मन्दिर में सबसे बड़ी वस्तु मूर्ति होती है। उस मूर्ति को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए ही इस Interior Decoration की आवश्यकता पड़ेगी न कि मूर्ति को निस्तेज दिखाने के लिए। दर्शनार्थी का केन्द्र मूर्ति है यदि मूर्ति के स्थान पर किसी और रूप को कलाकार वहाँ अङ्कित कर दे तो मूर्ति का आकर्षण निस्तेज हो जायगा जो नहीं होना चाहिए। इस Interior Decoration में किसी वस्तु को अधिक प्रभावशाली एवं स्पष्ट कर देने की क्षमता होनी आवश्यक है।

अब Interior Decoration की आकार कल्पना में आने वाली कठिनाइयों पर भी थोड़ा प्रकाश डालते हैं। सबसे पहली कठिनाई आकार स्वाभाविकता लाने में है, छोटी चीज़ें बड़े आकार में कैसे स्वाभाविक दीखेंगी यह सबसे पहले सोचना पड़ेगा। दूसरी कठिनाई रङ्ग योजना की स्वाभाविकता है। छोटे बड़े आकारों की रङ्ग योजना में बड़ा अन्तर हो जाता है। कभी बड़े आकार बना देने में हो सकता है कि वे अच्छे न लगें। छोटी आकार कल्पना को समीप से देख सकते हैं परन्तु बड़ी चीजों को दूर से देखना पड़ता है। इसलिए दूरी और समीपता का भी विचार करना आवश्यक है। Interior Decoration प्रसाधन प्रवृत्तियों पर निर्भर है। समय के साथ-साथ यह भी परिवर्तित होती है। प्रागैतिहासिक काल में शस्त्रों, जंगली जीवों के आकार इस भांति के मिलते हैं। इसके बाद Graphic Arts में खुदाई, मूर्ति, चित्रकारी इत्यादि आई और आधुनिक युग में भाव चित्रण और प्राकृतिक दृश्य चित्रण भी लिये जाते हैं। हमारा प्रयोग केवल आकार कल्पना ही है। समय और परिस्थितियाँ उसे विभिन्न रूप दे देती हैं।

जैसा कि हम ऊपर बता चुके हैं, प्राचीन काल में भिन्न प्रकार के और अनेक शैलियों में अन्तर्गृह प्रसाधन आलेख्य प्रयुक्त होते थे। परन्तु आज यह अधिक महंगा पड़ने के कारण प्रयोग में नहीं आते और सजावट के लिए Wall papers एवं भांति-भांति के

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

Curtain Design से अन्तर्गृहों को सजाया जाता है। इस प्रकार की आकार कल्पना में साधारण ज्यामितिक आलेख्य, फूल पत्ती, उड़ती चिड़ियाँ, शङ्ख, दौड़ते जानवर, बादल आदि विशेष रूप से होते हैं। इनके अतिरिक्त अन्य जो भी उपयोगी वस्तु किसी कलाकार की समझ में आए बनाई जा सकती हैं। रङ्ग लगाते समय भी इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि वे चटक न हो जांय। रङ्ग योजना के लिए यहाँ सर्वानुपाती रङ्ग शैली (Neutral tints) को भी काम में ला सकते हैं तथा जिस रङ्ग से कमरा पुता हुआ हो उसी रङ्ग को लेकर उसके विषम वर्ण आकार (Monochrome tints) बनाते चले जांय इससे भित्ति आकार सौन्दर्य स्वाभाविक और रुचिकर हो जायगा। यदि हम केवल चटक रङ्ग ही लगायेंगे तो वही दर्शक की आँखों में आयगा और जो मुख्य वस्तु (सौन्दर्य) है वह दर्शक को न दीखेगी। चटक रङ्ग लगाकर दर्शक को अपनी ओर खींचना ही आकार कल्पना का उद्देश्य नहीं अपितु प्रधान रूप से उस स्थान या वातावरण की जिसे हम सजाते हैं सौन्द्रर्य पूर्ण अनुभूति कराना है। इस अनुभूति से हमें एक विशेष भाव का स्पष्टीकरण भी मिलेगा। Interior Decoration आज तक होटल, चित्रपट गृह, (Cinema halls) कला भवन आदि के प्रसाधन के लिए प्रयुक्त होता है। इन स्थानों में पैसे की कमी के कारण भान्ति-भान्ति के कागज का उपयोग होने लगा है। आवरण-पट आकार कल्पना (Curtain Designs) में यह लिखना कि इस प्रकार की आकार कल्पना में कुछ प्रमुख वस्तुएँ ही ली जा सकती है कलाकार को बांधना होगा। वह अपनी स्वतन्त्र अभिव्यक्ति को न दिखा पायगा। वास्तव में आवरण-पट आकारों में किसी भी वस्तु का अङ्कन किया जा सकता है पर उसमें सातत्य (Continuity) होनी चाहिए। आधुनिक आवरण आकारों में नीचे केवल मोटा किनारा देकर भी समाप्त कर देते हैं। नाचती हुई आकृतियाँ, जुड़ी हुई लताएँ, उड़ती तितलियाँ, पक्षी एवं दौड़ते जानवरों का अङ्कन भी इसमें अनुचित न होगा। रङ्ग योजना में भी पर्दे लगाने वाले की इच्छा प्रधान है। जैसा चाहे वैसा रंग लगा सकते हैं। इसमें भी रङ्गों का उपयोग अधिक चटक नहीं होना चाहिए और कक्ष के रङ्ग के अनुसार होने पर ही सुन्दर दीखेगी। वैसे तो चटक रङ्ग के पर्दे भी प्रयोग में लाए जाते हैं और वे केवल इसीलिए कि वे देर से मैले होते हैं। हमारा ध्येय यहाँ पर प्रत्येक वस्तु को कलात्मक रूप से लेने का है और इसी कारण हम इन पर्दों में सर्वानुपाती रङ्ग योजना का प्रयोग करेंगे तथा Monochrome एवं Neutral tints की रङ्ग योजना भी उसी रङ्ग की बनायेंगे जो रङ्ग उस भवन में अधिक प्रधान हो।

छत एवं फर्श की आकार कल्पना भी इसी अन्तर्गृह-प्रसाधन-आकार-कल्पना में आती

Downloaded from www.dhrauvlibrary.org.in

है। यहाँ हम क्रमश: दोनों पर प्रकाश डालेंगे। छत के आकार निर्माण में प्राचीन काल में बड़ी पच्चीकारी (सूक्ष्म) का काम किया जाता था। इसमें भांति-भांति के फूल पत्तियों के रूप अङ्कित होते थे। इनके साथ अनेक छोटे-छोटे जीवों के आकार यानि चिड़ियाँ और जानवरों के रूप अङ्कित होते थे। लोक प्रतीकात्मक आकारों का भी इनमें प्रयोग होता था। अनेक भावात्मक आकार (Abstract forms) का भी अङ्कन किया जाता था। बीच में एक गोला और चारों ओर कोने बनाना भी अभिव्यक्ति की एक शैली रही है। कभी-कभी पूरी छत को एक ही तरह से भी अङ्कित कर देते हैं परन्तु यह आकार कल्पना आँखों को अधिक रुचिकर नहीं प्रतीत होती। इसमें भी हल्के रंगों का उपयोग होना चाहिए। ऐसे रंग हों जो शान्ति एवं स्वास्थ्यप्रद हों।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

फर्श की आकार कल्पना में हमें, इससे पूर्व कि हम उसके आकार पर विचार करें, यह जान लेना आवश्यक होगा कि फर्श चौकोर पत्थर या चतुष्कोणात्मक वस्तुओं से बनाये जाते हैं। वे आकार उन चतुष्कोणामक पदार्थों पर ऐसे बने होने चाहिए कि उनकी अजस्रता (Continuity) अटूट हो। एक चतुष्कोण के बाद दूसरा चतुष्कोण पत्थर रखने पर ऐसा प्रतीत हो जैसे वह किसी भी आलेख को जोड़ता चला जा रहा हो, इस प्रकार के आकारों को हम Interlinking patterns कहते हैं जिसका अर्थ है परस्पर जुड़े हुए। एक चतुष्कोण पर जो भी आकार होगा वह इस प्रकार का बना हो जो दूसरे चतुष्कोण के पास रखने पर वही आकार आवृत्ति पाये। इन पत्थरों के रखने की युक्ति कला के विद्यार्थी को पहले ही अपने भीतर कल्पना द्वारा बैठा लेनी चाहिए तदनुसार अपने कार्य में रत होना चाहिए। आजकल पत्थरों की अपेक्षा अनेक प्रकार के रंगो के सीमेन्ट का प्रयोग होता है और उन्हीं से रंग बिरंगे फर्श बनाये जाते हैं। प्राचीन मन्दिरों के फर्श श्वेत-श्याम पत्थरों के अधिक मिलते हैं। ताजमहल में अनेक प्रकार के संग मरमर के ऊपर बने हुए Inter-linking patterns मिलते हैं। यवन युग में ये विशेष सुन्दर रूप में पाये जाते हैं। यह लिखना अनुचित न होगा कि मुगल काल में जितने अन्तर्गृह आलेखन हुए हैं वे अत्यन्त प्रशंसनीय हैं—वे अनुपम हैं। अनेका प्रकार के वृक्ष, झरोखों के बीच-बीच में पत्थरों के उपर अङ्कित पाये जाते हैं। फूल पत्तियों का उपयोग उनमें प्रमुख है।

ज्यामितिक आलेख इसमें अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं। उभयानुरूप और Simple Decorative भी ज्यामितिक पर ही आश्रित है। इसमें अधिक रंग उपयोग में नहीं लाये जा सकते और रंग चटक भी नहीं होने चाहिए।

रंग योजना

आकार कल्पना चित्रकला का एक प्रधान अंग है, जैसा कि अब तक स्पष्ट हो चुका है, अनुभूतियों को अलंकृत रूप में रखना ही आकार कल्पना है। प्रत्येक वस्तु को यथार्थ और सुन्दर रूप में रखने का नाम ही आकार कल्पना है। इसमें सौन्दर्य की तीव्र अनुभूति होती है और उसको ही अभिव्यक्ति देने का प्रयत्न कलाकार का रहता है। यह आकार कल्पना हमारी भीतरी भावना या कल्पना को जागृत करती है, और किसी वस्तु के रूप का आनन्द नियमित सप्रयोजन और उपादेयता को ध्यान में रख आकार कल्पना द्वारा ही होता है। आकार में रंग योजना का सर्व प्रमुख स्थान है। आकार कल्पना के दोनों भागों—रेखा और रंग—में यह दूसरी योजना, रंग योजना, भावों को स्पष्ट करने के लिए तथा आकार को प्रभावशाली बनाने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। किसी वस्तु का रेखाओं द्वारा जब रूप अङ्कित किया जाता है तब उसके सही और सजीव स्वरूप की कल्पना बिना रंग की सहायता के नहीं हो सकती। रंग ही वस्तु को हमारे अनुभव के योग्य बनाता है। केले का रूप यदि रेखाओं द्वारा बना दिया जाय तो हम उससे कदापि सन्तुष्ट नहीं होंगे जब तक कि उसके आकार को काले पीले और हरे रंगों से नहीं सजाते। चित्र में दिये इन दोनों केले के फलों को देखकर यह स्पष्ट हो गया कि पहले की अपेक्षा दूसरा फल अधिक स्वाभाविक बन गया है और यह स्वाभाविकता उसमें रंग ने भरी है।

रंग योजना से कलाकार का वर्ण-ज्ञान तथा उसके आकार कल्पना के चरित्र एवं मनोविज्ञान का स्पष्टीकरण हो जाता है। रंग से ही हम किसी की भली बुरी रुचि का निर्णय कर देते हैं। चरित्र की बहुत सी गूढ़ बातें रंगों से ही कलाकार स्पष्ट करता है। हमारे भारतीय साधु महात्मा गेरुआ रंग किस लिए अधिक अच्छा मानते थे? हमारे सम्पूर्ण संस्कार आदि कार्यों में रोली, अक्षत दही आदि का टीका क्यों लगाया जाता है? पान का रंग ओंठों पर क्यों अधिक श्रेष्ठ माना गया है? इन सब बातों में भारतीय रंग मनोविज्ञान छिपा है। लाल रोली या सिन्दूर से अनुराग या प्रेम की ओर संकेत होता है। गेरुआ से सात्विक भावों का स्पष्टीकरण होता है। ब्रह्म का दिव्य प्रकाश अरुण वर्ण है। उपनिषदों में आकाश के ऊपर के लोकों का रंग अरुण बताया गया है। इन सब रंगों से

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

भारतीय जीवन के बाहरी और भीतरी रूप की अच्छी अभिव्यक्ति होती है। हमारा रंग मनोविज्ञान अत्यन्त सुचारु रूप से स्पष्ट है। भारतीयों को किसी से इस विषय में कुछ नहीं सीखना है।

भारतीय रंग मनोविज्ञान का आधार प्रकृति है। हम आकाश के इन्द्र धनुष में अनेक रंग देखते हैं जिनमें से कुछ विरोधी प्रकृति के दीखते हैं। इसी पर आधुनिक विज्ञान खोज करके बता रहा है। प्रत्येक देश के कलाकारों ने इस इन्द्र धनुष और प्रकृति के अन्य रंगों की योजना को ही लेकर अपने देश की परम्परागत रंग योजनाएँ बनाई हैं। यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि आधुनिक विज्ञान इन्हीं का अध्ययन प्रस्तुत कर रङ्ग योजना के विषय में अपनी खोजें बता रहा है। प्रकृति के विशाल शरीर में हम देखते हैं कि विभिन्न रङ्ग इस विश्व के सौन्दर्य को बढ़ाने के लिए ही हैं। नीले आकाश पर चमकते तारे, हरे गुलाब की झाड़ी की गोद में लाल फूल; चन्द्रमा का उज्ज्वल शरीर और उसमें काला चिह्न; मनुष्य के गोरे-गोरे शरीर पर तिल; चितकबरे बकरे; भेड़; कुत्ते, बिल्लियाँ ये सब प्रकृति की रङ्ग योजना के रूप हैं। कवि और गायक भी चित्रकार की भांति इसी प्रकार प्रकृति की विराट् रङ्ग योजना को अपने गीतों में गाते हैं।

संस्कृति के विकास के साथ-साथ रङ्ग योजना भी विकसित होती रहती है। मनुष्य आज क्या अनादि काल से रङ्ग योजना में लीन दिखाई देता है, उसे अपने रङ्गों को संस्कृति, सभ्यता के साथ विकास देने में आनन्द आता है। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ से ही कलाकारों ने रङ्गों का उपयोग अधिक विकसित रूप में करना शुरू किया। भारत में विक्रम सम्वत् १ से लेकर छठी या सातवीं शताब्दी तक चित्रकला-युग रहा है। इसी समय अजन्ता के सुन्दर चित्र बने। विभिन्न शैलियाँ चित्रकला के इतिहास में जो दिखाई देती हैं वे इन्हीं शताब्दियों में विश्व में सबसे समृद्ध दिखाई देती हैं।

इन सबके अध्ययन के अनन्तर हम इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि प्रकृति के विरोधी रङ्ग एक साथ रहने से अपना-अपना महत्व बताते हैं किन्तु विरोधी रङ्गों का विन्यास किस प्रकार करना चाहिए यही हमें समझना है।

कलाकार प्रत्येक देश की जलवायु के अनुसार रंग योजना बनाते हैं, जो रंग जहाँ जिस जलवायु और धूप में अच्छा लगता है, उसी को कला में स्थान दिया जाता है। दक्षिण में नीले, कत्थई, नारंगी आदि रंगों की साड़ियाँ इसलिए पहनी जाती हैं कि सूर्य

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

के अधिक समीप होने के कारण इनका आकर्षण धूप में अधिक बढ़ जाता है। पश्चिम में चटक रंग अधिक अपनाए जाते हैं। क़ालीन बनाने वाले, तथा कला केन्द्र की भित्तियों पर चटक रंग की वर्ण योजना यही बताती है।

रंगों का प्रयोग कला के विद्यार्थियों को सोच समझकर करना चाहिए। यह अनिवार्य नहीं कि विरोधी रंग ही ठीक लगें। उन्हें प्रत्येक रंग का विन्यास उस रंग का सौन्दर्य बढ़ाने के उद्देश्य से करना चाहिए। किस रंग के पास कौन सा रंग सुन्दर लगेगा यह सब सोचकर रंग का प्रयोग करना आवश्यक है। हमारे देश के विद्यार्थी रंग योजना में बहुत सी त्रुटियाँ इसीलिए करते हैं कि उन्हें रंग योजना के प्रकार स्वयं सोचकर या ठीक निर्देशन द्वारा नहीं मालूम होते। यह हमारा अनुभव है कि विद्यार्थी अधिकांश रूप से 'फूल' शब्द का उच्चारण करते ही लाल, पीले या गुलाबी रंग को भर देते हैं अथवा आकार कल्पना में रंग का नाम सुनते ही प्राकृतिक रंगों का ध्यान कर रंग समवेतता (कोम्बीनेशन) का ध्यान नहीं रखते। इस समवेतता की उपादेयता भी नहीं सोचते। इसीलिए रंग की समन्वयात्मकता (कलर स्कीम आफ़ हारमोनी) की बात उनके विचार में आती ही नहीं। रंग योजना में रंगों की चटक मटक पर जिनका ध्यान अधिक रहता है वे उसमें रंग समवेतता या अनुरूपता का भी अवश्य ध्यान रखें। इन्द्रधनुष का उदाहरण हमारे समक्ष है। इसमें रंग अनुरूपता कितनी सुन्दर है, चटक रंग भी हैं और वे इस ढंग से हैं कि भद्दे प्रतीत नहीं होते हैं। इन्द्रधनुषी रंगों में जिस प्रकार अनुरूपता पाई जाई है उसी प्रकार रंग योजना में भी कलाकारों को अनुरूपता का ध्यान रखना आवश्यक है। चटक-चटक रंग एक साथ भी आ सकते हैं यदि वे अनुरूपता में आ जांय, दिये हुए चित्र से यह अनुरूपता स्पष्ट हो जायगी। आचार्य ऑसवॉल तथा भारतीय प्राचीन रंग योजना पद्धति, जो इन्द्र धनुष को ध्यान में रख बनी है, के अनुसार इस चक्र में आप रंग समन्वयात्मकता और अनुरूपता दोनों पा लेंगे। यह बात ध्यान में रखें कि इस चक्र में बगल वाले रंग से समन्वयात्मकता आ सकती है और उसके बिल्कुल सामने वाले रंग से सन्तुलनात्मकता आती है।

All Over Pattern (ऑल ओवर पैट्टर्न)

ये अधिकतर देखने में आते हैं। ये सर्वाधिक उपयोगी हैं। इनके विभिन्न प्रकार हैं किन्तु सिद्धान्त एक ही है। अतः यह जान लेना आवश्यक होगा कि इनके प्रकार कौन-कौन से है ? ये किस कार्य में आते हैं ? किन विशेष बातों का इनमें ध्यान रखना चाहिए ? इस प्रकार के आकारों में अजस्रता (Continuity) विशेष रूप से होनी चाहिये। आज-कल तथा कुछ प्राचीन आलेखों में भी कुछ बूटों के आकार पृथक स्थान छोड़ कर भी मिलते हैं। इसमें यह न समझा जाय कि ये all over patterns नहीं हैं। आकार कल्पना जैसा कि हम बता चुके हैं केवल जगह को भरने का नाम है। स्थान पूर्ति के लिये यह आवश्यक नहीं कि वह बेलबूटों तथा रङ्गों से भरा जाय। केवल रिक्त स्थान बीच-बीच में देकर भी आँखों को रोचक लगने के लिये बनाया जा सकता है।

उपर्युक्त आकार कल्पना साड़ियों, लिहाफों, जाजम के रूपों, बच्चों के फ्राक के कपड़ों, स्त्रियों के ब्लाउजों, वाल पेपर (wall paper) और कोट आदि बहुत से कपड़ों पर बन सकती हैं, परन्तु प्रत्येक आकार के लिये कुछ विशेष बातें ध्यान में रखनी आवश्यक हैं। हम क्रमशः उन्हें लेंगे।

साड़ियों की किनारियों के विषय में हम पहले बता चुके हैं कि उनके स्वरूप बनाने एवं रङ्ग योजना में किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिये। किनारी के आधार पर ही उसका all over pattern बनाना उचित होगा। रङ्ग योजना भी प्रत्येक कलाकार अपनी मनोवृत्ति के अनुसार बनायेगा और साड़ी खरीदने वालों की भी तरह तरह की रुचियाँ होंगी इस कारण कोई भी निश्चित सिद्धान्त इसके लिये नहीं।

लिहाफ़ के आकार भी all over patterns के अन्तर्गत आते हैं। लिहाफ़ों के आकार सजाने में कलाकार किसी भी रूप को अपने मन से ले सकता है, परन्तु रङ्ग लगाते समय यदि इस बात का ध्यान रखा जाय कि लिहाफ़ के आकार में ऐसे रङ्गों का उपयोग हो जो मैल खोरे हों, क्योंकि लिहाफ़ों का धुलाना जल्दी जल्दी असम्भव होता है। चाहे हम कितने ही खोल उन पर चढ़ा कर रखें फिर भी तीन चार माह एक साथ प्रयोग करने

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

रङ्ग वे गन्दे हो ही जाते हैं। मैलखोरे रङ्गों से हमारा तात्पर्य गहरे रङ्गों से है और अधिकतर गहरे रंगों के लिहाफ़ आज कल के लोगों को पसन्द आते हैं।

जाज़म के आकार अधिकतर Conventional for n में बनते हैं और इसके साथ २ रूप ऐसे होते हैं जिन्हें जुलाहे आसानी से बुन सकें। अधिकाँश जाज़मों के आकार इसी कारण बुनाई के आकारों से अधिक सम्बन्धित होते हैं। बुनाई के अन्तर्गत ज्यामितिक आलेख तथा कुछ थोड़ी सी सुन्दर आकृतियाँ जो बुनाई में साधारण रूप में आ सकती हैं, उपयोग में लाई जा सकती हैं। हमारा ध्येय यहाँ बुनाई के सम्बन्ध में बतलाना नहीं है इसलिये हम इसे अधिक विस्तार न देंगे। स्त्रियों की दुसूती पर बनाने वाले आकार भी कुछ इसी प्रकार के होते हैं। चारों ओर से सीधे २ ताने आने पर एक रंग का तागा कितनी बार दोहराया जाय और किस प्रकार कहाँ रोक दिया जाय जिससे वह आकार बन जाय यह एक दूसरी ही वस्तु है।

बच्चों के फ्रॉक की आकार कल्पना के विषय पर पर्याप्त लिखा जा चुका है। Selection of units और Contrast colour scheme वाले प्रसंग में इस विषय पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है, फिर भी यह ध्यान रखा जाय कि बच्चों के आकार all over patterns में units फूल फल तथा प्रसाधनात्मक वस्तुओं के लिये जायें। रंग सन्तुलानात्मक (contrast colour scheme) के लगाये जायें तो बहुत ही सुन्दर आकार होगा।

महिलाओं के ब्लाउज़ तथा बच्चों के फ्राक के कपड़े दोनों अवस्थानुसार बदलते रहते हैं। संसार में तृप्त मनुष्य चटक-मटक की बातों से विरक्ति पा लेता है। इसी कारण जैसे-जैसे स्त्रियों की अवस्था अधिक होती जाती है वे अधिकतर साधारण हल्के रङ्ग के ब्लाउज पहनती हैं, फिर भी अवस्थानुसार सरल विचारों वाली स्त्रियों को भी कुछ न कुछ प्रसाधनापूर्ण वस्त्र पहनने ही पड़ते हैं। इस कारण इसमें सभी प्रकार की रङ्ग योजनाओं का उपयोग करना चाहिए। जब तक विशेष रूप से यह न अवगत हो जाय कि किसके लिए आकार कल्पना (Design) बन रही है तब तक आकार कल्पना का निश्चित रूप नहीं दिया जा सकता। कपड़े वाले की दुकान पर जाने पर दुकानदार ग्राहक की रुचि के अनुसार अनेक कपड़े दिखाता है और उसकी यथार्थ रुचि जानने पर उसी के अनेक वाञ्छित कपड़े के नमूनों के ढेर लगा देता है और अच्छा बिक्रेता वही है, जो ग्राहक की रुचि को शीघ्र पहचानले। आकार कल्पना के कलाकार को भी इसी प्रकार रुचि की थाह लेना आवश्यक है। वह अपने आकारों को सर्व-प्रिय बनायगा, दर्शकों की रुचि का

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

अनुसरण करेगा तो वह सफल आकार कर्त्ता माना जायगा। भित्ति चित्र (वाल पेपर) और पर्दों के आकारों के विषय में पीछे पर्याप्त लिखा जा चुका है। कोट, कमीज आदि के आकार भी इसी All over patterns के अन्तर्गत हैं। इसी कारण इन पर प्रकाश डालना आवश्यक है। वैसे इनके आकार बनाने में कोई खास बात नहीं है। अधिकतर मनुष्य धारियों वाले कपड़े या हल्के सफेद रङ्गों के कपड़े पहनने के अभ्यासी होते हैं। वे ही धारियों वाले कपड़े जाड़ों में चटक ऊनी कपड़ों में भी दीखते हैं। आजकल तो नवीन यंत्रों के कारण अनेक रूपों वाले कपड़े बनाये जाते हैं और पहने जाते हैं, केवल मुगल काल में मनुष्य समाज में जो वस्त्र प्रचलित थे उन पर विशेष प्रसाधन सामग्री देखने को मिलती है। काढ़ी हुई ज़रीदार वास्कटें, कोट, टोपियाँ उस समय की मिलती हैं। आल ओवर पैटर्नस में कुर्सियों के कपड़े भी आ जाते हैं।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

काढ़ने बुनने के लिए आकार कल्पना

(Textile Designs)

कुछ नवीन आकार कल्पना के विषय में अब यहाँ दो चार पंक्तियाँ बतानी आवश्यक हैं। नवीन आकार कल्पना के विवेचन से हमारा अभिप्राय उन आधार मूल तत्वों का स्पष्टीकरण करना है, जिनके अन्तर्गत काढ़ना, बुनना आदि के आकार आते हैं। ये भी आकार कल्पना के ही रूप हैं। सामान्य सिद्धान्त आकार कल्पना के पहले ही पर्याप्त स्पष्ट हो गये हैं, उनके विषय में पिष्टपेषण करना अब उचित नहीं प्रतीत होता। फिर भी इतना कहना आवश्यक है कि आकार कल्पना में विशेष-लक्ष्य समय और किसी वस्तु की उपयोगिता को ध्यान में रख उसका स्वरूप स्पष्ट करने का होता है। काढ़ने, बुनने आदि के आकारों के आधारभूत तत्व संस्कृति के विकास की सुदीर्घ परम्पराएँ हैं, इनमें विभिन्न समयों के अनुसार घटित होती हुई संस्कृति इनके अनेक रूपों का कारण होती है। प्राचीन काल से ही काढ़ने बुनने की कला का विकास उस समय हुआ जबकि नारी समाज अपनी कोमलता के सौन्दर्य भार से दबा होने के कारण जीवन क्षेत्र में अवकाश के क्षणों का सदुपयोग कठोर परिश्रम की अपेक्षा सरल श्रम—काढ़ने बुनने—से करता रहा। यहाँ हमारा तात्पर्य यह नहीं कि काढ़ने बुनने के आकारों को बताकर विद्यार्थियों को काढ़ना बुनना सिखाएँ। हमें तो केवल आकार कल्पना के विभिन्न भेदों में आने वाले इन काढ़ने बुनने के आकारों से विद्यार्थियों को परिचित कराना है। काढ़ना बुनना भी एक कला है उसमें भी सौन्दर्य चिन्तना के क्षण केन्द्रित हैं। उससे भी हम किसी वस्तु को सजा सकते हैं। काढ़ने बुनने के आकार कैसे बनते हैं यह विद्यार्थी सीख जांय। काढ़ने बुनने में तागों का प्रयोग किस प्रकार सुन्दर लग सकता है इस बात को ध्यान में रख हमें उसके नियमों का ज्ञान कराना आवश्यक है। कलाकार को यद्यपि नियमों में बांधा नहीं जा सकता, फिर भी कलाकार को काढ़ने बुनने की कला सम्बन्धी सभी बातों के नियमों को मानना पड़ेगा। काढ़ने बुनने का आकार ऐसा न हो जो कि तागों से बनाया जा सके। कई बार ऐसा होता है कि कलाकार आकार तो बना देता है परन्तु तागों से उसे बनाने

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

में बड़ी कठिनाई होती है। कभी-कभी तागों से वह आकार काढ़ा भी नहीं जाता। इसलिए कलाकार को जहाँ अपनी कल्पना की उच्चता का गौरव हो वहीं उसे काढ़ने वाले की असमर्थता पर भी सोचना चाहिए। काढ़ने वाला कलाकार के साथ समानगति पाये, उसमें सौन्दर्य पूर्णत: झलक उठे यह विचार कर ही आकार कल्पना करनी चाहिए। आज के मशीन युग में मशीनों से बनने वाले आकारों के निर्माण में विशेषत: इन बातों का ध्यान रखना होता है कि मशीन से बनने वाले आकार में समय उपयोगिता और उस आकार के विक्रय के लिए बाजार है या हो सकेगा कि नहीं तभी उस आकार को आलेख्य-विषय बनाना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि किसी गोल फ़ूल को कढ़ाई और बुनाई की आकार कल्पना में देदें तो हमें देखना होगा कि उसमें कितना समय लगता है, कितना व्यय होता है और उससे लाभ कितना हो सकता है। मशीन से बनने वाले आकारों में प्राय: सीधे तागे पड़ते हैं अथवा प्रतिरूपात्मकता में हाथ से बनाये जाने वाले आकारों में ये सब कठिनाईयाँ इतनी नहीं होतीं। अत: मशीन के आकारों में तागों का उपयोग विशेष प्रेक्षणीय होता है। रङ्ग आदि की योजना में भी इन आकारों में व्यय, समय और परिश्रम की अनेक कठिनाइयों का विचार होता है। तात्पर्य यह है कि आकार कर्त्ता के लिये इन सभी बातों का ध्यान रखना नितान्त आवश्यक है।

बुनने, काढ़ने तथा मशीन से बनाये जाने वाले आकारों में आकार कर्त्ता को कपड़े की चौड़ाई-लम्बाई का ध्यान रखना पड़ता है। आकार कल्पना के समय इन सभी से आकार कल्पना के अङ्गों की सुन्दर पूर्ति का ध्यान रखना विशेष महत्वपूर्ण है। सर्वांगीण सौन्दर्य उसके भीतर होना चाहिए। जितना छोटा आकार होगा उतनी ही उसमें उलझन होती है और कपड़े में कोमलतापूर्ण समता नहीं आ सकती है। कपड़े की कोमलता के साथ-साथ आकार में भी कोमलता आनी आवश्यक है, यह न हो कि कपड़ा तो कोमल चिकना या गुदगुदा हो और आकार उसमें कटुता या कठोरता ले आये। काढ़ने बुनने वाले आकारों में उन कपड़ों के साथ जिन पर वे बने हैं अनुकूलता अथवा समन्वयात्मकता होनी चाहिए न कि प्रतिकूलता अथवा वैषम्य।

काढ़ने बुनने के आकारों के अतिरिक्त कपड़े पर छापे जाने वाले आकारों के विषय में भी कुछ शब्द कहने यहाँ प्रसंगवश उचित ही होंगे। कलाकार को छपाई के आकारों को जानना भी आवश्यक है। आज के युग में छपाई के बड़े-बड़े साधन हो गये हैं। यंत्रों से बने नये-नये छापे के आकार देखने में आते हैं। आज लकड़ी, तांबें, जस्त आदि पर आकार बनाकर मशीनों द्वारा छापने का काम होता है इन्हें छापने के अनेक

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

रूप और नाम हैं। प्राचीन काल में हमारे यहाँ छापने का कार्य केवल ठप्पे द्वारा ही होता था, जो लकड़ी पर खोद कर बनाया जाता था। आलू, सलजम आदि के ऊपर बच्चों के खेल के ठप्पे भी इसी के रूप हैं। इन सब छापने के आकारों में रिक्त स्थान अधिक न हो, जोड़ ठीक हों, उसकी अजस्रता (Continuity) नष्ट न हो और उसका स्वरूप भी भाव-प्रवाहात्मक हो। इन सभी बातों का छपाई की आकार कल्पना में ध्यान रखना चाहिए। छपे हुये आकार भी कढ़ाई-बुनाई के आकारों की भांति अच्छा भाव प्रकाशन देते हैं। यदि उनमें रङ्ग और रूप ठीक हों तो यह कार्य अधिक व्यय साध्य नहीं। थोड़े ही कार्य में यह हो जाता है। फर्रुखाबादी जाजमें, लिहाफ के पल्ले इसके सुन्दर उदाहरण हैं कि कितने कम खर्च में कितने सुन्दर आकार मिल जाते हैं। यही कारण है कि फर्रुखाबाद के छपे वस्त्र विदेशों तक में जाते हैं। इस मशीन युग में सस्ते व्यय में सुन्दर कार्य हों तो क्या हानि है।

Textile Designs (टेक्सटाइल डिज़ाइन)

प्रतिदिन हमारे व्यवहार में आने वाले वस्त्रों के रूपों का निर्माण इस बुनाई वाली आकार कल्पना में आता है। हम अपने प्रयोग के वस्त्रों के सुन्दर-सुन्दर आकार देखना चाहते हैं इसी कारण उनके आकार-सौन्दर्य के प्रति हमारी सहज जिज्ञासा उत्पन्न हो जाती है कि वे किस प्रकार सुन्दर बनाये जा सकते हैं।

किसी भी प्रकार की प्रयोगात्मक शिक्षण की इसके लिए आवश्यकता नहीं और न इसके लिए किसी को जन्म से ही कलाकार होने की ही आवश्यकता है; अपितु इसमें भावात्मकता एवं प्रयोगात्मकता दोनों की आवश्यकता है, अर्थात् सौन्दर्य बोध की प्रवृत्ति की। इन दोनों के साथ ही किसी भी बुनाई से बनने वाले आकार कल्पना का प्रयोजन और रीति भी जानना आवश्यक है। ऐसी आकार कल्पना एक ओर तो कलात्मकता अर्थात् हाथ की सफ़ाई, मस्तिष्क, भाव, एवं रीति-नीति का बोध कराती है; दूसरी ओर उसका प्रयोजन तथा प्रयोग-शैली भी आकार कर्त्ता के लिए ज्ञातव्य है। इस आकार कल्पना में सौन्दर्य पूर्ण अंशों का विचार और उनका पारस्परिक सम्बन्ध रङ्ग तथा आधार यानी जिस पर आकार बनाया जाय, उसका ज्ञान तथा उसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी आकार कर्त्ता को पूर्ण रूप से समझने चाहिए। मशीन पर बनाने योग्य आकार के लिए आकार कर्त्ता को प्रयत्न करना चाहिए। कलाकार अपने रङ्ग और आकारों को घटा बढ़ा सकेगा परन्तु मशीन जड़वस्तु है उसमें एक बार स्थिर किया गया आकार पत्थर की लकीर है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

इस प्रकार के आकार कर्त्ता को मशीन द्वारा बनाये जासकने योग्य आकार ही प्रस्तुत करने चाहिए न कि असम्भव आकार जिन्हें मशीन प्रयोग में नहीं ला सकती।

इस प्रकार के आकार कर्त्ता के लिए आकार कल्पना में बहुत अनुभव, विशेष अध्ययन, कल्पना शक्ति, कला की स्वतन्त्र उद्भावना तथा सांस्कृतिक दृष्टिकोण का पूर्ण ज्ञान आवश्यक है। केवल अच्छे भावात्मक चित्रों के कुशल कलाकार बुनाई के आकारों को कुशलता से चित्रित नहीं कर सकते, इसके अपवाद (Exceptions) हैं। बुनने के आकारों के अङ्कन में कलाकार को तीव्र भावानुभूति तथा दैनिक जीवन और जगत् के क्षण-क्षण परिवर्तन का ज्ञान भी अनिवार्य है। सभा जगत, प्रकृतिगत और मानव मनोजगत सम्बन्धी ज्ञान ऐसे आकारों के निर्माण में बड़ा उपयोगी है। एक ही वस्तु को बार-बार दुहराने वाला कलाकार, नवीनताहीन साधक, जीवन की नवीन भावानुभूतियों की सुन्दरता न जानने वाला कलाकार सजीव आकारों की उद्भावना नहीं दे सकता। क्षण-क्षण में नवीन रूप में आने वाली सुन्दरता ही कला है, और आकार कर्त्ता को इस नव सौन्दर्य का ज्ञान परम आवश्यक है। चाहे वह साहित्य संगीत चित्र, मूर्ति, नृत्य, कुछ भी हो सब में नवीनता होनी आवश्यक है। नवीन सौन्दर्य की उद्भावना करने वाला कला साधक अमर है। प्राचीन काल के कलाकार इसीलिए आज भी चिर प्रेरणामय हैं क्योंकि उन्होंने सौन्दर्य पूर्ण आकार कल्पनाएँ त्रिकाल सौन्दर्य से भरी हैं। उनके आकारों का सौन्दर्य चिर सुन्दर है, शाश्वत् है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

नवीन आकारों के लिए मूलाधार (Sources of new designs)

इन सब आकारों के निर्माण ज्ञान के अनन्तर अब हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि आकारों की कल्पना की कोई निश्चित सीमा नहीं। प्रत्येक युग, समाज और व्यक्ति की आकारों की उद्भावनाएँ तत्-तत् युग, समाज और व्यक्ति की अपनी प्रेरणाओं से हुई और इस प्रकार प्रागैतिहासिक काल से लेकर आज तक आकार कल्पना के मूल सिद्धान्तों की सीमा या उनके निश्चित रूप अब तक अन्त नहीं पा सके। विकासवाद के सिद्धान्त के अनुसार विश्व के प्रत्येक अस्तित्व का विकास स्वतः होता चला जाता है, किसी भी पदार्थ या वस्तु का त्रैकालिक सिद्धान्त अटल नहीं। प्रकृति, समाज, व्यक्ति आदि के विकास के साथ-साथ राजनीति, धर्म, सभ्यता जैसी सूक्ष्म वस्तुएँ एवं साहित्य कला आदि भी विकासोन्मुखी रहती हैं। यह विकास परिवर्तन, परिवर्द्धन और नाश आदि कई नामों से अभिहित है। भाषा, संस्कृति कला साहित्य ये सभी रहस्यात्मक प्रभाव से तथा प्रकट

प्रभावों से निरन्तर विकसित होते रहते हैं। परिवर्तन ही विकास का दूसरा नाम है। आकार कल्पना के सिद्धान्त तथा उसके स्वरूप भी निरन्तर विकासोन्मुखी हैं। इनकी इयत्ता (limit) कुछ निश्चित नहीं। आकार-कल्पना-शास्त्र भी इसीलिए अनन्त है।

आकार कर्त्ता के लिए नवीन स्वतन्त्र उद्भावनाएँ सबसे बड़ी ईश्वरीय देन हैं। इस नवीन स्वतन्त्र उद्भावना में आकार-कर्त्ता को मौलिक विकास कल्पना शक्ति, एवं व्यक्तिगत तीव्र प्रेरणाओं की प्रभावशालिनी अभिव्यक्ति (Expression) की आवश्यकताएँ हैं। इनके बिना आकार कर्त्ता कभी अपना महत्वपद नहीं पा सकता। इन्हीं से वह भविष्य के लिए युगप्रवर्तक का कार्य करता है, और प्रत्येक प्रकार की नवीन कलाविकास की दिशाओं का भी वही निर्देशन करता है और सामयिक कला का, रीति-नीति का नेतृत्व भी वह भली-भान्ति कर सकता है। यह माना कि कला के क्षेत्र में अनन्तता है, फिर भी कुछ निश्चित सिद्धान्तों से ही वह आगे बढ़ सकेगा। उसे अपने विकास काल में सिद्धान्तों, तथा नियमों से सहायता अवश्य लेनी होगी। तभी कला के अभिभावक दर्शक तथा प्रेमी उसकी कला के प्रति आकृष्ट होंगे।

एक कलाकार का उत्तरदायित्व आकार कल्पना में यह भी है कि वह अपनी कला की आकार कल्पना की साधना में नवीन एवम् प्राचीन सभी का समन्वय कर असम्भावित सौन्दर्य को अपनी कल्पना में साक्षात्कार करदे। अप्रत्यक्ष, अप्रत्याशित (unexpected) आधारों द्वारा वह किसी भी गुप्त सौन्दर्य को अथवा विचार को अभिव्यक्ति देदे। जिस जिस प्रकार शिल्पी अपनी कल्पना के आधार का रूप स्पष्ट कर देता है उसी प्रकार आकार कर्त्ता भी अप्रत्यक्ष तथा सम्भाव्य आकार को अपनी कुशलता से प्रत्यक्ष करा देता है।

संक्षेप में हम यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक समझते हैं कि अनन्त आकारों को हम मुख्यतः तीन भागों में बांट सकते हैं। पहले प्रकार के आकार प्राकृतिक हैं, जो प्रकृति देवी द्वारा स्वतः बनाये गये हैं। फूल पत्ती, जानवर, मछली शङ्ख, सीपियाँ, कीड़े मकोड़े आदि में हम प्रकृति की कला का सौन्दर्य निखरा पाते हैं। कलाकार इन पदार्थों को कभी-कभी प्राकृतिक रूप में तो नहीं रखता, वह उन्हें अपनी इच्छानुसार रूप में ढाल देता है, मूलाधार उनका वैसा ही रहता है।

दूसरे प्रकार के आकार मनुष्यकृत हैं जिन्हें मनष्यों ने अपनी आवश्यकता तथा

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

परिस्थितियों के अनुकूल आत्मतुष्टि के लिए बनाया है। देश काल की परिस्थितियाँ भी इनमें कारण हैं। वे आकार बर्तन, कपड़े, मकान तथा अन्य दैनिक जीवन में उपयोग में आने वाली वस्तुओं के हैं। समय और परिस्थितियों में पड़े हुए मानव समाज ने ये बनाये।

तीसरे प्रकार के आकार ज्यामितिक एवं किसी विशेष निगूढ़ भाव की अभिव्यक्ति के लिए हम भारत में ही पाते हैं। इनमें मनुष्य और प्रकृति दोनों के प्रभाव लक्षित होते हैं। अर्थात् कुछ मानव बुद्धि का कौशल इनमें दीखता है और कुछ प्रकृति का।

इस प्रकार आकार कल्पना का क्षेत्र बहुत बड़ा और अज्ञेय है, परन्तु सच्चे कलाकार के लिए वह हस्तामलकवत् है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

अल्पना आलेख्य

अल्पना—आलेख के विभिन्न भागों में अल्पना भी एक भाग है, जिसे बंगाल में अधिकांशतः पाते हैं। मनुष्य का हृदय अपनी अनुभूतियों की निश्चित सीमाएँ नहीं रखता है, इस असीम भाव अनुभूति के ही रूप अनेक धार्मिक क्रियाओं सम्बन्धी आलेख हैं और अनेक रीतियाँ भी इन्हीं का अनन्त प्रकाशन हैं। इनमें अल्पना भी एक सजीव आलेख्य प्रतीक है जो कि देवताओं, पर्वों और अन्य धार्मिक उत्सवों के भाव प्रकाशन के लिए प्रयुक्त होता है। अल्पना शब्द संस्कृत के आलिम्पना शब्द का बोधक है जिसका अर्थ मूलतः कलात्मक रूप से किसी भी भाव को प्रारम्भ करना है आपूर्वक लिम्प धातु से यह शब्द बना है जिसका मूलार्थ अंगुलियों द्वारा किसी वस्तु को लीपना है। इसी का संक्षिप्त संज्ञात्मक रूप अल्पना बंगाल में है। कल्पना, जल्पना के समकक्ष ही यह अल्पना शब्द है।

अल्पना नामक आलेख्य वैसे तो सम्पूर्ण भारत में सभी समुद्रतटान्तवर्ती सीमाओं में पाये जाते हैं। परन्तु बंगाल में इसका विशेष प्रचलन है। जैसे-जैसे हम समुद्रतट से अन्तर्भाग की ओर के भू-क्षेत्र में बढ़ते हैं वैसे ही वैसे इसके प्रति रुचि लोगों की कम पाते हैं। अल्पना प्राचीन हिन्दुओं के धार्मिक जीवन का द्योतक है। वैसे तो हमारे इतने लम्बे चौड़े देश में ईसाई मुसलमान आदि कई संस्कृतियों के लोग रहते हैं परन्तु अल्पना विशेषतः हिन्दू संस्कृति में ही पाया जाता है। हमारे यहाँ पर्व और उत्सव प्राक् काल में ऋतु परिवर्तन के समय ही मनाये जाते थे धीरे-धीरे इनमें विशेष परिवर्तन होते गये और इनकी आज रूपरेखाएँ प्राचीन न रह गईं, इनमें अब नवीन विशेषताएँ परिस्थिति वश आती गईं और इसीलिए आज के पर्व उत्सव कुछ परिवर्तित रूप में हैं यद्यपि मूलतः वे पुराने ही हैं। अल्पना के कई भाग हैं परन्तु मुख्यतः हम उन्हें दो भागों में बांटते हैं, एक तो वे जो धर्म सम्प्रदाय सम्बन्धी हैं और दूसरे वे हैं जो सजावट के लिए बनाये जाते हैं। इन अल्पना आलेख्यों में कुछ भावचित्र होते हैं जिनके भीतर कुछ कथाएँ समझाई जाती हैं। इन अल्पना आलेख्यों में मनोनुकूल परिवर्तन हो सकते हैं कोई एक रूढ़िगत रूप इनका

Digitized from www.dharalibrary.org.in

नहीं परन्तु इस बात का भी ध्यान रहे कि कल्पना की स्वतन्त्रता होने पर भी अल्पना आलेख्य का मूल रूप अवश्य झलके।

ये अल्पना आलेख्य अधिकांश स्त्री समाज में प्रचलित हैं। इस लिए अल्पना कुटुम्ब कला के भीतर समाविष्ट हो जाती है। ये अल्पना आलेख्य किसी पाठशाला में नहीं सिखाये जाते अपितु माता अपनी बेटी को सिखाती है बेटी अपनी बेटी को सिखाती है और इन अल्पना आलेख्यों की परम्परा हमारे स्त्री समाज में चली आ रही है। अल्पना आलेख्यों का प्रादुर्भाव हमारे नारी वर्ग की कल्पना से हुआ, जिनमें उनके धार्मिक भावों का प्रकाशन है। पर्वों के समय परिवारों में स्त्रियाँ एक मधुर भावना को ले अपने बच्चों के साथ बैठ जाती हैं और वे हर्ष से अपने हाथों एवं उंगलियों से चावल और हल्दी का ऐपन लेकर बनाती हैं। अधिकतर ये आँगनों में दरवाज़ों के सामने भूरी भूमि पर बनाये जाते हैं। संयुक्त प्रान्त में भूमि को गोबर से लीप कर उस पर इसे बनाते हैं। उँगलियों से ही वे ब्रुश का काम लेती हैं। धार्मिक मनोवृत्ति के लोग तो ऐसा करते हैं परन्तु जो लोग सजावट के लिए बनाते हैं वे गेरु पीली मिट्टी, नील, काला कोयला और सफेद खड़िया का भी प्रयोग इसमें करते हैं। फूल पत्ते टहनी बेलें भी बनाते हैं, परन्तु जो लोग धार्मिक वृत्ति वाले हैं वे वृत्ताकार ही बनाते हैं। वृत्ताकार अल्पनाएँ भी कई प्रकार की होती हैं और इनमें भेद भेदान्तर पर्व या उत्सव के अनुसार हो जाते हैं। उदाहरणार्थ जैसे नामकरण संस्कार अथवा वर-वधू के विवाह के समय बनने वाले आकारों में नारायणी भावना का प्राधान्य होता है। अर्थात् वर-वधू लक्ष्मी और नारायण माने जाते हैं। और उनके बैठने के पटले पर कमल की भांति वर्तुलाकार अल्पनाएँ बनाई जाती हैं। इन अल्पनाओं में नारी हृदय का उल्लास हर्ष और न जाने कितनी मधुर भावनाएँ प्रकट होती हैं। ये सभी आकार नारी के मधुर कोमल आत्मा में प्रतिष्ठित रहती हैं और माधुर्य भाव से सम्पन्न होकर किसी सुन्दर उत्कर्ष को ले प्रकट होते हैं। ये अल्पना आलेख्य किसी आचार शास्त्र का प्रतिपादन या शिक्षण कराने के लिए नहीं बनाए जाते अपितु इनमें नारी हृदय के मधुर करुण कोमल भाव जगत् का ही प्रकाशन है। धार्मिक महत्व की दृष्टि से इनमें आधिदैविक जगत् सम्बन्धी क्या भावना स्पष्ट होती है इसके लिए हम कुछ नहीं कह सकते परन्तु कला के दृष्टिकोण से इनमें एक विशेष माधुर्य पूर्ण सौन्दर्य की अभिव्यक्ति अवश्य होती है। इन अल्पनाओं में हमारे जाने पहचाने फूल पत्ते भी नये-नये रूपों में आते हैं और एक ही कमल को हम अनेक जोड़ तोड़ मोड़ में पाते हैं। एक ही कमल हर बार नया रूप उनकी अल्पनाओं में पाता है। ये वृत्त भी परम्परागत होते

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

हुए भी नये-नये रूपों में हमारे समक्ष हैं। यही कारण है कि उनमें अनुकरणात्मकता तो नहीं होती परन्तु मूल भावना में उनके अन्तर नहीं होता भले ही बंगाल, यू० पी० गुजरात आदि विभिन्न प्रान्तों में विभिन्न रूपों में हों।

ये अल्पनाएँ अनेक प्रान्तों में अनेक रूपों में पाई जाती हैं। इनका परिगणन यदि किया जाय तो ये सैकड़ों की संख्या में मिलेंगे। इन वृत्तों का विवरण करना कठिन है फिर भी कुछ विशेष वृत्तों का उल्लेख करना आवश्यक है तथा उनके उद्देश्यों पर भी प्रकाश डालना अनुपयुक्त न होगा।

१—जीवन-वृत्त

उपनिषदों में वृत्तों को जीवन कहा गया है, ये शक्ति प्राप्ति के लिए प्रयुक्त होते हैं। इन्हें जीवन वृत्त या प्राणवृत्त भी कहते हैं। इनमें अग्नि देव की भावना या सूर्य देव की भावना की जाती है, क्योंकि सूर्य और अग्नि दोनों जीवन शक्ति के हैं। वर्षा वृत्त, वायु वृत्त भी इनमें होते हैं। पृथ्वी, जल, तेज वायु आकाश भी कल्पना से जीवन के प्रति इनका एक दृष्टिकोण होता है। इनका ध्येय जीवन की नित्यता या शाश्वतता बताना है। जीवन, शक्ति, सद्बुद्धि और सुख की प्राप्ति भी इनके निर्माण का ध्येय है। वेदोपनिषद् के मंत्र बहुत से प्राण प्रतिष्ठा के समय जो गाये जाते हैं, उनका अभिप्राय जीवन की शाश्वतता को ही बताना है। कला में हम यही शाश्वतता पाते हैं, वह जीवन से जीवन की ओर और जीवन के लिए है।

२—लक्ष्मी वृत्त

इसमें सम्पत्ति और ऋद्धि के देवता लक्ष्मी की भावना होती है। दीपावली महोत्सव के समय इसे बनाया जाता है। कमल और बेलें लक्ष्मीजी के चरणों में लहराती हैं। स्तम्भ और महल की छत को थामें रहते हैं। जहाँ चावल, गेहूँ आदि की फसलें रखी जाती हैं लक्ष्मी के सभी आभूषण वहाँ बनाये जाते हैं। ये सभी प्रतीक लक्ष्मी पूजा के हैं। लक्ष्मी पूजा की कथा भी इससे स्पष्ट होती है। इस अल्पना वृत्त में एक कथा कही जाती है कि एक बार एक राजा की दानशीलता और प्रजा वत्सलता इतनी बढ़ी कि वह जो कला सम्बन्धी सामान बाजार में कहीं न बिके राजा स्वयं उसे दाम चुकाकर खरीद लेते थे। एक बार एक कलाकार ने सभी देवताओं की मूर्तियों के बनाने के पश्चात् लोहे की अलक्ष्मी की मूर्ति भी बनाई। बाजार में ले गया। उसे बेचने पर उसे किसी ने नहीं

Downloaded from www.dbaudlibrary.org.in

खरीदा क्योंकि जिसके यहाँ यह लौह मूर्ति रहती उसे दरिद्रता सदा घेरे रहती थी। अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार राजा ने उसे खरीद लिया। राजा उसे जब घर में रखने लगे तो राज लक्ष्मी क्रुद्ध हो वहाँ से अलक्षित हो गई, उसी के साथ अन्य ऋद्धियाँ भी राजा के यहाँ से लुप्त होने लगीं। अन्त में सत्य धर्म भी जाने लगा तो राजा ने उसे पकड़ लिया और कहा कि तुम्हारे ही कारण तो यह सब हुआ, सत्य धर्म रुक गया। पुनः रानी ने लक्ष्मी देवी की प्रार्थना की और यही अल्पना बना पूजा की, लौह मूर्ति वाली अलक्ष्मी से भी प्रार्थना की कि वह अन्यत्र कहीं चली जाय। रानी की प्रार्थना स्वीकृत हुई और लक्ष्मी प्रसन्न हो वहाँ रहने लगी। इस कथा का इतिहास इस लक्ष्मी वृत्त में है। संयुक्त प्रान्त में इसे गोबर्द्धन पूजा भी कहते हैं।

३—तोषला वृत्त

इसका निर्माण भूमि की उपजवृद्धि के निमित्त होता है। शिशर ऋतु में हिमपात के त्रास से फसलों के बचाने के लिए यह मनाया जाता है जबकि आकाश के प्रांगण में क्षितिज में पीले रङ्ग का प्रसार होता है। एक महीने तक इसकी विधि मनाई जाती है। खेतों के स्वामी अपने खेतों को फूलों से सजे-धजे जाते हैं। सूर्योदय से पूर्व ये लोग मिट्टी के दीपक शिरों पर रखे मासान्त में नदी के किनारे ले जाते हैं फिर दीपदान नदी को करके वापिस आते हैं। इधर स्त्रियाँ नदी तट पर ताम्बे जैसे लाल वस्त्र पहने तथा पीले उत्तरीय धारण कर प्रार्थना करती हैं। इनके बाल बिखरे दिखाई देते हैं। सूर्य देव की अरुण रश्मियां इनके मुखों को उद्दीप्त करती हैं। ये प्रार्थनाएँ सूर्य की स्तुति में होती हैं। इस स्तुति में स्त्रियाँ सौभाग्य समृद्धि ऋद्धि सिद्धियाँ तथा कुटुम्ब परिवार के एवं राजा प्रजा के सर्वतोमुखी कल्याण की कामना करती हैं।

इनके अतिरिक्त और भी कई वृत्त हैं जो कि ऋतुओं से सम्बन्धित न होकर दैनिक जीवन से सम्बन्धित होते हैं। इनका ग्रन्थ विस्तार की आशंका से वर्णन अब उचित नहीं केवल नाम मात्र से उन्हें परिलक्षित कर देना चाहते हैं :—

४—माघ मण्डल वृत्त

सूर्य की पूजा के निमित्त शिशिर के कड़ाके के जाड़े में मनाया जाता है।

५—असत्यपत वृत्त

यह पीपल के वृक्ष की पूजा में मनाया जाता है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

६—वसुधारा वृत्त

यह वर्षा के निमित्त बनाया जाता है।

७—सहयुति वृत्त

यह दीपक-पूजन का एक विधान है जो सायंकाल दीपक जलने के पूर्व प्रारम्भ होता है। एक छोटी सी दीपक की लौ की पूजा में तथा जसमाहन को फूलों का धूप दिया जाता है। संध्या की पूजा में स्तुतियाँ भी सुन्दर गाई जाती हैं। लगभग ४० प्रकार की अल्पना यहाँ इस विधान में आती है। गन्धाक्षत जल फूलों से इनकी पूजा होती है।

८—हरिचरण वृत्त

वैशाख के प्रारम्भिक दिन से यह पूजन होता है। छोटी बालिकाएँ एक ताँबे की तस्तरी में सन्दल की लकड़ी से हरि भगवान् के चरणचिह्न बनाती हैं। उनके ऊपर पूजनोपचार करते अनेक इस विषय के गीत गाती हुई सर्व कल्याण कामना करती हैं।

९—आधार सिंहासन वृत्त

यह वृत्त एक अनुपम अद्वितीय सुन्दरी स्त्री को काष्ठ पीठ पर बैठा कर काम पूजा के निमित्त बनाया जाता है। अनेक काम पूजा सम्बन्धी भावनाओं से इसे सनाया जाता है।

विश्व भारती (शान्ति निकेतन) में अब इन अल्पनाओं के आलेख्य शिक्षण के लिए विशेष रूप से प्रबन्ध है, स्वर्गीय सुकुमारी देवी ने अपनी छात्रा और छात्रों को इस प्रकार की अल्पनाओं को यहां केवल सिखाया ही नहीं अपितु कुछ नवीन रूप भी इन्हें दिया। शान्ति निकेतन में इस परम्परा को आज कल बहन गौरा देवी चला रही हैं। स्त्रियाँ ही इन में विशेष भाग लेती हैं पुरुष नहीं।

आकार कल्पना के विस्तृत विवरण में हम पूर्व ही स्पष्ट कर चुके हैं कि रेखा योजना और रङ्ग योजना भेद से आकार कल्पना मुख्यतः दो प्रकार की होती है। अल्पना में केवल देवताओं, ऋतुओं पर ही मानव भावनाएँ केन्द्रित होती हैं। इसी कारण हम कमल के अनेक रूपों अनेक लता, पुष्प, फल और पशुओं मोर, गाय, कौवा, तोता, हंस

Downloaded from www.dralibrary.org.in

आदि का सरलतया आलेखन करते हैं, देवताओं के रूप तथा अनेक शृङ्गार सम्बन्धी सामग्री का भी अङ्कन करते हैं। देवताओं के देवियों के शृङ्गार की सामग्री भी इनमें अङ्कन करते हैं। जैसे कजर बट्ठू शीश, बिन्दी, सिन्दूर, चारपाई, पीढ़ा कलश, श्रीफल आदि आदि किसी देवता का शास्त्र भी इसमें आता है। लक्ष्मी जी के चरणों का अङ्कन भी किया जाता है। इनमें सभी देशकाल और वातावरणों की विशेषताएँ झलकती हैं। जोकि धार्मिक भावना को आकर्षक बनाती हैं।

कला के दृष्टिकोण से यद्यपि इन में वे सभी विस्तृत लावण्य योजनाएँ नहीं होती तथापि ग्रामीण कला का सौन्दर्य तो इन में बिखरा रहता है। इनके अन्तर्जगत् के सौन्दर्य को समझना भी आज कठिन है। रङ्गों का विधान इनमें अधिक नहीं होता। इन अल्पनाओं के आकारों का अनुकरण नहीं होता। ये स्वेच्छा से ही बनाये जाते हैं। शनैः शनैः ये विकसित होते रहते हैं।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

अल्पना सम्बंधित आकार विवरण

१०—अवृदन्य वृत्त

यह एक प्रकार का कमलाकार वृत्त होता है, जिसके आठ दल होते हैं। ये अधिकांश शुभ-मङ्गल अवसरों पर बनाये जाते हैं। ये द्वारों के सामने, आँगन में कमरे में जहाँ कहीं भी पूजा निश्चित हो वहीं बनाये जाते हैं। प्रायः ये दो वृत्त ही बनते हैं। विवाह में दो वरवधुओं को बैठाने के लिए बनते हैं। नाम करण आदि संस्कारों में एक ही बनता है। कभी कभी पूजा के स्थान पर मङ्गल घट भी बनते हैं, उस पर पञ्च पल्लव रखते हैं। धान, चावल या जौ उसके ऊपर भी फल, लाल कपड़ा आदि रखते हैं। अल्पना के अष्टदल के मध्य इस मङ्गल घट को स्थापित कर देते हैं।

११—काष्ठ पीठ वृत्त

यह लक्ष्मी पूजन के लिए विशेष एक काठ चौकी पर बनाया जाता है। इस में ज्यामितिक आलेख पीठ के चारों ओर बनाये जाते हैं। पीठ के ऊर्ध्वभाग में लक्ष्मी चरण अङ्कित होते हैं। इन से लक्ष्मी के आगमन की कल्पना होती है। इधर से खम्भे बने होते हैं। उनके पास ही नीचे की ओर फूलों के गजरे, कंघी, शीशा, मछली, काजल डिब्बियां,

सिन्दूर आदि वस्तुएं होती हैं। सौभाग्य द्रव जो भी हैं वे सभी वहाँ प्रस्तुत होते हैं। यह लक्ष्मी सिद्ध पीठ भी कहा जाता है।

१२—वनस्पति वृत्त

किसी शुभ अवसर पर बालिकाएँ, केले, आम, पीपल आदि सुन्दर वृक्षों की पत्तियों से या पुष्पों से अपनी कल्पना द्वारा यह वृत्त बनाती है। इसमें फूलों और दलों के ही आकार बनते हैं।

१३—धान वृत्त

वैदिक काल से ही धान्य या धान की प्रतिष्ठा हमारे यहाँ है, धाने के बीजों से जो वृत्त बनाया जाता है वह धान वृत्त कहलाता है। इसमें कंघी के काटों जैसे आकार बनाये जाते हैं। सूखे हरे किसी भी प्रकार के धानों के बीज इस कार्य में प्रयुक्त होते हैं।

१४—अनन्त वृत्त

यह एक कुहनी के ऊपर चाँदी, सोने या ताँबे के बने कंकणाकार रूप में पहने जाने वाले भूषण विशेष का द्योतक है। इसे कंकण वृत्त भी कहते हैं। इसी आकार को प्रमुखमान कर अनेक रङ्गों में इसे सजाते हैं। रोहिणी नक्षत्र पूजन में इसका प्रयोग होता है।

१५—पृथ्वी वृत्त

इसमें भगवती पृथ्वी अपने पति वराह भगवान के साथ अङ्कित होती हैं। इनके अधोभाग में एक गोलार्ध होता है, जो पृथ्वी का प्रतीक है। उसके नीचे विशेष रूप से कमल दल बनते हैं, उन पत्तों के डंठल का मूल पृथ्वी गोलार्ध के भीतर दिखाया जाता है। ६ अष्ट दलाकार पद्म भी उस गोलार्ध से सम्बन्धित होते हैं। पृथ्वी पूजन में अनेक दार्शनिक भावों की रागात्मकता इनसे स्पष्ट होती है। कमल का रूप यहाँ सौभाग्य, शांति और पवित्रता बोधक है।

१६—करुवा वृत्त

यह करुवा पूजने के समय बनता है, जिसमें लक्ष्मी की भावना है। इसके दो

Downloaded from www.dbraubhary.org.in

भाग हैं। निम्न भाग और ऊर्ध्व भाग। निम्न भाग में कमल के साथ बेल भी बनी रहती है, जो कि गृह प्रवेश द्वार के प्रारम्भ भाग से दोनों ओर बीच तक फैली होती है। ऊर्ध्व भाग में अष्ट दल कमल बनाया जाता है, जिसके चारों ओर बेल फैली दिखाई देती है और बीच में लक्ष्मी के चरण चिन्ह भी होते हैं। इसके बीच में यत्र हलास भी बनाये जाते हैं। करवा का पात्र पानी से भरा रहता हैं और उसके ऊपर आम के पत्ते रखे होते है। यह सौभाग्य और मंगल अवसरों पर भी बनाया जाता है। निम्न भाग में जल में उगने वाली लताएँ, दुपत्ती लताएँ भी सज्जित होती है। सितम्बर अक्टूबर के महीने में पूर्णचन्द के समय यह मनाया जाता है और वैसे तो यह साल में तीन बार मनाया जाता है। छोटे बड़े सभी अपनी सामर्थ के अनुसार इसे मनाते हैं। बान्धव प्रीति भोज भी इसमें होता है।

१७—सर्व देव प्रतिष्ठा वृत्त

इसमें सूर्य, चन्द्र, गङ्गा, यमुना, चक्की, पालकी, महल मुख्यद्वार, द्वारपाल, नारियल वृक्ष, पान का बगींचा, काजल लता, शृङ्गार सामग्री आदि प्रतीक चिन्ह बनाये जाते हैं। इनके साथ ही एक छोटे मुख की संडासी लिए हुए चिड़िया भी बनाई जाती है। बङ्गाल में इसका प्रचलन अधिक है। केले के वृक्ष, झाड़ू लगाती हुई दासी भी इसमें अङ्कित की जाती है। इन सबसे यह प्रकट किया जाता है कि महामाया हमें यह सब कुछ ऐश्वर्य दे।

१८—लक्ष्मी नारायण वृत्त

इसमें अनेक प्रकार के सौभाग्य द्रव्य अङ्कित होते हैं। इनके साथ ही सिंहासन पर लक्ष्मी नारायण विराज मान दिखाए जाते हैं। दो चिड़ियाएँ, चरण चिन्ह, लताएँ, फूल, फल आदि यथेच्छ सामग्री भी इसमें दिखाई जा सकती है। भोजन थाली, गिलास हार, बाजूबन्द, नथ आदि भी विशेष रूप से बनाये जाते हैं।

१९—हरिवंश वृत्त

यह अल्पना वंश वृद्धि के निमित्त बनाई जाती है। हरिवंश पुराण में वंश वृद्धि का भाव बताया जाया है। इस अल्पना में सूर्य, चन्द्र, तारा, कहीं-कहीं इन्द्र देवता का भी पूजन प्रयोग है। इसमें तारा विशेष का स्पष्टीकरण विशेष रूप से किया जाता है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

इसमें बहुत से बच्चों के साथ माता का आकार अङ्कित होता है, कुछ बच्चे गोद में कुछ पास खड़े, कुछ जाघों में बैठे दिखाये जाते हैं। इस अल्पना को अधिकांश रूप में नवोढ़ा स्त्रियां विशेष मनाती हैं। किसी अन्य देवता का प्रतीक भी इन उपर्युक्त देवताओं से पृथक बनाया जा सकता है।

२०—सुवासिनी वृत्त

(सरस्वती वृत्त) इस अल्पना में सुवासिनी देवी का भाव होता है। इसमें एक तालाब में हँस और सुवासिनी देवी का अङ्कन होता है। इस विषय में एक दन्त कथा है कि एक राजा के राज्य में किसी ब्राह्मण बालक ने एक हँस को राजा के तड़ाग में से पकड़ कर मार कर खा लिया। राजा ने इस अपराध में लड़के को बन्दी बना दिया, लड़के की माँ ने सुवासिनी देवी की आराधना की और उस अपने बन्दी पुत्र को छुड़ा दिया। सुवासिनी देवी ने प्रसन्न होकर राजा को एक स्वप्न दिया और उस मारे हुए हँस को पुन: जीवित कर राजा को दे दिया तथा राजा की लड़की का उस लड़के से व्याह करा दिया।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

२१—मनसा वृत्त

बङ्गाल में मनसा देवी की आराधना के लिए इसका प्रचलन है। बङ्गाली साहित्य सोलहवीं शताब्दी तक हँस मनसा देवी के मङ्गलों का गायन करता रहा। यन्त्र पूजा में भी मनसा देवी का अत्यन्त प्राधान्य है। मनसा सर्प देवी कहलाती है। यह पौराणिक पूजा है। वैदिक काल में भी इसके प्रसङ्ग पाये जाते हैं। मनसा देवी एक सुन्दर वस्त्रालङ्कार संयुक्त मानी जाती है। ८ या ४२ तक सर्प इसके आस-पास दिखाये जाते हैं। नाग देवेन्द्रों के आकार भी इसके साथ बनते हैं। इसके बनाने का आकार यह है कि एक दिव्य सुन्दरी स्त्री का अङ्कन कर उसके ऊपर छत्र रूप में अष्ट सर्प मूर्तियाँ बनाई जाती हैं। इसके चरणों के पास कमल पुष्प और अन्य इसके पूजा योग्य वस्तुएँ तथा सर्पों के योग्य वस्तुएँ बनाई जाती हैं। शृङ्गार की सारी सामग्री इसके साथ होती है। विशेष जो भी अन्य सजावट के उपकरण उनके हृदय से निकलें वे बनाये जा सकते हैं।

२२—लक्ष्मी जगन्नाथ वृत्त

इस अल्पना में भगवान विष्णु के शेषशायी रूप की कल्पना होती है। आषाढ़

के महीने में भगवान क्षीर सागर में सो जाते हैं। तभी उनकी प्रसन्नता के लिए इसका प्रयोग होता है। श्वसुर घर में सोये हुए भगवान की आराधना लक्ष्मी देवी के साथ होती है।

२३—इन्द्रपूजा वृत्त

इसमें इन्द्र देवता की पूजा भावना होती है। वर्षा के द्योतक होने के कारण इन्द्र का प्रिय अस्त्र वज्र इसमें विशेष रूप से अङ्कित होता है। वज्र ही इन्द्र का प्रतीक इसमें माना जाता है। इसकी कल्पना में आमने सामने दो वज्र बनाये जाते हैं जो कि कमल कुडमल की भाँति प्रतीत होते हैं। इनके ऊपर एक-एक तितली और एक-एक कीड़ा भी अङ्कित होता है। बीच के खाली स्थान पर मछली का आकार बनाया जाता है मछली का आकार अधिक वर्षा का द्योतक है। बङ्गाल की स्त्रियाँ इसे अधिक मनाती हैं। भाद्र पद शुक्ल पक्ष के १२ वें दिन इसका विधान होता है। यह सब एक ऊँचे लकड़ी के मंच पर बनाये जाते हैं। नृत्यगीत संगीत भी इसमें होता है।

२४—बहु मण्डल वृत्त

यह सर्व देव प्रतिष्ठा के भेदों में है। इसमें सूर्य, चन्द्र सप्तर्षि तथा कुछ विशेष ग्रहों के साथ इसका अङ्कन होता है। इसमें वर्षा देवता इन्द्र का भी अङ्कन होना आवश्यक है। विशेष पूजा सामग्री एवं शृङ्गार आदि के भूषण भी इसमें बने दिखाये जाते हैं। इन्द्र का अङ्कन सबसे ऊपर होता है, जिसके केश बिखरे दिखाये जाते हैं। नीचे पृष्ठ भूमि पर भक्तों का भी इन सभी अल्पनाओं के अतिरिक्त और भी कई अल्पना वृत्त जिन्हें ग्राम्य विस्तार भय से छोड़ दिया गया है भारत में प्रचलित हैं। इनमें आर्य संस्कृति की गम्भीर स्वच्छता एवं हिन्दू कर्म काण्ड की गहनता गुप्त है। हमारे देश का जीवन पर्वों और महोत्सवों में ही बीतता था, कला उनके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इन विभिन्न धार्मिक क्रिया कलापों में बिखरी थी यही स्पष्ट होता है। अल्पना भी हमारी कला का एक दार्शनिक आध्यात्मिक रूप स्पष्ट करती है। इसमें अध्यात्मतत्वों का मनोरंजनात्मक ढङ्ग से स्पष्टीकरण है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

अन्तः कक्ष प्रसाधन आकार

(Elements of Interior Designs)

इस प्रकार के आकारों को बनाने के लिए कलाकार को बहुत सी बातों की पूरी जानकारी रखनी आवश्यक है, उनमें चित्र, भवननिर्माण कला, प्रसाधन (Decoration) रंगाई प्रकाश एवं वातावरण का पूरा ज्ञान होना चाहिए। इन सबसे अन्तः कक्ष प्रसाधन आकारों द्वारा एक ऐसा वातावरण बनाया जा सके जिससे वाञ्छित उद्देश्य की पूर्ति हो जाय, अर्थात आकार कर्ता को इन सभी का विशेष ध्यान रखना चाहिए, केवल आकार निर्माण तक ही उसे सीमित नहीं रहना चाहिए। किसी अन्तः कक्ष को सजाने के लिए उसके भीतर रहने वाली सभी वस्तुओं का स्वाभाविक स्वरूप उपस्थित करना ही सच्ची कला है।

इसमें एक प्रश्न यह उपस्थित होता है कि इतने सूक्ष्म और कठिन आकार चित्रण को कैसे कला का जिज्ञासु हृदयंगम कर सकता है तो उसका उत्तर यह है कि कला के जिज्ञासु को सर्व प्रथम संवेदनशील होना आवश्यक है। सम्वेदना से ही वह प्रत्येक वस्तु के मर्म तक पहुँच पायगा। इसी संवेदनशीलता द्वारा वह किसी अज्ञात वस्तु को अवगत कर सकता है। उदाहरणार्थ यदि कोई व्यक्ति किसी भवन कला के रूप को देखता है और उसे स्वयं भवन निर्माण कला नहीं आती तो सर्व प्रथम उसे उस कला को अवगत करने के लिए सम्वेदन शीलता की आवश्यकता पड़ेगी। वह इसी के द्वारा भवन के झरोखे, खिड़की, ऊँचाई आदि विभिन्न अङ्गों के भीतर छिपी भावाभिव्यक्ति को जान सकेगा। यद्यपि भवन निर्माण ज्ञान किसी विशेष सूक्ष्म कार्यों के कारण कला के अन्तर्गत नहीं आता तब भी इन-इन सूक्ष्म मार्मिक भावाभिव्यक्तियों के ही कारण भवन निर्माण कौशल को भी कला में स्थान मिला है। भावाभिव्यक्ति का उद्देश्य यदि इस के द्वारा सफल नहीं होता तो यह किसी काम का काम नहीं। भावाभिव्यक्ति की सूक्ष्मता ही कला का सौन्दर्य है। अन्तः कक्ष प्रसाधन आकार एक कला है, जो सभी कलाओं से सम्बन्धित है, क्योंकि मूर्ति, चित्र, वस्तु, आदि में जो कुछ भी प्रसाधन सामग्री (Decorative elements) है उसे अन्तः कक्ष प्रसाधना करने वाले कलाकार को जानना आवश्यक है। अन्तः कक्ष प्रसाधना के लिए उपयुक्त किन्हीं मुख्य बातों पर हम क्रमशः विचार प्रस्तुत करेंगे, जिनमें पहले—Composition and proportion:—आते हैं जिनका स्पष्टीकरण रेखा स्थल,

Downloaded from www.cbraulibrary.org.in

रङ्ग और रीति द्वारा होगा। यद्यपि ये सब एक ही स्थल पर स्पष्ट करने योग्य हैं तथापि कला के विद्यार्थियों को और अधिक स्पष्ट बताने के लिए हम इन्हें क्रमशः लेंगे। यद्यपि इन सबका पृथक-पृथक निर्देश करने से ये हृयंगम हो सकेंगे तथापि इन सबका कला द्वारा समान-समवेत प्रभाव हम पर अथवा देखने वालों पर पड़ना चाहिए तभी इस अन्तःकक्ष प्रसाधन कला का उद्देश्य पूर्ण हो पाता है। भारतीय कला का दार्शनिक सिद्धान्त यही है कि अपूर्णता से पूर्णता में विलीन हो जाना अथवा एक से अनेक में विलीनीकरण, अन्त से अनन्त में समाजाना, विन्दुका सिन्धु में विलीन हो जाना: कला के ये सभी उपकरण अपने विभिन्न रूपों भावों और प्रतीकों द्वारा एक विराट् परिपुष्ट रसात्मक सौन्दर्य की अभिव्यक्ति कर पाते हैं, इनकी व्यक्तिगत एकता अनेकता की पुष्टि के लिए ही है।

आकार निर्माण क्रिया (Composition)

इसका अर्थ है किसी आकार को बनाने का ढङ्ग जिसमें रूप, रङ्ग स्थल आदि के साथ उपयोग, भावप्रकाश और सभी का एकीकरण आदि बातें आती हैं। आकार निर्माण क्रिया ही सारी आकार कल्पना में प्रधान है। इस क्रिया में विपरीत पदार्थ योजना आवश्यक है अर्थात् बड़ी सी खिड़की के पास छोटी खिड़की बना देना छोटे आकार के समक्ष बड़ा आकार बना देना जिससे दोनों का अस्तित्व संघटित हो सके। इसमें सावकाशता भी दिखानी आवश्यक है अर्थात् बहुत सी वस्तुओं को एक साथ दिखाने के लिए उनमें बीच-बीच में अवकाश (खाली स्थान) भी दिखाना होगा, क्योंकि इसके दिखाने का तात्पर्य होगा दर्शक की आँखों के लिए आराम। धिचपिच या ठूँसा ठूँस आँखें पसन्द किसी की नहीं करेंगी। उदाहरण के लिए यदि हम किसी मकान के भीतर की प्रसाधन क्रिया करें तो हमें वहाँ खिड़की के ऊपर कार्निस के पास, बड़े-बड़े दरवाजे ताख अलमारी इत्यादि का सामान्य प्रभाव दर्शक पर उपस्थित करने का प्रयत्न करना होगा। इसमें स्वाभाविकता, उचितता का भी ध्यान रहे, अनावश्यक कोई वस्तु उसमें न लाई जाय। इस क्रिया में ये सभी विशेषताएँ यदि न आयें तो यह सफल नहीं, इनका सबका उचित रूप में उपस्थित हो जाना ही इसकी सफलता है।

इनके अतिरिक्त एक जो सबसे बड़ी विशेषता इस क्रिया में होनी आवश्यक है वह है केन्द्रीकरण, अर्थात् जिस विशेष प्रयोजन सिद्धि के लिए अन्य सभी उपकरण जुड़ाए जाते हैं, उन सभी का किसी एक विशेष केन्द्र का आकर्षण बनाने के लिए वहाँ उपयोग हो। बहुत से उपकरणों का एकत्रीकरण इसलिए करते हैं कि उनसे कोई एक विशेष

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

केन्द्र तैयार होता है। आकार निर्माण क्रिया में यही विशेष ध्यान रहे कि उसका केन्द्र आकर्षण बन सके। उदाहरणार्थ हम प्राचीन काल के मन्दिरों को देखें तो हमें अवगत होगा कि उनके सजाने में लाल और सफेद रङ्गों का उपयोग विशेष होता है, और उनके बीच में काले रङ्ग या काली मूर्ति का विन्यास होता था। सफेद और लाल के बीच में रखा काला रङ्ग ही केन्द्र है। यह केन्द्र तभी चमत्कृत हो सकेगा जब लाल-श्वेत रङ्ग उसकी परिधि में हों।

इस क्रिया में इन सबके साथ सावकाशता, समानान्तर, सन्तुलनात्मकता तथा तारतम्य भी अपेक्षित हैं।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

समानान्तरता (Symmetry)

जब कभी किसी वस्तु को हम देखते हैं तो उसके दोनों पार्श्वों को समानान्तर भाग में हम पाते हैं अर्थात् उस वस्तु के दोनों हिस्से एक ही अन्तर पर होते हैं, यदि ऐसा न हो तो वस्तु एक ओर कम और दूसरी ओर अधिक होने के कारण कुरूप होगी। दोनों ओर दो नेत्र ठीक रहने से दोनों में समानान्तरता दीखती है यदि एक नेत्र बन्द हो तो चेहरे की समानान्तरता नष्ट हो जाती है। अन्तः कक्ष प्रसाधना में यही समानान्तरता होनी चाहिए।

सावकाशता (Balance)

दो समानान्तर वस्तुओं को ठीक सा रखने के लिए उपयुक्त सावकाशता पर रखना होता है। विरोधी प्रकृति की वस्तुओं को एक साथ तभी रखा जा सकता है जबकि दोनों के बीच एक सावकाशता रखी जाय। इसी सावकाशता से समानान्तरता सुन्दर लगती है। आलेख्यों में सावकाशता से ही तो पदार्थ पृथक्-पृथक् दिखाये जा सकते हैं। तारतम्य, (Rhythm) भाव प्रकाशन का जो अटूट प्रवाह आदि से लेकर अन्त तक दिखाई देता है वह तारतम्य कहलाता है, बिना तारतम्य के आलेख्य पूर्ण नहीं।

सन्तुलनात्मकता (Contrast)

यह भी आलेख्य का अत्यन्तावश्यक अङ्ग है, इसके बिना चित्र के विविध भाव स्पष्ट नहीं हो सकते। दो या अधिक विपरीत या विभिन्नताबोधक पदार्थों को एक साथ

रखने का नाम सन्तुलनात्मकता है। छोटे के पास बड़ा, लाल के पास सफेद रङ्ग, सीधे के पास टेढ़ा, सुन्दर के पास असुन्दर बताना ही सन्तुलनात्मकता है। ऊपर अङ्कित आकारों में सन्तुलानात्मकता अच्छी स्पष्ट हो गई है, क भाग में जो आकार है उसी के विपरीत ख, ग, घ में क्रमशः विपरीतता दृष्टिगोचर होती है। इन सभी को परस्पर न्यूनाधिक रूप में देखने का नाम सन्तुलात्मकता है। क में अङ्गों की पूर्णता है, ख में वह भरावट कम हो गई, 'ग' में पूरे कोष्ट भरे हैं 'घ' में केवल एक ही कोष्ट कुछ भरा है। इनसे इनका पारस्परिक अन्तर हो जाता है।

ऊपर हमने जो कुछ लिखा है उससे स्पष्ट हो गया कि आलेख्य वस्तु में कितने अङ्ग हैं और इनमें से किसी एक की भी यदि न्यूनता आ जाय तो आलेख्य पदार्थ का आकार भद्दा हो जायगा। अन्तः कक्ष प्रसाधना में इनका पूरा उपयोग होना चाहिए।

ऊपर हमने भित्ति चित्रण का स्पष्टीकरण दिया है अब द्वार चित्रण के आलेख्य पर प्रकाश डालेंगे जो प्राचीन काल में केलों के पत्रों द्वारा बनाये जाते थे। मंगल घटों के साथ इन द्वार चित्रणाओं में हम देखेंगे कि उपर्युक्त आलेख्य विशेषताएँ इनमें कहाँ तक आ पाई हैं।

उपर्युक्त सभी आलेख्यों का हम क्रमशः स्पष्टीकरण देना आवश्यक समझते हैं। पहले में सीधी रेखाओं से आलेख्य को सजाया गया है। इनमें सावकाशता के साथ-साथ पुनरावृत्ति भी है। परन्तु यह आकार उतना सौन्दर्य नहीं देता जितना आवश्यक है, स्थान की न्यूनता का भी इसमें आभास खटकता है। दूसरे आलेख्य में स्थानन्यूनता तो उतनी नहीं खटकती फिर भी भला नहीं लगता। तीसरे में सीधी रेखाओं की अपेक्षा गोल रेखाओं का उपयोग है परन्तु इसमें और भी अधिक सौन्दर्य दुर्बलता प्रतीत होती है। चौथे में सावकाशता तो तीनों की अपेक्षा अधिक प्रतीत होती है परन्तु अन्तः सौन्दर्य की झलक इसमें भी नहीं। पाँचवें में हमने सावकाशता अधिक पाने के कारण बीच में एक और द्वार रेखा बोधक चिन्ह बना दिया इससे इसका सौन्दर्य और भी कुण्ठित हो गया। छठे में छोटे बड़े रूप की सन्तुलनात्मकता तो है परन्तु इसकी इसमें आवश्यकता ही प्रतीत नहीं होती। सातवें में सन्तुलनात्मकता तथा कार्निस द्वारा सौन्दर्य तो सभी थोड़ा बहुत बन ही गया परन्तु पूरा सौन्दर्य इसमें भी नहीं आया है। मानाकि इन सब आकारों में हमने आलेख्य अङ्गों को लेने का प्रयत्न किया फिर भी सौन्दर्य की पूर्णता दिखाने के लिए किसी भी निश्चय नियम की आवश्यकता नहीं होती। सौन्दर्य किसी एक के अभाव में भी यदि झलक

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

सकता है तो झलक सकता है। आठवें में अजन्ता शैली के रूप को सुन्दरता से प्रस्तुत करने का प्रयास है, परन्तु इस आलेख्य में स्थान के अनुकूल वातावरण बनाने के सभी अङ्ग होने पर भी सौन्दर्य की पूर्णता नहीं। तात्पर्य यह है कि आलेख्य में सौन्दर्य प्रस्तुत करने के लिए केवल नियम पालन अथवा नियमोल्लघन ही आवश्यक नहीं अपितु आवश्यकता इस बात की है कि उसमें दोनों स्थितियों में सौन्दर्य भावना का तथा आलेखन के उद्देश्य का स्पष्टीकरण हो जाय। ये सभी स्वतन्त्र शैली के आलेख्य कहलाते हैं।

नवें आकार में स्वतन्त्रशैली का कुछ उल्लंघन है। उसे रीति बद्ध करने का प्रयत्न किया गया है, जिससे एक भाव तथा सौन्दर्य स्पष्ट हो जाय। तिब्बती लोग पूजा में झंडियाँ टाँग लेते हैं। इस में रीति बद्धता के कारण कुछ विशेष भाव तथा सौन्दर्य का स्पष्टीकरण हो गया है। आलेखन का अभिप्राय यह नहीं कि उसमें कोई वस्तु बड़ी बनाकर दिखाने से ही सौन्दर्य आता है। या किसी वस्तु के नाना रूपों को खिलवाड़ सा बना प्रस्तुत किया जाय अपितु किसी भी वस्तु के आलेख्य से उसमें सौन्दर्य और आलेखक का उद्देश्य स्पष्ट हो जाना चाहिए।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

अंश कल्पना या (Proportion) विभाजन

आलेख्य में भाव प्रकाशन के लिए अनेक अंश या भाग होते हैं। कार्निस, खिड़की प्लास्टर, तसवीर टांगने की पंक्ति आदि कई बातों का इसी विभाजन से पता चलता है। विभिन्न वस्तुओं को सजावट में कहाँ कहाँ ठीक रखा जाय यही सब आलेखक को अंश कल्पना द्वारा किसी अन्तःकक्ष प्रसाधना में समझनी चाहिए। अन्तः कक्ष प्रसाधना में कलाकार और प्रसाधना कराने वाला दोनों को इन सब का ध्यान रखना चाहिए कि कहाँ क्या वस्तु हो। भव्यता और सुन्दरता में दोनों ही अन्तः कक्ष प्रसाधना के लिए केन्द्र हैं, इन दोनों के लिए ही सब आलेख अंग हैं।

पुनर्नवीकरण (Patterns)

सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के लिए अनेक साधन हैं, परन्तु उन सबका पुनर्नवीकरण आलेख का एक आवश्यक अंग है। जाने अनजाने में हमें कल्पना द्वारा जो सौन्दर्य अनुभूति या विचार अपने में दीखता है, उसका औचित्यपूर्ण ढङ्ग से प्रकाशन हम आलेख्य की उन सभी बार-बार प्रयुक्त होने वाली रेखाओं द्वारा करते हैं जो कि अपनी समुचित प्रबन्धा-

मयकता से सौन्दर्य को एक तरह सजीव कर देती है। इसी समुचित सौन्दर्य की पुनः पुनः रेखाओं द्वारा होने वाली अभिव्यक्ति को पुनर्नवीकरण कहते हैं। ये रेखायें अङ्गों की रमणीय चेष्टाओं को बताते हैं जिन्हें अङ्गरेजी में पोज या गेश्चर कहते हैं; साहित्य के शब्दों में इन्हीं को कायिक अनुभाव कहा जाता है। ये सभी हमें परम्परा द्वारा अपने मानव समाज से मिलते हैं। इन रमणीय रेखाओं द्वारा आलेख्य वस्तु के मनोविज्ञान, शक्ति, कार्य, तर्क, वितर्क आदि अनेक आन्तरिक तथा वाह्य ज्ञातव्य बातों का ज्ञान हो जाता है। यहाँ तक कि उनके आचार विचार भी इन्हीं से स्पष्ट हो जाते हैं। इन्हीं से प्राचीन इतिहास और संस्कृति का क्रमिक विकास भी झलकता है। इसीलिए कहा जाता है कि इन्ही रेखाओं से किसी देश या व्यक्ति की मौलिकता स्पष्ट हो जाती है। यही पद्धति कलाकारों द्वारा अपनाई गई है। प्रत्येक ललित कला में—सङ्गीत, नृत्य, चित्र, वस्तु, काव्य चाहे कोई भी हो यह परम्परागत मौलिकता रेखाओं द्वारा स्पष्ट होती है।

इस पुनर्नवीकरण की विशेषता राजपूत शैली की आलेख्य कला में मिलती है। रङ्ग की विशेषता हमारे यहाँ काश्मीर के शाल-दुशालों में पाई जाती है। इस बीसवीं शताब्दी से एक और शैली आकार कल्पना में आगई है और वह है प्रभाववादी चित्रण शैली। यह विदेशी कला से आई है, इसके प्रवर्तक फ्रेंच कलाकार सीजां है। इस प्रभावशाली चित्रण में रंग, रेखा छाया प्रकाश आदि कुछ भी नहीं रह गया है, जो कि सच पूछा जाय तो आकार, रंग, ढाँचा आदि सभी चित्रकला के विशेष अङ्ग हैं। इसी प्रभाववादी चित्रण शैली ने आचार विचार सम्बन्धी द्योतक विशेषताएं भी समाप्त करदी हैं। अब इस बीसवीं सदी की चित्रण शैली में जैसे-तैसे की ही प्रधानता रह गई है। अर्थात् कला को शास्त्रीय सौन्दर्य से मुक्त कर व्यक्ति विशेष की रुचि पर बैठा दिया गया है। यह प्रभाववादी चित्रण की शैली की मुख्य विशेषता है।

आचार विशेष का स्पष्टीकरण कला द्वारा ही करना आलेखक का मुख्य कार्य जब हम मान बैठे हैं तब उसमें किसी अन्य देश की रीति एवं व्यक्तित्व का स्पष्टीकरण मूल रेखाओं द्वारा ऐसे हो जिसमें कलाकार के व्यक्तित्व की अवधारण शक्ति भी लक्षित हो। इसीलिए प्लेटो ने कहा है कि सौन्दर्य उस वस्तु का नाम है जो हमारे भाव जगत में प्रत्यक्ष रूप से ऐसे झलके जिसमें औचित्य, नियमितता, सुप्रबन्धता और अनुभूतिमत्ता सब एक साथ हों और साथ ही मस्तिष्क का अपूर्वग्राहक गुण (Beauty) भी उसमें हो। हमारा हृदय प्रियता को पाता है और मस्तिष्क सौन्दर्य को पहचानता है। विषय बोध

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

से होने वाला हृदय का सन्तोष मस्तिष्क द्वारा ही उत्पन्न होता है। आचार का स्पष्टीकरण इसीलिए कला में अपेक्षित है कि उससे हमारे मस्तिष्क को एक चेतना-गति मिलती है। पुनर्नवीकरण में आचार प्रतिपादक क्षमता ही चित्र या आलेख्य में देवत्व की प्रतिष्ठा करती है और यही हमारे बौद्धिक धरातल को जागृति देने वाली है, इसमें ऐन्द्रिक भूख मिटाने की क्षमता भी होती है परन्तु मुख्यतः उसका कार्य हमारे बौद्धिक धरातल में देवत्व की प्रतिष्ठा करना है। जीवन में बहुत से क्षण ऐसे आते हैं जबकि हम आलेख्य द्वारा अपने जीवन के मौलिक-नैतिक रूप को प्रत्यक्ष रूप में लाते हैं। भारतीय कला की यही विशेषता है कि उस में अन्तर्जीवन के उन सूक्ष्म आकर्षणपूर्ण सौन्दर्य केन्द्रों को प्रत्यक्ष कराया जाता है जो हमें देवत्व की आनन्दमयी भूमिका तक ले जाते हैं। विश्व का क्लेश सन्ताप तब हमें नहीं व्यापता। अजन्ता, अलोरा और एलीफेन्टा के गुहाचित्र इसी के द्योतक हैं कि उनमें भी अन्तः कक्ष प्रसाधना द्वारा सांस्कृतिक दृष्टि से भारतीय आचार विचार का ही आलेखन है। हो सकता है कि कोई पाठक हमारे इन विचारों से सहमत न हों तथापि अपने दृष्टिकोण से तो हम यही समझते हैं कि इन चित्रों को गुहाओं के भीतर बनाने में और क्या उद्देश्य हो सकता है। इनके अनन्तर पाये जाने वाले गुप्त काल के अन्तः प्रसाधना में आकर्षण तो है परन्तु इन चित्रों की अपेक्षा सौन्दर्य कम है। अन्तः प्रसाधना में आलेखक के उद्देश्य की पूर्ति तथा तत्सम्बन्धित वातावरण एवं प्रभावात्मकता अवश्य आजानी चाहिए। सांस्कृतिकता तो इस प्रकार के आलेखन का प्राण ही है। विश्व-भर के अन्तः कक्ष प्रसाधना को यदि देखा जाय तो सबमें एक आन्तरिक अभिन्नता दिखाई देती है। सबका उद्देश्य एक है, उपकरण और शैलियां निःसन्देह पृथक-पृथक हैं। अन्तः कक्ष प्रसाधना के सभी अङ्ग और उपयोगिता बोधक उपकरण प्रत्येक देश की आवश्यकताओं के अनुसार पृथक-पृथक हो सकते हैं, परन्तु उन सबका भीतरी लक्ष्य एक है। विशेषतः अन्तः कक्ष प्रसाधना में रङ्ग वैषम्य भी एक आवश्यक अङ्ग है। रङ्ग वैषम्य से तात्पर्य है अनेक रंगों का सुन्दरता लाने के लिए उपयोग। रंग योजना इस प्रकार से इसमें होनी चाहिए कि आँखों को एक प्रकार से अपार सन्तोष मिले।

स्तर का महत्व

अन्तः कक्ष प्रसाधना में स्तर का भी अपना महत्व है। जब तक आलेखक को स्तर का ज्ञान ठीक नहीं तब तक प्रसाधन कार्य ठीक नहीं होता। कौन से आलेख के लिए किस प्रकार का स्तर (Texture) आधार चाहिए, यह पहले आलेखक को भली-भांति

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

जान लेना चाहिए। कौन सा आकार कहाँ किस स्तर पर बन सकता है, यही जानना स्तर ज्ञान है। स्तर ही विशेष-विशेष भाव और प्रभाव को डालने की क्षमता रखता है। बौद्धिक और भावात्मक दोनों जागृतियाँ भी आलेखन को इसी स्तर द्वारा प्राप्त हो सकती हैं। वैसे तो अन्तः कक्ष प्रसाधना में भित्ति चित्रणा भी आती है, परन्तु उसका विषय अन्तः कक्ष प्रसाधना से कुछ अलग है। इसलिए हम उसके विषय में इस प्रसंग पर कुछ न कहेंगे परन्तु इतना अवश्य कहेंगे कि भित्ति चित्रणा (Mural decoration) में भी अनेक देशवासियों ने अपने-अपने अनुभव और बौद्धिक संस्कारों के आधार पर अनेक ढङ्ग से स्तर बनाये हैं, जिनमें उनके जातीय जीवन के सम्पूर्ण सांस्कृतिक इतिहास का स्पष्टीकरण होता है। अन्तः कक्ष प्रसाधना में इस प्रकार जातीय चेतना, व्यक्तित्व की अभिव्यंजना और आचार विचार का प्रत्यक्षीकरण होता है और आलेख्य के इतिहास बनाने में इसका अपना अलग महत्व और स्थान है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

आकार कल्पना का विश्व-प्रिय रूप

आकार कल्पना का यदि हम विश्व कायक रूप देखें तो हमें यह सहज ही में अवगत हो जायगा कि इस प्रकार की कला ने संसार के बहुत से देशों को विमुग्ध किया, और वहाँ के लोक-जीवन में अपना महत्व-पूर्ण स्थान बनाया।

चीन में इस प्रकार की कला का विवरण वहाँ के प्राचीन धर्म-ग्रन्थों में पाया जाता है। ईसा की पहली शताब्दी में जब वहाँ हंस संस्कृति का शासन था उस समय कलात्मक उन्नति में कपड़े के ऊपर बनने वाले आकार चरमोत्कर्ष पर थे। (कुछ लोगों के मतानुसार इस चीन की आकार कल्पना पर ईरानी प्रभाव भी था। यद्यपि मौलिकता में चीन बढ़ा चढ़ा था)। इधर जापान में भी आकार कल्पना के प्राचीन रूप मिलते हैं, जिन्हें चीन का ही प्रभाव माना जाता है। चीन जापान की आकार कल्पना में एक प्रकार से एकत्व है, क्योंकि चीन के ही कुछ जुलाहे ईसाई युग में जापान जाकर बस गए थे, इन्हीं से वहाँ की आकार कल्पना प्रभावित हुई। चीन, जापान की प्राचीन आकार कल्पना यद्यपि प्रतीकात्मक (Symbolic) थी जो कि अब तक चली आ रही है फिर भी उसमें फूल, पत्ते, चिड़ियाँ, पशु तथा अपनी मौलिकता लिए प्राकृतिक दृश्य-चित्रण भी है। इस आकार कल्पना की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें कार्य भार देखने में नरम लगता है, किन्तु उन रेखाओं को बनानें के लिये चिन्तन शक्ति बड़ी तीव्र और गहरी होती है जो सम्पूर्ति Finishing touch में सुन्दर उभार दे देते हैं। साटन के कपड़े पर इनके छपे आकार अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं।

दूसरी ओर यूरोप में भी आकार कल्पना का एक अपना विमोहक इतिहास है। यहाँ सर्वप्रथम ग्रीक संस्कृति के लोगों ने इसे अपनाया। जैसा कि इतिहासकारों का कहना है कि सभ्यता के प्राचीन केन्द्र मिश्र, बेबीलोन, यूनान रहे हैं, और यहीं से आकार कल्पना विशेष उन्नति पर थी। रोम में यूनानी प्रभाव से आकार कल्पना का कार्य गिरजाघरों में तथा अन्य सामाजिक भवनों में पूर्ण विकसित रूप में मिलता है। अङ्गरेजी तथा इटालियन लोगों की अभिरूचि इसमें बहुत बाद में हुई। फ्रेंच लोग इसमें कुछ नवीनताएँ लाए। रेखा चातुरी इनकी प्रमुख विशेषता थी। स्पेन में आकार कल्पना प्रसाधनात्मक शैली (Decorative Style) में पाई जाती है। वह हमारे सिन्ध, काठियावाड़ और कच्छ की आकार कल्पना से साम्य रखती है। जर्मनी ने इस क्षेत्र में कोई विशेष रुचि नहीं

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

दिखाई। जो भी वहाँ इस दिशा में मिलता है वह ईसाई धार्मिक ढङ्ग का कार्य मिलता है। स्कैंडीनेविया ने ज्यामितिक आलेखों का विकास किया जो अपने ढङ्ग के निराले हैं और उनमें श्रम-तल्लीनता विशेष होती है। इनके अतिरिक्त जो आकार मिलते हैं उनमें ग्राम्य जीवन एवं शीत प्रदेश के जीवन से सम्बन्धित आकार मिलते हैं।

इसी प्रकार अरब का भी आकार कल्पना सम्बन्धी इतिहास अपना अलग है। सन् ७१६ में अरब के खलीफा के सिपहसालार मुहम्मद बिन कासिम ने सिंध के राजा दाहर पर आक्रमण किया। इसके बाद तो लगातार पश्चिमीय भारत उनके आक्रमणों से आक्रान्त रहा और बहुत से प्रदेशों पर तो इनका अधिकार हो गया। फलस्वरूप बहुत से लोग इन भूखन्डों में अरब से आकर बस गए। इसी कारण हमारे तथा वहाँ के आकारों में पर्याप्त साम्य पाया जाता है। तुर्किस्तान में भी स्केन्डीनेविया की भाँति ज्यामितिक आलेखों का बाहुल्य है। तुर्किस्तान में मानव, पशु, पत्ते, फूल आदि के आकारों के घने चित्रण चटख रङ्गों में मिलते हैं। इनका प्रभाव भारतीय काश्मीरी आकारों पर अधिक पड़ा। रङ्ग योजना यदि यह कहा जाय कि वहीं की है तो यह अनुचित न होगा।

भारतीय आकर कल्पना के विषय में अब हमें कुछ बताना है। साधारणतः विशाल दृष्टि कोण से पहले हम इस विषय में बता चुके हैं। अब प्रत्येक प्रान्त की आकार कल्पना के विषय में हम उनकी प्रमुख विशेषताओं सहित कुछ बतायेंगे। आकार कल्पना का वैदिक काल में अपने यहाँ पूर्ण विकास था। रामायण महाभारत काल तक भी आकार कल्पना अपने उत्तरोत्तर चरमोत्कर्ष को तत्कालीन मानव भाव-धाराओं को अपने में केन्द्रित करती नदी प्रवाह की भाँति आगे बढ़ती रही। चीनी यात्री मेगस्थनीज ने यहाँ की मल-मल के ऊपर बने आकारों का सुन्दर उल्लेख किया है। गुप्त काल भारतीय संस्कृति का स्वर्ण युग माना जाता है। इसी युग में साहित्य और इतर कलाएँ अपने चरमोत्कर्ष पर थी। हर्ष तथा कालिदास आदि कवियों के ग्रन्थों में भी आकार कल्पना के उल्लेख पाये जाते हैं। महाकवि बाण के हर्ष चरित गद्य ग्रन्थ में लिखा है कि हर्ष वर्धन महाराज की धोती पर बत्तखों की कसीदाकारी थी। हर्षवर्धन की अन्तःपुर की स्त्रियों तथा सामन्तों के सुसज्जित वस्त्रों का वर्णन आकार कल्पना के उदाहरण हैं। उन पर फूल, चिड़ियाँ, बादल, आदि के रूप प्रसाधनात्मक (Decorative Style) में थे। उन पर स्वर्ण जटित पुष्पों की आकार कल्पना प्रसिद्ध है। बनारसी साड़ियाँ, हैदराबाद के हेमरू, काठियावाड़ और उदयपुर के दुपट्टे, काश्मीर के शाल, मिर्जापुर के कालीन सुन्दर आकार कल्पना के रूप हैं। सबकी अपनी एक विशिष्ट परम्परा है। यह आकार कल्पना भारत के प्राचीन

कलाकारों के (Records) हैं जो उनकी कला साधना के उत्कर्ष को बताते हैं। वे अपने समय के रचनात्मक रूपों के सफल तथा उपयोगी कलाकार थे। ये सभी उनके व्यक्तिगत जीवन को स्पष्ट करते हैं। आज इसके प्रति सम्पूर्ण संसार में एक प्रकार की जागरूकता दिखाई पड़ती है और इसके लिए अनेक सङ्गठनों के प्रयत्न हो रहे हैं। भारतीय कलाकारों ने अपने समय के आदर्शों तथा उद्देश्यों के साथ भारतीय संस्कृति का चरमोत्कर्ष अपनी इन रचनाओं में स्पष्ट किया। यह हमारे यहाँ ही पुराकाल से नहीं चली आ रही है अपितु सम्पूर्ण विश्व में इसके प्रति तीव्र रुचि पाते हैं। प्राचीन काल के लोगों का जीवन यद्यपि बाह्य रूप से इतना सुखी एवं बाह्य सौन्दर्यपूर्ण नहीं दिखाई देता फिर भी धार्मिक एवं आध्यात्मिक विश्वासों की छाप लगाकर उन्होंने आकार कल्पना के व्यापक सौन्दर्य का परिलक्षण किया था। उत्तर माध्यमिक काल में भारतीयों ने अपने मुसलमान तथा अङ्गरेज शासकों को सङ्गमरमर पर, लकड़ी के बक्सों पर, कपड़ों पर एवं अन्य धातुओं पर बने आकार भेंट रूप में देकर उन्हें भारतीय कला के प्रति आकृष्ट किया। वे सुन्दर कलायें आज भी अजायबघरों में सुरक्षित मिलती हैं। अपने पूर्वजों को आज के विकासशील साधक जङ्गली और असभ्य मानते हैं, किन्तु उनकी आकार कल्पना में पाये जाने वाले रूप, विचार, भाव, आकाक्षायें, तथा प्रवृत्तियाँ हमें यह बताती हैं कि वे पर्याप्त कला साधक थे। उनकी साधना मौलिक थी। वह समस्त जाति एवं संस्कृति का प्रतीक थी, उस समय के एक साधक में सम्पूर्ण जातीय संस्कृति बोलती थी। वह साधक केवल अपने ही लिए नहीं प्रत्युत सम्पूर्ण जाति के लिये साधना करता था।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

इस प्रकार की पावन कला साधना भारत में एक ओर जातीय जीवन और दूसरी ओर कलाकार के व्यक्तिगत जीवन दोनों का समन्वय करती हुई लोकोत्तर आनन्द एवं मंगलमयी वर्षा करती हुई अनादि काल से चली आकर आज भी जीवन्त है। जीवन की अखन्ड एकता का स्वरूप उसकी प्राण शक्ति है। हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ो के शेषांश इसी का एक उदाहरण है। आज हम गौरव के साथ उसका उल्लेख कर सकते हैं और इससे भी अधिक गौरव हमें तब होता है जब उस समय के अति साधारण गृहस्थ अथवा नागरिक के घर में भी कला की ऊँची से ऊँची कृतियाँ मिलती हैं। आज हम उनका अनुकरण न करें पर शक्ति, बल, प्रेरणा तो प्राप्त कर ही सकते हैं। आज की कला आवश्यकताओं में हमें पुराकालीन भारत की इन साधनाओं से पर्याप्त प्रेरणा एवं सुझाव मिलेंगे। जीवन की कलात्मक साधना में प्रगतिशील बनने के लिए हमें प्राचीन को भूल न जाना होगा।

केवल प्राचीन पर निर्भर रहना भी आज के जीवन के लिये पर्याप्त नहीं। उसमें नये-नये प्रयोगों का उपक्रम अनिवार्य है।

इस यंत्र युग के वैज्ञानिक प्रभाव से आज हमारी आकार कल्पना की समाप्ति सी हो रही है। इस युग में मशीन ने उपयोग को अपनी उत्पादन अधिकता से इसे हल्का कर दिया है। उत्पादन अधिक और सौन्दर्य मापदण्ड कम के ही कारण आज कला के प्रति लोगों में वह रुचि नहीं रही जो पहले थी। औद्योगिक क्रान्ति में एक ही वस्तु की सहस्त्रों, सैकड़ों लक्षों आकार देकर व्यक्तिगत परिश्रम सन्तुलन एवं क्रय-विक्रय के लिये होने वाले प्रयत्न की इति श्री करदी। पूर्व काल में एक व्यक्ति आकार कल्पना, रङ्ग योजना प्रसाधना तथा उसके लिए पण्यविधि में जाना इत्यादि सभी कार्य करता था, वह पूर्ण शक्ति लगाकर अपनी कला को जन-जीवन तक पहुँचाता था। कलात्मक निर्माण रुचि रखने वाले कुछ ही लोग होते हैं और अधिक संख्या कलाप्रिय ग्राहकों की होती है। इसीलिए कला का कुछ दिनों व्यक्तिगत मूल्य बहुत था जो आज विनष्ट हो गया है। ऐसी कला के अवशेष आज दयनीय रूप में हमें अजायबघरों में ही मिलते हैं।

अब हम उपर्युक्त कथन को प्रबल प्रमाणों द्वारा पुष्ट करने के लिये क्रमशः उन स्थानों का उल्लेख करेंगे जहाँ आज भी प्राचीन आकार कल्पना का भंडार सुसज्जित है।

१. **अजन्ता:**—यहाँ प्रागैतिहासिक काल से लेकर ईसवी सन् ५० तक जो आकार कल्पना मिलती है उसमें अलंकारिकता को किस प्रकार दिखाया गया है, उसके लिखने में असमर्थ हूँ। इनमें प्राकृतिक वस्तुओं को इतनी दक्षता के साथ प्रस्तुत किया गया है कि उन्हें देखकर हम सहज ही में प्रभावात्मकता सूक्ष्म सौन्दर्य एवं कल्पना-चातुर्य का अनुभव कर लेते हैं। अजन्ता के चित्रों की अनुकृति करने वाले प्रसिद्ध यूरोपियन कलाकार श्री ग्रिफिथ ने अपनी पुस्तक में इस अजन्ता आकार कल्पना की बड़ी महिमा गाई है और विशेष कर उन्होंने कहा है "अजन्ता के चित्रों का अनुकरण करने में जब इतना आनन्द मिला तो बनाने वालों को कितना आनन्द मिला होगा? वह कितना महान होगा जिसने पृथ्वी पर इतना मादक-आकर्षक कल्पना विधान उतारा?" जौर्ज वाट्स ने भी इसके लिये कहा था—"हम लोग मिश्र, यूनान और चीन की आकार कल्पना के बारे में बहुत कुछ अनुमान लगाते थे परन्तु अन्जता की आकार कल्पना तो इनसे भी कई गुणा बढ़ी चढ़ी है। इतने बड़े भवन में इतने सूक्ष्म आकार प्रस्तुत किये हैं कि उन्हें देखने वाला और समझने वाला ही उनके महत्व को समझ सकता है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

उनके कोट तथा पगड़िएँ फारसी ढङ्ग की हैं। मोजों और जूतों पर लहरियेदार पट्टी, फल, फूल, नाचते गाते मदिरा-पान करते हुए लोगों के अङ्कन है। चिड़ियां कमल के साथ इस प्रकार बनाई गई हैं कि वे सजीव उड़ने को प्रस्तुत सी लगती हैं। बैल, हाथी, बन्दर, तोते, बत्तखों आदि के आकार सभी सौन्दर्य विधानात्मक शक्ति से बनाये गये हैं। कहीं पूरा खिला हुआ कमल का फूल, कहीं कली और कहीं अधखिली कली, कहीं अनन्नास और कहीं आम, सभी सजीवता से अङ्कित हैं (प्लेट नं० १ और २)। हम इन आकारों की ऊँचाई का अनुमान नहीं लगा सकते।

बौद्ध भिक्षु यद्यपि संसार त्यागी थे किन्तु जीवन की पूर्णता एवं अखण्ड आनन्द के भोक्ता थे। संसार के सभी अनुभव उन्हें ज्ञात थे किन्तु उनकी दृष्टि सदैव ही निर्लेप रही 'पद्म पत्र इवाम्भसा' की रूढ़ोक्ति उन्होंने चरितार्थ की। अपने इसी जीवन-दर्शन के अनुसार उन्होंने आकारों में कमल को मुख्यता दी। जहाँ कहीं भी देखो छत पर, दीवार पर, या स्तंभों पर कमल की ही प्रधानता है। रंगाई के क्षेत्र में ही नहीं, अपितु खुदाई के क्षेत्र में भी उन बौद्ध कलाकारों ने अपना जीवन उतारा है। उड़ती हुई अप्सराओं के आकार जैसे रङ्गों में उभरे हैं उसी प्रकार पत्थरों में भी, मनुष्यकारों में उन्हें यक्ष अति प्रिय थे। खम्भों के उपरी हिस्सों में सब जगह वे ही मिलते हैं।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

हास्य की सृष्टि के लिए अथवा मैं कहूँगा किसी रङ्ग विशेष के कम प्रयोग के लिये राज वर्ग के सेवकों में बौनों को बहुधा स्थान मिला है। नर्तकियों के कपड़ों पर पहियों वाला आकार और बौनों के छत पर के आकार वर्तुलाकार और कहीं कहीं चौकोर भी हैं। उनकी रङ्ग योजना में हरा, पीला, लाल और सफेद अधिक है। हरा रंग इतना गहरा और चमकदार है कि उससे सहज ही मखमल का भान होता है।

स्तम्भों के निचले भागों में फलों के आकार हैं, कहीं-कहीं उन्हीं से अमानवीय आकार की सृष्टि भी की गई है। गुफ़ाद्वार के दोनों ओर तथा ऊपर मनुष्याकारों का प्रयोग मिलता है, जिन कुछ स्थानों पर पुनरावृत्ति भी मिलती है।

२. उड़ीसा :—अच्छी आकार कल्पना के लिए भुवनेश्वर तो प्रसिद्ध है ही, इसके साथ पुरी कोणार्क, लिङ्गराज में भी अच्छी आकार कल्पनायें मिलती हैं। उड़ीसा की आकार कल्पनाओं में कल्पना की जितनी उड़ान मिलती है उतनी किसी अन्य स्थान में नहीं। एक साधारण सी वस्तु का इतना आलङ्कारिक रूप मिलता है कि देख कर आश्चर्य

होता है। घड़ों और उनपर रखे दियों का साधारण सा आकार शंख और शंख प्रसूत लता का आकार इस कथन की पुष्टि करते हैं। पुरी में मूर्ति सौन्दर्य विधान विशेष है, उनमें गुप्तकाल के कलाकारों की सी सांस्कृतिक भावनायें विशेष मिलती हैं। कोणार्क के आकारों में सूर्य देव के रक्ष का रूप अद्भुत है। अजन्ता आदि गुफाओं में जानवरों के आकार मिलते हैं किन्तु सौन्दर्य वृद्धि के लिए उनके वास्तविक स्वरूप का जितना विघटन उड़ीसा के आकारों में मिलता है शायद अन्य कहीं नहीं मिलता (Plate No. 1) फर्गुसन साहब के अभिलेखों में कोणार्क की आकार कल्पना अद्वितीय बताई गई है। लिंगराज के आकारों में जानवरों के जोड़ तोड़ विशेष कुशलता से बने हैं। ये ज़मीन के ऊपर बने हैं। अनन्त वासुदेव आदि लिंगराज के पड़ोसी मन्दिरों में झाड़-फूल, फल और लता जो यूनान की विशेषता थी वह मुख्य है। इनकी झालरदार आकार कल्पनायें प्रसिद्ध हैं। इसी सम्बन्ध में गौरा मन्दिर का उल्लेख भी आवश्यक है। यहाँ सुन्दर-सुन्दर स्त्री-पुरुषों के मुख के आकार तथा उनकी मुद्राओं (Poses) का नाग नागनियों के साथ सुन्दर अङ्कन हुआ है। इन आकारों की दूसरी विशेषता है भिन्नता में एकता का आभास देना। उदाहरण के लिए दो नम्बर प्लेट के बीच के आकार को लें। सब आकृतियों की मुख-मुद्रायें हस्त मुद्रायें तथा अलङ्करण अलग अलग हैं किन्तु प्रभाव में एकता है। किसी को इन सब का पता तब तक नहीं चल सकता जब तक कि वह उन्हें ध्यान से न देखे। इसका मुख्य कारण यह है कि उन्होंने मनुष्याकृतियों को विसर्ग के एक अङ्ग के रूप में ही देखा है। अतः अपनी इच्छानुसार जैसा चाहा बदल दिया है। यही मान्यता उनकी एक तीसरी विशेषता का आधार भी बन गई है, वह है मनुष्यों तथा पशुओं के आकारों का सामंजस्य। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि उड़ीसा के चित्रकारों ने आकारों के सौन्दर्य पर अधिक ध्यान दिया है, उनकी आधार भूत वस्तुओं पर कम। सच पूछा जाय तो एक अच्छी आकार कल्पना के लिए यह गुण है भी आवश्यक। कुछ आकार कल्पनाओं में वस्तु के ठोस धरातल से ऊपर बहुत ऊपर कल्पना की रङ्गीन उड़ानें भी भरी गई हैं। यद्यपि सौन्दर्य की दृष्टि से उन्हें प्रथम कोटि के अन्तर्गत नहीं रख सकते किन्तु प्रयोग की दृष्टि से अवश्य सराहनीय है। तीन नम्बर प्लेट का नीचे वाला आकार कुछ ऐसा ही है। बाघ की गुफाओं में भी ऐसे प्रयोग किये गये हैं। वात्सल्य भाव में बौने लोगों का चित्रण भी सफलता पूर्वक हुआ है।

३. **अमरावती :**—कृष्णा नदी के दक्षिणी तट पर मद्रास प्रान्त में यह अमरावती नगर है। प्राचीन काल में यही धरणी कोट कहलाता था। यह लगभग २० शताब्दी

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

पुराना स्थान है। यहां के आकार गौतमबुद्ध की जीवन सम्बन्धी घटनाओं से अंकित है। गौतम का आश्वारोहण तथा अन्य घोड़ों की कतारें अर्धाङ्गविन्यास (Profiles) के रूप में हैं। इनकी गठन (Compositlon) बहुत ठोस है। अमरावति के आकारों को अन्य आकारों से अलग करने वाली विशेषता है वहां के चित्रकारों का मनुष्याकृतियों से प्रेम। आकार कल्पना वर्तुलाकार हो या वर्गाकार या किसी अन्य रूप में पर बाहुल्य मिलता है मनुष्याकारों को ही। कुछ आकार तो अच्छे खासे भित्ति चित्र (Murals) बन गये हैं। प्लेट नं० ७ के ऊपर का चित्र आकार कल्पना की अपेक्षा भितिचित्र की कोटि में अधिक बैठता है। नीचे वाला चित्र अमरावती स्तूप के जङ्गले से लिया गया है। उसमें पीछे की पच्चीकारी का समावेश इसीलिये हुआ है, ताकि सादी सी मनुष्याकृति और उभर आये। इसी में पुरुष की आकृतियों के गंजे होने की विशेषता भी झलकती है। प्लेट नं० ८ में हाथियों के दो रूप मिलते हैं। एक सादा और दूसरा आलंकारिक। आलंकारिक रूप में मछली के आकार की इतनी अधिक विशेषताएँ आ गई है कि उन्हें एकाएक पहचाना भी नहीं जा सकता। इस दृष्टि से वे भुवनेश्वर के समीप बैठाये जा सकते हैं और कमल के रूपों के कारण अजन्ता के। अतः हम यही क्यों न समझ लें कि अमरावती के चित्रकारों ने जहाँ जो वस्तु अच्छी लगी ले ली।

जिन वस्तुओं को आलंकारिक रूप मिला है उनमें दूसरा स्थान है सर्प का। कहीं-कहीं पर पुरुष स्त्री के युग्म को खड़ा कर भी एक अलग चित्र बना दिया गया है (प्लेट नं० ९)। इस प्रकार हम देखते हैं कि अमरावती की आकार कल्पनायें अजन्ता तथा भुवनेश्वर के समान विस्तृत भूमि के दर्शन भले न कराएँ पर कल्पना शक्ति की प्रचुरता का प्रमाण अवश्य है।

४. बाघ की गुफायें:— भारत की गण्य मान्य गुफाओं में से बाघ की गुफायें अपनी आकार कल्पना के सौन्दर्य के लिये प्रसिद्ध हैं। यूनान की प्राचीन चित्रकला तथा मूर्ति कला अपनी पूर्णता में अप्रतिम है तो बाघ के भित्ति चित्र आकारों की विपुलता के लिये प्रसिद्ध हैं। वहाँ चित्रकारों की कल्पना शक्ति ने इतने विस्तृत क्षेत्र को अपने भीतर समेट लिया है कि सम्पूर्ण एशिया के लिये वे एक प्रेरणा की वस्तु बन गई हैं। उनका आलंकारिक गठन, रेखाओं का स्वाभाविक सौन्दर्य और आकारों की शालीनता चित्रकारों के लिये अक्षय भंडार है।

दूसरी गुफा, जिसका सम्बन्ध पाण्डवों से बताया जाता है, शेरों के आकार के लिये

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्रसिद्ध है जो दरवाजे के ऊपर बने हुए हैं। यहीं पर ये गुफायें अजन्ता से अलग होकर अपनी मौलिकता प्रदर्शित करती हैं।

तीसरी गुफा हाथी खाना कहलाती है। चित्रकारी की दृष्टि से इसका कोई विशेष महत्व नहीं है। सजावट में पहली दोनों गुफाओं से अधिक आकर्षक है चौथी गुफा अर्थात् 'रङ्ग महल'। यदि इन नामों की अब तक अपरिवर्तित रूप में चला आता हुआ समझ लिया जाय तो इस गुफा को निर्माण करने वाले का शयनागार समझा जा सकता है। अतएव उसकी दीवारों पर इतनी महीन चित्रकारी स्वाभाविक है। गुप्त काल की कला इस ध्वस्त रूप में भी उसके उखड़े हुए पलस्तर पर अपने पूर्व रूप में चमक रही है।

दीवारों के अतिरिक्त स्तम्भों के ऊपरी भाग में बने हुए आकार भी कम महत्व-पूर्ण नहीं हैं। मकराकृतियाँ पश्चिमी एशिया के आकार से मिलती हैं और स्त्रियों के आकार सांची की आकृतियों से। सम्भवत: आलंकारिक गठन में प्रयुक्त होने वाले आकारों में हाथी, सांड, और शेर जैसे जानवरों हंस जैसे पक्षियों और आम इत्यादि फलों को विशेष स्थान मिला है (प्लेट नं० १०)। उपर्युक्त विवरण से यह निर्विवाद रूप से स्पष्ट हो जाता है कि बाघ के आकार एक विस्तृत वस्तु जगत को अपने में समेटे हुए हैं। हर प्रकार की रुचि वाले के लिये उसमें आकर्षण है, स्वयं को खो देने के लिये भाव भूमि है। समस्त एशिया पर इसका कितना प्रभाव पड़ा है इसका आभास इसके चित्रकारों को नहीं रहा होगा किन्तु उसकी जगत् प्रसिद्धि उसकी उत्कृष्टता का स्पष्ट प्रमाण है।

५. वेरूल:—(Ellora) अजन्ता के साथ ही वेरूल का नाम भी लिया जाता है किन्तु दुर्भाग्यवश जहाँ तक आकार कल्पना का प्रश्न है काल के कराल हाथों से अजन्ता की अपेक्षा बहुत कम सौन्दर्य बच सका है। बौद्ध गुफाओं और जैन गुफाओं को छोड़ देने के पश्चात् भी अकेली वैष्णव गुफाएं ही वेरूल की प्रसिद्धि स्थिर रखने में समर्थ हैं। वैष्णवों की सबसे पहली गुफा कैलाश में शिव मन्दिर, के स्तंभों पर बने आकार इतने बारीक और सुन्दर हैं कि प्रतीत होता है मानों इनके अतिरिक्त आकारों की कल्पना ही नहीं की जा सकती।

कहीं-कहीं के अवशेषों से प्रतीत होता है कि आरम्भ में इसकी दीवारों और छत पर चित्रकारी रही होगी और बाद के किसी दूसरे युग में फिर हुई होगी। छत पर के आकारों के कोने बचे हैं। उनमें कमल के पत्तों के आकार बने हैं और उनमें वही लोच है जो अजन्ता के आकारों में किन्तु रङ्गों में ताज़गी और हलकापन है। स्तम्भों

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

के आकारों में कमल के मूल आकार के ही आलंकारिक रूप अधिक मिलते हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि मनुष्य तथा पशुओं की आकृतियों को स्थान नहीं मिला है। ग्यारह नं० प्लेट के शेर वाले आकार से यह सिद्ध हो जाता है कि वहाँ के कलाकार भी आलंकारिक रूपों के सृजन में उतने ही सिद्धहस्त थे जितने अजन्ता या भुवनेश्वर के।

६. **एलीफेन्टाः**—(Elephanta) बम्बई बन्दरगाह से कोई सात मील की दूरी पर एलीफेन्टा का टापू है जिसके पश्चिमी भाग में उत्तर पूर्व दिशा में शेरों की वृहद् गुफायें हैं। कुछ गुफायें पूर्वी भाग में भी हैं किन्तु प्रतीत होता है कि वे सिर्फ़ रहने के काम आती थीं। सब गुफाओं में सबसे बड़ी और अधिक महत्वपूर्ण है गुफा नं० १ इसी को पूजागृह भी कहा जाता है।

एलीफेन्टा की आकार कल्पनायें इसी गुफ़ा में मिलती हैं। गोल स्तंभों के ऊपरी भाग लोटे की तरह हैं और उनमें तोरी की तरह बाहर को धारियाँ उभरी हुई हैं। शैवों की उपासना में पार्वती का प्रमुख स्थान है अतएव उसके वाहन सिंह से भी उनका घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ। इसी कारण हम देखते हैं कि यहाँ की आकार कल्पनाओं में शेरों के मुख का आलंकारिक अङ्कन, उसके पंजों के समान लम्बूतरे और आगे से घूम जाने वाले आकार बहुतायत से मिलते हैं। समरसता को भंग करने के लिये बीच में आड़ी सीधी रेखायें भी रखी गई हैं।

७. **बादामी**—Badami ईसा की छठी शताब्दी से लेकर आठवीं शताब्दी तक जन लोक विश्रुत हो चुकी है। चालुक्य वंश की कलाप्रियता बादामी गुफाओं के लिए वरदान बन गई। इस काल में वहाँ पर जो तीन ब्राह्मण और एक जैन गुफ़ाएँ काटी गई उनमें दक्षिणी नहीं प्रत्युत् उत्तर की गुप्त कालीन कला का प्रभाव है।

वहाँ के आकारों में पशु-पक्षी के रूप को एक कर देने की विचित्र विशेषता है प्लेट नं० १३ के नीचे वाले आकार में तोता, मुर्गा और कुत्ता सम्मिश्रित रूप में पाये जाते हैं। बीच का वर्तुलाकार जलचरों के रूप को लेकर बनाया गया है। सारांश यह कि उन कलाकारों ने प्रकृति की किसी भी वस्तु को लेकर अभीष्ट प्रभाव उत्पन्न कर दिया है।

उपर्युक्त दृष्टिकोण से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन गुहा मन्दिरों का निर्माण एक ही समिति के संरक्षण में हुआ, स्थान भेद से विकास में अन्तर आ जाना तो स्वाभाविक है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

८. मथुरा--कुषाण वंश ने ईसा की दूसरी तीसरी शताब्दी में उत्तर भारत के कलाकौशल को चरमसीमा पर पहुँचाया। उसके राज्य की सीमाएँ पेशावर माणिक्याल, सुई विहार, मथुरा, श्रावस्ती, सारनाथ आदि तक मानी गई हैं। इन समस्त नगरों में मथुरा विशेष प्रसिद्ध हो गया क्योंकि पश्चिम से पूर्व तथा दक्षिण से उत्तर को जाने वाले व्यापारी यहीं से होकर गुजरते थे।

यह बात ठीक है कि व्यापार की दृष्टि से अधिक उत्पादन वहाँ की आकार कल्पनाओं में सांची जैसी सफ़ाई लाने में बाधक हुआ किन्तु केन्द्र स्थल होने के कारण उन पर कई संस्कृतियों का प्रभाव अवश्य है। गोल आकारों में बीच में मनुष्याकृति और चारों ओर कमल के आलंकारिक रूप यहाँ की विशेषता है। इसी प्रकार आयताकारों में भी मनुष्य, पशु तथा पक्षियों को एक में मिलाकर एक नया रूप दे दिया गया है। शेरों के आकार में एलीफेन्टा का सा सौन्दर्य है जिससे प्रतीत होता है कि अपने निर्माण काल में ही ये सारे भारत में फैल गये थे। भाँति-भाँति के फूलों, कलियों और पत्तियों के आलंकारिक रूप भी पर्याप्त संख्या में मिलते हैं। १४ नं० प्लेट के आकार ऐसे ही हैं। गोल तश्तरियों पर सीधे-सादे ज्यामितीय आकारों को भी लिया गया है। वहाँ बनी हुई मूर्तियों के आभरण तत्कालीन आकार परम्परा को समझने में पर्याप्त सहायता करते हैं।

६. सांची—सांची का विश्व-विश्रुत स्तूप दक्षिण के प्रसिद्ध आंध्रवंश के राज्य-काल में निर्मित हुआ। प्रतीत होता है कि पहले उसके जंगले लकड़ी के बनाये गये थे। कालान्तर में उनके खराब हो जाने पर उनके स्थान पर पत्थरों के जंगले तैयार किये गये। सांची को इतना प्रसिद्ध करने वाली वस्तुएँ है वहाँ के सुन्दर द्वार। उन पर इतना महीन और त्रुटिहीन काम हुआ है कि वह कल्पना लोक की वस्तु सा प्रतीत होता है।

उत्तरी द्वार (जो सब से अधिक सुन्दर है) में ऊपर की ओर तीन पंक्तियाँ हैं। तीनों में एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक मनुष्यों, पशुओं तथा मोर इत्यादि पक्षियों के भाँति भाँति के आलंकारिक रूप मिलते हैं। बीच के आयताकार स्थानों में सूरजमुखी और कोनों पर गोल रेखाओं से आकार बने हैं। कहीं-कहीं स्तूप के आकार का भी आलंकारिक अङ्कन है। इसी द्वार में एक स्थान पर पंख वाले हिरण का आकार कलाकार की नई सूझ है।

पूर्वी द्वार में बैलों पर चढ़े सवारों का आकार कहीं और देखने को नहीं मिलता। उसके साथ ही सांड़नी सवार आकार कल्पना के क्षेत्र में एक नयापन है।

एक स्थान पर नाना प्रकार के फूलों को इकट्ठा कर नये प्रकार का आकार उपस्थित करने का प्रयत्न भी किया गया है। फूलों में सूरजमुखी शायद उन्हें अधिक प्रिय थे और पक्षियों में बगुले। वैसे मोरों के आकार भी हैं किन्तु उन्हें स्वतन्त्र सत्ता नहीं प्राप्त हुई है।

स्तम्भों पर प्राप्त होने वाले आकार कमल से बने हैं; वे एलोरा के स्तम्भों के इतने निकट बैठते हैं मानों साँची के किसी कारीगर ने एलोरा में खुदाई की हो। स्तम्भों पर ही मनुष्याकृतियों को लेकर बनाये गए आकार स्वतन्त्र चित्र का सा सौन्दर्य रखते हैं। वे केवल सौन्दर्य प्रसाधन न रहकर हिन्दू पौराणिक गाथाओं के मूर्त्त रूप हैं। स्तम्भों के ऊपरी भाग को हस्तिमुख से सुशोभित करना परम्परागत है।

१०. **भरहुत**—नागौद रियासत में भरहुत-स्तूप का निर्माण यहाँ के कलाकारों ने ही किया है किन्तु कुछ विद्वानों का कथन है कि स्तम्भों के ऊपरी भाग की बनावट पर पाश्चात्य प्रभाव है। उनमें बने शेरों और बैलों के आकार आत्मा में भारतीय नहीं है।

प्लेट नं० १८ को देखने से पता चलता है कि किसी प्रकार घंटियों का साधारण सा आकार भी आवृत्ति से कितना सुन्दर बन जाता है। झालरों में ये लटकने से एक विशेष लहर पैदा कर देती है। इन आकारों का सौन्दर्य हमारे सामने तब और भी स्पष्ट हो जाता है जब हमारा ध्यान इस बात पर जाता है कि साँची की भाँति यहाँ पर भी ये पहले लकड़ी पर बनाये गये थे और बाद में पत्थर पर।

११. **प्राचीन पुस्तकों में बने आकार**—दीवारों पर और स्वतन्त्र चित्रों के साथ बने आकारों के अतिरिक्त प्राचीन पुस्तकों में भी आकार कल्पना का भण्डार मिलता है। मुसलमानों के धर्म में मनुष्याकृति का अङ्कन खुदा के विरुद्ध खड़े होना है, इसलिये उनकी पुस्तकों को इस कमी को खुश-नबीसी और आकार कल्पना द्वारा पूरा किया गया। कालान्तर में जब अकबर की उदार हृदयता ने धर्म की रूढ़ियों को तोड़ दिया तो आकार कल्पना में भी पशु पक्षी तथा मनुष्य इत्यादि के रूप समाविष्ट होने लगे। प्लेट नं० २२ में मुग़ल पुस्तकों में पाये जाने वाले आकारों को दिया गया है।

मुग़लों से पूर्व जैन पुस्तकों के हाशियों पर भी आकार कल्पनायें मिलती हैं। उनके रङ्ग भड़कीले हैं और आकारों में वह सफ़ाई नहीं है जो मुग़ल पुस्तकों में मिलती हैं। दूसरा अन्तर यह है कि मुग़ल पुस्तकों में जहाँ किसी विशिष्ट घटना, जो किसी भी व्यक्ति के जीवन में घट सकती है, से सम्बन्धित आकार है, वहाँ जैन पुस्तकों में केवल महावीर जैन की जीवन घटनाओं को ही लिया गया है। दो आकारों को अलग करने के लिये एक या दो मोटी-मोटी रेखाएँ भर खींच दी गई हैं।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

जाली का काम

यह तो नहीं कहा जा सकता कि मुसलमानों के आगमन से पूर्व भारत में पत्थर को काटकर जाली बनाने का काम नहीं होता था क्योंकि वेरूल की कैलास नामक गुफा में तथा दक्षिण के अन्य मन्दिरों में इसके अति प्राचीन नमूने मिलते हैं, किन्तु कुछ विशेष कारणों से मुसलमानों में इस कला का जितना प्रचार हुआ और सौन्दर्य की जिस पराकाष्ठा तक इसको उन्होंने पहुँचाया शायद किसी और जाति ने नहीं। व्याख्या की सुविधा के लिये यदि हिन्दु पद्धति और मुसलमान पद्धति संज्ञायें ले ली जांय तो कह सकते हैं कि प्रथम के अन्तर्गत आने वाली जालियाँ बहुधा षट्कोण की आकार कल्पना लिए हुये होती हैं जिनमें बीच-बीच में पत्र समूह भी आ जाता है। कहीं कहीं पौराणिक घटनाओं को दर्शाने वाली मनुष्याकृतियाँ भी मिलती हैं।

मुसलमानों को कला के क्षेत्र में अधिक स्वतन्त्रता नहीं प्राप्त थी अतएव विषय-चयन की दृष्टि से उनका क्षेत्र बहुत सीमित था। फलस्वरूप उस थोड़े से क्षेत्र में ही उन्होंने अपनी कला को उत्कृष्टता की चरम सीमा पर पहुँचा दिया। ज्यामितीय आकारों के अपरिमित विभेद उनकी बनाई गई जालियों में मिलते हैं।

मुसलमानी ढङ्ग की जालियों में सर्वोत्कृष्ट नमूने गुजरात प्रान्त में अहमदाबाद नगर में मिलते हैं। इसके पहले बनी मुसलमानी इमारतों में और यहाँ की मस्जिदों में भी जालियों में भारतीय परम्परा का पर्याप्त प्रभाव मिलता है, किन्तु दरवाजों के स्थान पर तथा टट्टियों (Screens) के लिये भी इस जाली का ही प्रयोग करना उनकी नई सूझ थी। मक़बरों के चारों ओर बरामदे की आड़ के लिये भी ये जालियाँ ही बनाई गई हैं।

अहमदाबाद—ईसा सन् १५०० में बने सिदी सय्यद की मस्जिद में बनी दस अर्द्ध-वृत्ताकार खिड़कियों की जालियाँ अहमदाबाद में ही नहीं अपितु संसार भर में प्रसिद्ध हैं। उनमें से दो के नमूने इस पुस्तक में दिये गये हैं। एक ज्यामितीय आकारों को लेकर चला है और दूसरा भारतीय पद्धति पर पेड़ के रूप को।

फर्गुसन का कथन है—To excel the skill with which the vegetable form are conventionalized just to the extent required for the purpose. The equal spacing also of the subject by the three ordinary trees and four palm trees take

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

it out of the category of direct imitation of nature, and renders it sufficiently structural for its situation, but perhaps the greatest skill is shown in the even manner in which the pattern is spread over the surface. There are some exquisite specimens of lattices in precious marbles at Agra and Delhi, but none equal to the designs of Ahmedabad.

आगरा और दिल्ली में भी जाली का यह काम इतना सुन्दर है और इतनी अधिक मात्रा में है कि उनमें से कौन सा सुन्दर है यह छाँटना कठिन हो जाता है। अतः फतेहपुर सीकरी में ईसा सन् १५७१ में बने सलीम चिश्ती के मकबरे के बरामदे में संगमरमर की बाड़ (Screen) में बने ज्यामितीय तथा पौधे के आलंकारिक आकार के सम्मिश्रण से बनी सुन्दर आकार कल्पना का नमूना दे रहे हैं ताकि विद्यार्थी स्वयं अकबर कालीन जाली की उत्कृष्टता का आभास पा सकें।

ताजमहल में चैत्य (कब्र) के चारों ओर बनी बाड़ शाहजहाँ कालीन जाली का अद्वितीय नमूना है। इनमें उन्हीं रेखाओं की आवृत्ति उसे एशियाई जालियों की अपेक्षा इटली के अभ्युदय काल की जालियों के अधिक निकट ले आती है। सर जॉन मार्शल के अनुसार ताजमहल के समस्त अलंकरणों में केवल यहीं इटली का प्रभाव मिलता है तोभी इसे विशुद्ध भारतीय इस लिये माना गया है क्योंकि यह आकार कपड़े के लिये उपयुक्त होकर भी पत्थर पर बनाया गया है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

जड़ाई और पच्चीकारी का काम

संगमरमर में जड़ाई और पच्चीकारी—चौदहवीं शताब्दी में एशिया तथा यूरोप में दीवार इत्यादि किसी फलक की समरसता को भंग करने के लिये बीच बीच में संग मरमर के टुकड़े जड़कर एक लम्बी पेटी बना देने की प्रथा थी। भारत में तुगलक शाह का मकबरा और अलाउद्दीन का दरवाजा इसके उदाहरण हैं। मुसलमानों ने इस पद्धति को मध्य एशिया, सीरिया और मिश्र में तथा ईसाइयों ने इटली की इमारतों में अपनाया। अक़बर के समय में इस जड़ाई के साथ साथ पच्चीकारी का काम भी होने लगा, जो रोमन और बिजेन्टाइन की पद्धति पर छोटे से बड़ा बनाया जाता था, किन्तु आकार कल्पना हमेशा फ़ारसी ही होती थी। इनके बीच बीच में हरे मीने का काम उसके सौन्दर्य को द्विगुणित कर देता था।

पिएट्रा डुरा–इटली ने जड़ाई के काम में कुछ परिवर्तन कर एक नई कला को जन्म दिया। यह था गोमेदक रत्न, सूर्यकान्त मणि इत्यादि कीमती पत्थरों को पतला पतला काटकर संगमरमर में बने गढ्ढों में जड़ना। प्रान्तीय भाषा में इनका नाम रखा गया पिएट्रा डुरा। फ्लोरेंस में इसके तत्कालीन नमूना मिलते हैं जो हैं तो छोटे पर जिन से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि बड़े पैमाने में वे कैसे सुन्दर लगेंगे।

बड़े पैमाने पर उनके सौन्दर्य के दर्शन भारतवर्ष में होते हैं क्योंकि मुसलमान काल में जहाँ तक कला का प्रश्न था खर्च की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। अक़बर के मकबरे (१६०५-१२) के दक्षिणी दरवाजे पर लाल बलुआ पर की गई पच्चीकारी प्रभाव में इटली के पिएट्रा डुरा के समान ही है।

नोट—पिएट्रा डुरा की उत्पत्ति—मेजर कॉले का कथन है कि पिएट्रा डुरा के प्राचीनतम नमूने फर्डिनेन्ड प्रथम द्वारा बनवाई गई फेब्रिका नामक इमारत में मिलते हैं। भारत में इसके उदाहरण इतने पुराने नहीं मिलते हैं। अतः उनका मत है कि भारत में पिएट्रा डुरा इटली से आया। दूसरी ओर सरजॉन मार्शल का कथन है कि मध्य भारत के मण्डु नगर में खिलजी (जो ईसा सन १४७५ में मरा) के मकबरे के ध्वंसावशेषों पिएट्रा डुरा के नमूने मिलते हैं ऐसी अवस्था में यह कैसे माना जा सकता है कि उसका प्रवेश इटली से हुआ। लेकिन उन्हीं के पहले के वृत्तान्तों में यह झलक मिलती हैं कि इस मकबरे के ध्वंसावशेषों में प्राप्त जड़ाई के नमूने पिएट्रा डुरा के अन्तर्गत नहीं रख सकते।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

मुग़ल बादशाह फूलों के बड़े शौक़ीन थे, अतएव उनके वरद हस्त के नीचे पनपने वाली कला में फूल,पौधों का कलात्मक रूप निखरना स्वाभाविक था। भारतीय फूलों को फ़ारसी ढङ्ग का आलंकारिक रूप देकर दो विभिन्न संस्कृतियों का एकीकरण भारतीय मस्तिष्क की निराली सूझ है।

पिएट्रा डुरा के कुछ प्राचीन भारतीय नमूने—मेजर काले के अनुसार उदयपुर के जुगमन्दिर महल में बना 'गोल मण्डल' (ईसा सन् १६२३ के लगभग) पिएट्रा डुरा जड़ाई का पहला नमूना है। यह शाहज़ादा खुर्रम (बाद में शहंशाह शाहजहाँ) के लिये बनवाया गया था। ईसा सन् १६२१ में आगरा में बने एतमाद-उद्दौला के मक़बरे (जो उसकी लड़की नूरजहाँ ने बनवाया था) में आकार कल्पना की इस पद्धति को बड़े पैमाने पर अपनाया गया है।

शाहजहाँ द्वारा बनवाई गई इमारतें—(ईसा सन् १६२७-५८) देश निष्कासन काल में शाहजहाँ के मन पर पिएट्रा डुरा का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि बादशाह बनने पर उसने पच्चीकारी की ओर बिल्कुल ध्यान ही नहीं दिया। ताजमहल, आगरा और दिल्ली में पिएट्रा डुरा का इतना अधिक काम है कि किताबों पर किताबें लिखी जा सकती हैं। उसमें संरक्षक के कलात्मक सम्मान के प्रत्यक्ष दर्शन होते हैं।

पिएट्रा डुरा के आधुनिक नमूने—अठारहवीं शताब्दी में मुग़ल राज्य के पतन के पश्चात् उसके संरक्षण में पनपने वाली कलाओं का ह्रास होना भी स्वाभाविक था। ईसा सन १८३० तक लोग इसे बिल्कुल भूले रहे। इसी सन् में अस्पतालों के इन्सपेक्टर जनरल डा० मुरे (Dr. Murray) ने शिल्पियों को फिर से इस कला के उत्थान के लिये प्रेरणा दी। उनका उद्देश्य इसे व्यावसायिक रूप देने का था। तब से यूरोप यात्रियों को बेचने के लिये इसे छोटे पैमाने पर बनाया जाता है। अभी तक किसी ने पूरी इमारत को इसी से अलंकृत करने की नहीं सोची है।

काँच की पच्चीकारी—फतहपुर सीकरी में सलीम चिश्ती के मक़बरे में सीपी की पच्चीकारी की गई है। काँच की पच्चीकारी उदयपुर के शीश महल, आंबेर, आगरा, लाहौर और दूसरे स्थानों पर मिलती है।

———

Downloaded from www.dulallibrary.org.in

टाइल

प्राचीन फ़ारस के टाइलः—बेबीलोनिया में दीवारों को सजाने के लिये उनमें बीच बीच में रङ्गीन मिट्ट्री के आँवे में पके हुये चौकोर टुकड़ों को जड़ने की प्रथा थी। वहाँ से फारस वालों ने इसे सीखा और अन्यायन्य कलाओं में स्थान दिया। चीन के प्रभाव में आकर उन्होंने इसमें एक और परिवर्तन किया, वह था टाइलों पर शीशे की सी चमक लाना। इस प्रकार टाइलों में टिकाऊपन भी आ गया और सौन्दर्य भी।

तैमूर कालीन फ़ारसी टाइलः—एम० मिज़न का विश्वास है कि फ़ारस की चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी में बनी इमारतों (विशेषतः तैमूर के मक़बरे में) जो चमकदार टाइलों का उपयोग हुआ है उसकी रीति उन्होंने खुरासान निवासियों से ली थी। भारत में रङ्गीन टाइलों का उपयोग १४ वीं शताब्दी के प्रथम चरण में बनी इमारतों में मिलता है। हो सकता है इनमें से कुछ १३ वीं शताब्दी में ही बन गई हों। हाँ यह अवश्य है कि मुग़ल बादशाहों की इस तैमूरी परम्परा ने टाइलों के इस प्रयोग को एक फैशन बना दिया। कुछ इसी विचार धारा से प्रभावित होकर कुछ लोगों का कथन है कि भारतीय टाइल सुन्दर होते हुए भी रङ्ग और चमक में फारसी टाइलों की समता नहीं कर सकते। मुलतान में टाइलों के काम का आरम्भिक युग ई० सन् १२६४ और १२८६ के बीच मुलतान में बाहा-उल-हक़ का मक़बरा बना। ई० सन् १८८२ में जब कनिंघम साहब उसे देखने गये थे तो उस समय तक उसमें कामदार टाइलों के नमूने बचे थे। उनमें शायद कुछ मक़बरे के निर्माण के बहुत बाद में लगाये गये हों क्योंकि १७ वीं शताब्दी में वह मक़बरा फिर से बनाया गया था। सर जॉन मार्शल का कथन है कि अधिकतर टाइल सत्रहवीं शती के ही हैं। ई० सन् १३२० में बना बाहा-उल-हक़ के पोते रूकु-उद्दीन का अठपहलू मक़बरा जो मुल्तान में ही बना है, बाहर की ओर टाइलों से बनी आकार कल्पनाओं के लिये प्रसिद्ध है। इसकी गहरी लाल ईंटों के बीच में गहरे नीले, आसमानी नीले और सफेद टाइलों से रङ्ग योजना में प्रखरता आ गई है। कालान्तर में विकसित होने वाली पच्चीकारी और इनमें केवल इतना ही अन्तर है कि ये पृष्ठ भूमि से आधा इञ्च से लेकर दो इञ्च तक उभरे रहते हैं। इनके बनाने में कठिनाई तो अवश्य आती होगी किन्तु इनमें स्वाभाविक रूप से आने वाले छाया प्रकाश से निस्सन्देह सौन्दर्य वृद्धि होती थी। १५ वीं शती और उसके बाद बने सीतापुर के मक़बरों में पीला रङ्ग भी प्रयुक्त हुआ है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

गौर टाइलः—बङ्गाल के गौर प्रान्त में ई० सन् १४७५ और १४८० के बीच तान्तीपारा और लत्तन नाम की दो मस्जिदें बनीं। इनकी आकार कल्पना के लिये प्रयोग में लाये गये टाइल पुरानी पद्धति से ही पकाये गये हैं। दक्षिण केन्सिगटन के विक्टोरिया और एलबर्ट अजायबघर में इन टाइलों के कुछ नमूने हैं जिनके बारे में कहा गया है कि उनकी आकार कल्पना और रङ्ग योजना मुसलमानी टाइलों से भिन्न विशुद्ध भारतीय है। श्रीयुत बर्डवुड के कथनानुसार ये टाइल न होकर पकी हुई ईंटों के अधिक निकट बैठती हैं। अन्तर केवल इतना है कि इनके किनारे भर दिये गये हैं जिन पर गहरा नीला रङ्ग चढ़ा दिया गया है। इसी नीली पृष्ठ भूमि पर सफ़ेद से ११ वीं–१२ वीं शती के ढङ्ग की आकार कल्पना की गई है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि मुसलमानों की सत्ता स्थापित होने के पूर्व भी शायद बङ्गाल के हिन्दुओं को यह कला अपने प्रारम्भिक रूप में ज्ञात थी।

ग्वालियर के टाइलः—ई० की १६ वीं शती के आरम्भ में ग्वालियर में बने मानसिंह के महल में इन चमकदार टाइलों का बहुत प्रयोग हुआ है। इसका विवरण हमें 'बाबर' के संस्मरणों में मिलता है। दीवारों के बाहरी भाग में हरे रङ्ग के टाइल लगे हैं और चारों ओर रङ्गीन टाइलों से ही कदली स्तम्भ बनाये गये हैं।

ई० सन् १८७१ में लिखे श्री कनिंघम साहब के अभिलेखानुसार—केले' के पेड़ अब भी बचे हुए हैं जिनकी चर्चा बाबर ने की है। केलों को प्राकृतिक ऊँचाई का बनाया गया है केवल हरे रङ्ग के पत्तों का पीले तने से एक ही प्रकार से निकालना कुछ अस्वाभाविक बन गया है। हां नीले टाइलों में शक्करपारे की आकार कल्पना और नजदीक-नजदीक आड़ी रेखायें बड़ा आकर्षक प्रभाव उत्पन्न करती हैं।

मुगलकालीन टाइलों का कामः—मुग़ल काल में इस कला ने बहुत विकास किया। इस काल में अधिकतर टाइलों के छोटे २ टुकड़े काट कर दूसरी पृष्ठ भूमि में पच्चीकारी के ढङ्ग पर जड़ देते थे। इसको उन्होंने एक नया नाम 'कशी' दिया। इस प्रकार का काम १७ वीं शती के बाद का अधिक है और उसमें रङ्ग की विविधता भी मिलती है। जे० एल० किपलिंग का कहना है कि ये कलाकार पहले अभीष्ट आकार की आकार कल्पनायें बना लेते थे तत्पश्चात् पकाने से पहले उनके छोटे २ टुकड़े कर लेते थे। किन्तु ए० एच० एन्ड्रूज का कथन है कि पकाने के बाद, उनको चमकदार बनाने के बाद उनके टुकड़े किये जाते थे।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

यह 'कशी' का काम शेरशाह और हुमायूँ के मक़बरों में कम, जहाँगीर और शाहजहाँ के मक़बरों में अधिक पाया जाता है। आज यह कला मर चुकी है।

लाहौर के किले में टाइलों का काम—लाहौर के किले में विश्व विश्रुत टाइलों की पट्टी को इस सम्बन्ध में नहीं भुलाया जा सकता। यह हाथी-पोल से लेकर उत्तर पूर्व के आंगन में बनी बुर्जी तक ४९७ गज़ लम्बी और १७ गज चौड़ी है। लगभग सम्पूर्ण पृष्ठ भूमि पर हाथियों की लड़ाई, पोलो का खेल तथा अन्य दृश्य बने हुए हैं। डा० वोगल ने ११६ गज तक की आकार कल्पनाओं का ट्रेस लिया है जिनमें से कुछ पञ्जाब सर्कल की ए० सोसायटी के प्रगति विवरण में छोटे पैमाने पर निकले हैं।

वज़ीर खान की मस्जिद—बड़े पैमाने पर दुनिया में सबसे सुन्दर काशी के नमूने सन् १६३४ ई० में वज़ीर खान (लाहौर के गवर्नर) द्वारा बनवाई गई मस्जिद में मिलते हैं। इस गुम्बद नुमा इमारत के चारों कोनों पर छोटी २ पतली २ ईंटों से बनी चार सुन्दर मीनारें हैं। सम्पूर्ण बाह्य भाग में अत्यन्त चमकदार टाइलों से आकार कल्पनाएँ बनी हैं।

चीनी का रोजा—स्वर्गीय श्री ई० डब्लू स्मिथ ने अपनी 'कशी' से सम्बन्धित पुस्तक में आगरा के चीनी के रोजे की बहुत प्रशंसा की है। फलतः उसे पर्याप्त लोकप्रियता प्राप्त हुई। यह अठपहलू गुम्बद नुमा मकबरा कौन से सन् में बना यह तो ठीक-ठीक नहीं बताया जा सकता पर कहा जाता है कि कविवर अफजल खान की यादगार में (जिसकी मृत्यु सन् १६३९ में हुई) औरंगजेब ने इसे बनवाया था। और लोगों का कहना है कि आरम्भ में यह ऊपर से लेकर नीचे तक विविध रङ्गों में 'कशी' के काम से भरा हुआ था। टाइलों की मुटाई ५/८ इञ्च है और वे एक इञ्च मोटे प्लास्टर पर जो स्वयं दो इञ्च मोटे एक दूसरे प्लास्टर पर बिठाया गया है, जड़े गये हैं। रङ्गों में नीला, हरा, नारङ्गी, सिंदूरी, रक्तिम प्रमुख हैं। वैसे इनसे बने कई हल्के गहरे रङ्ग भी मिलते हैं किन्तु धातु जैसी चमक सबमें मिलती है। मक़बरे के भीतरी भाग में भी चित्रकारी मिलती हैं। आधुनिक टाइल (१८ वीं शती के चौकोर टाइल) टाइलों का एक तीसरा प्रकार १८ वीं शती की इमारतों में मिलता है। उदाहरण स्वरूप लाहौर में मुहम्मद अमीम की मस्जिद और उसके निकट जॅकरिया खान की मस्जिद को लिया जा सकता है। जॅकरिया खान की मस्जिद वहाँ के राजप्रमुख (सन् १७१७–१७३८ ई०) की बनवाई हुई है। बड़े आश्चर्य की बात है कि शाहदरा में सन् १६६४ ई० में बने आसफ खान के मकबरे में भी आधुनिक ढङ्ग की कशी का काम मिलता है। ये टाइल

चौकोर हैं। प्राचीन टाइलों में हर इकाई में आकार कल्पना अलग होती थी किन्तु इनमें यह बात नहीं पाई जाती। प्रतीत होता है कि यह आधुनिक पद्धति यूरोप से ग्रहण की गई है। नीले, पीले, और हरे रङ्ग भी बहुत हल्के हैं।

लाहौर के निकट बेगमपुरा में शर्फ-उन्निसा का सारवली मक़बरे में कशी के काम के अतिरिक्त दीवारों के निचले भाग में नीले और सफेद रंग के चौकोर टाइलें जड़े गये हैं ठीक इसी प्रकार जिस प्रकार पश्चिमी यूरोप में मिलते हैं। अतः हम इस मक़बरे को भी १८ वीं शति की ही कृति मान सकते हैं।

मुल्तान और सिंध के आधुनिक ढङ्ग के टाइलों का विवरण व्यवसाय सम्बन्धी अनेक पुस्तकों में मिलता है। सिन्ध के टाइलों के सं० १५०९ ई० के प्राचीनतम नमूने दबगीर मस्जिद और मिर्ज़ा जानी-बेग मस्जिद में मिलते हैं। इनमें केवल दो ही रंग मिलते हैं—गहरा नीला और हल्का नीला।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० १

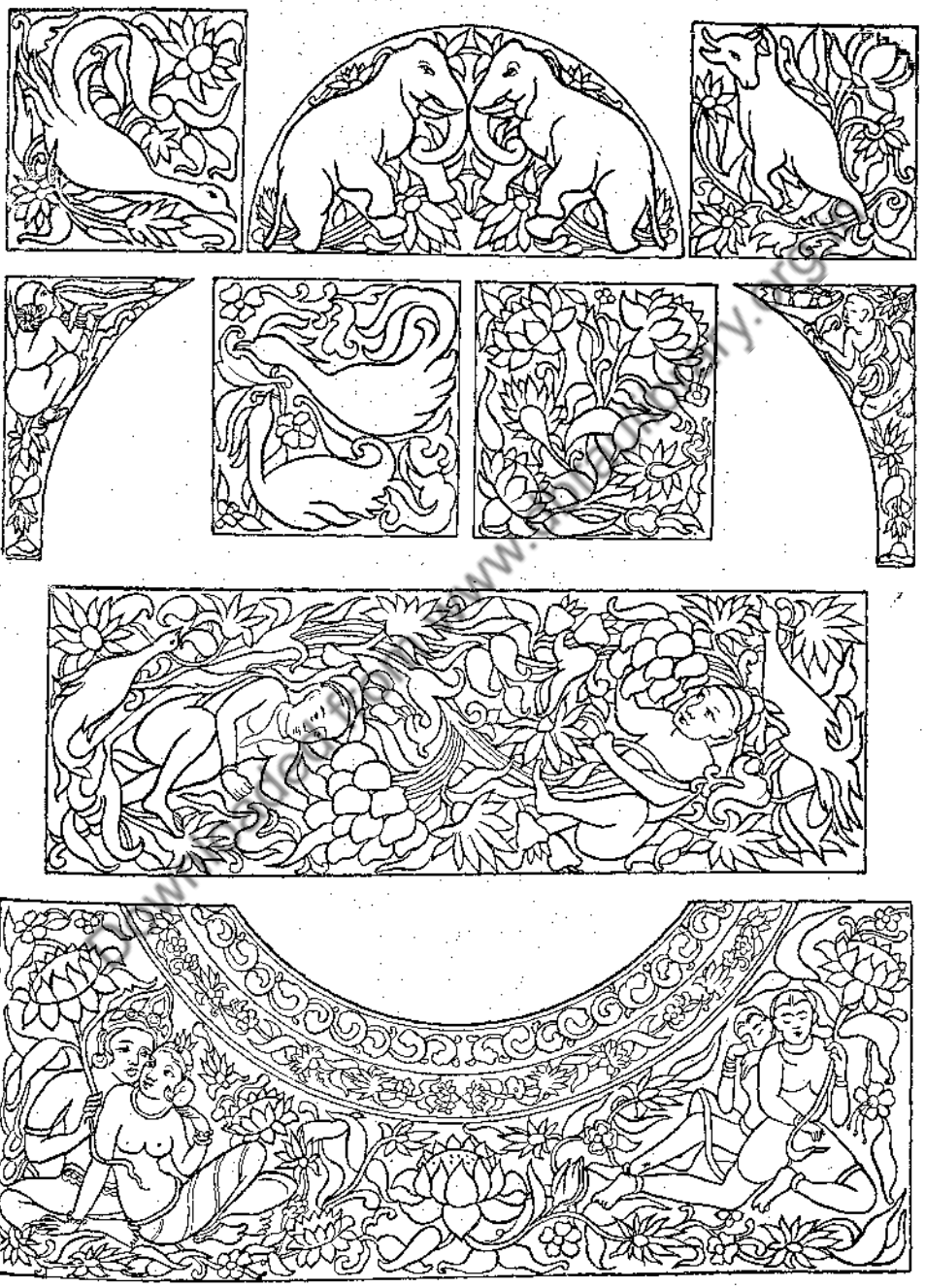

प्लेट नं० २

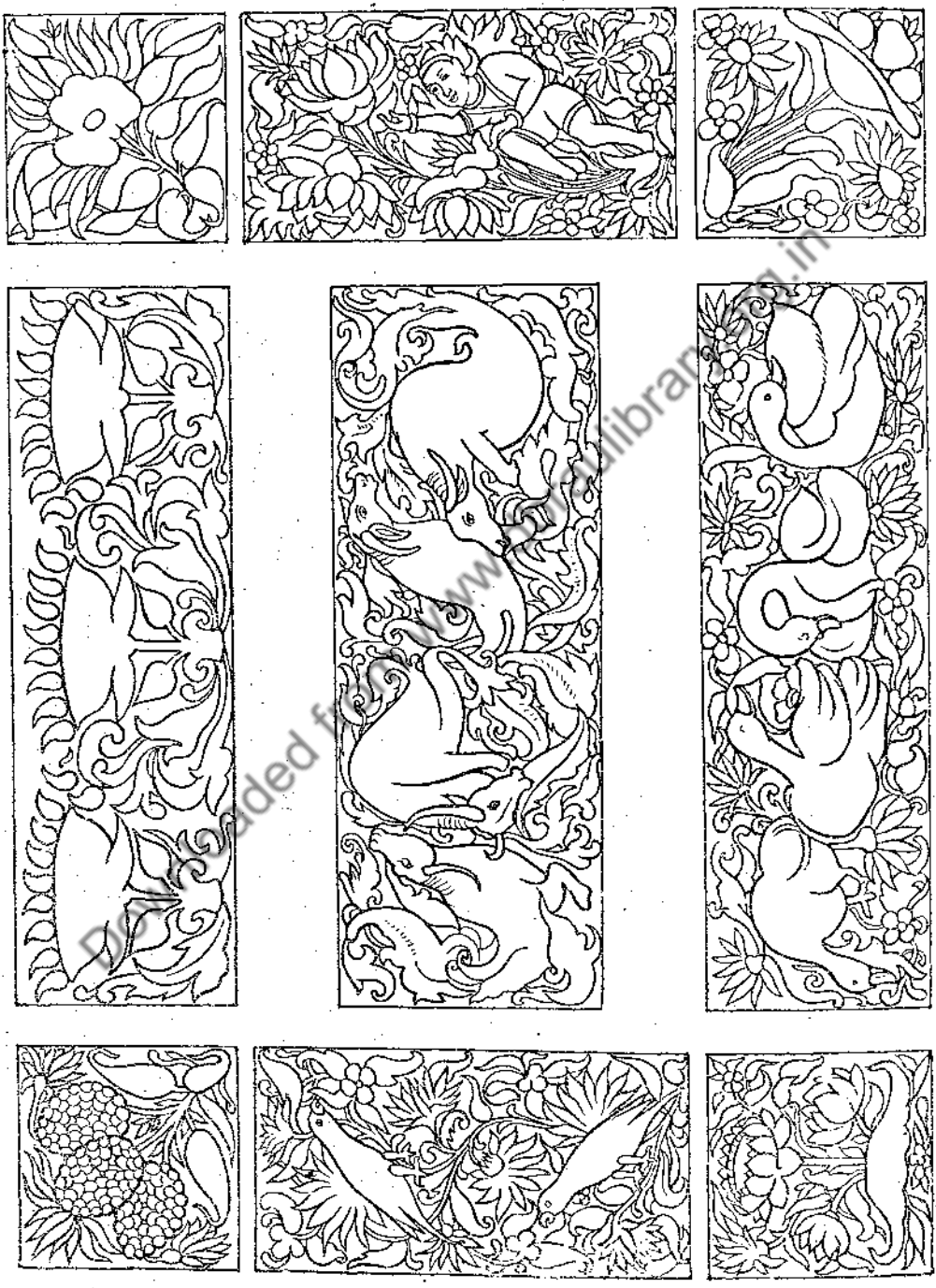

Downloaded from www.pustakalibrary.in

प्लेट नं० ३

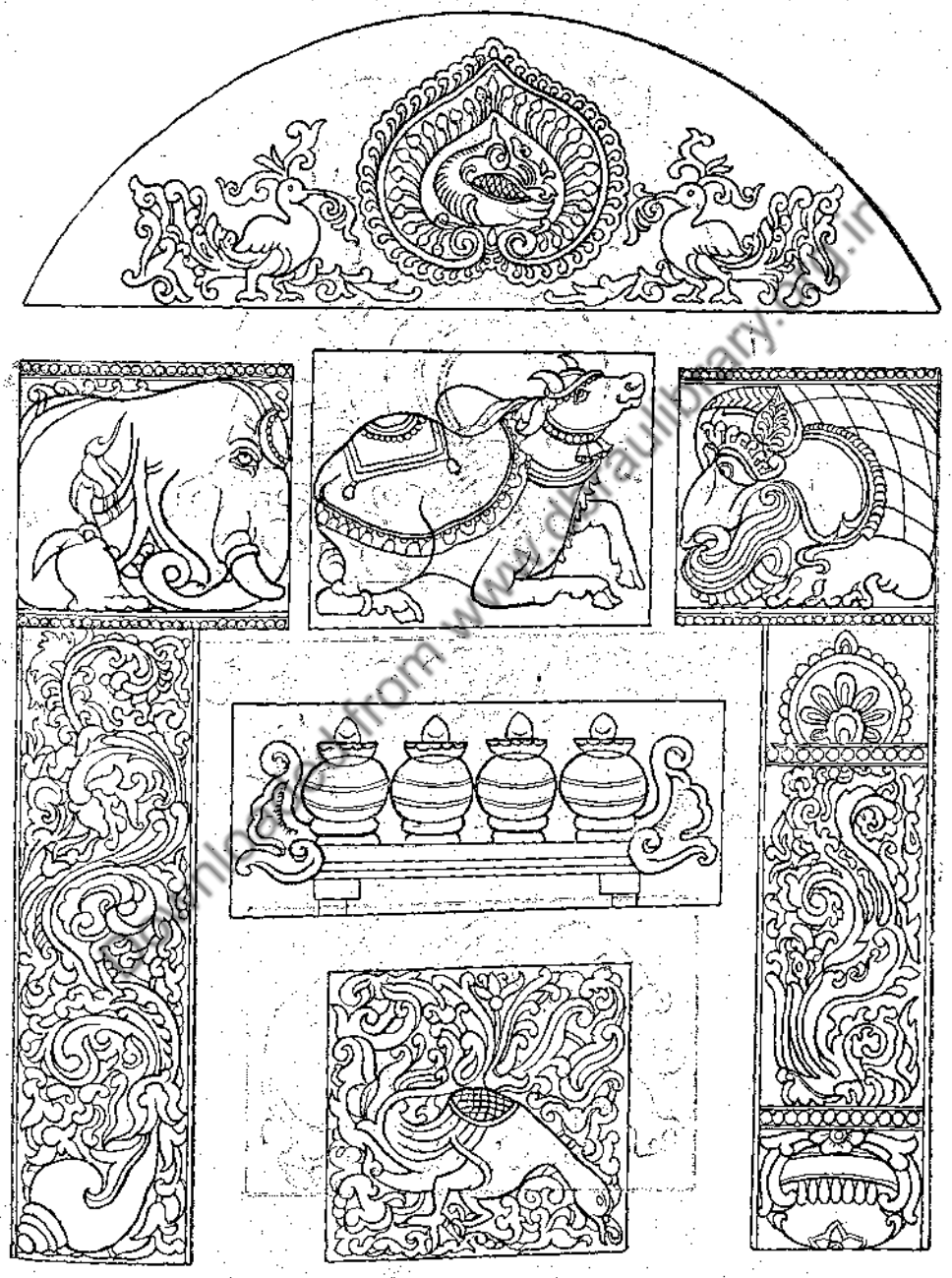

प्लेट नं० ४

प्लेट नं० ५

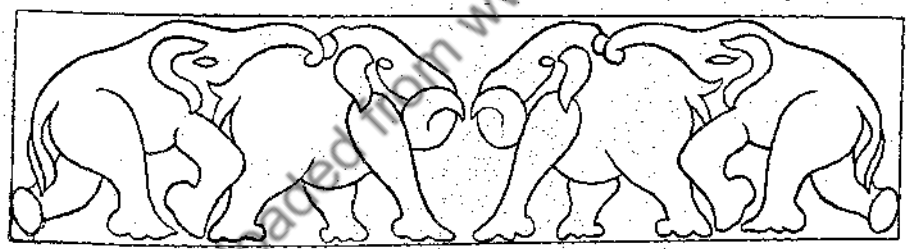

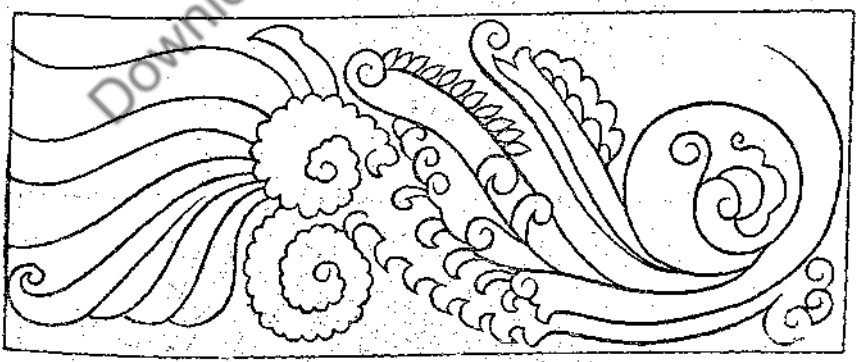

Downloaded from www.library.org.in

प्लेट नं० ६

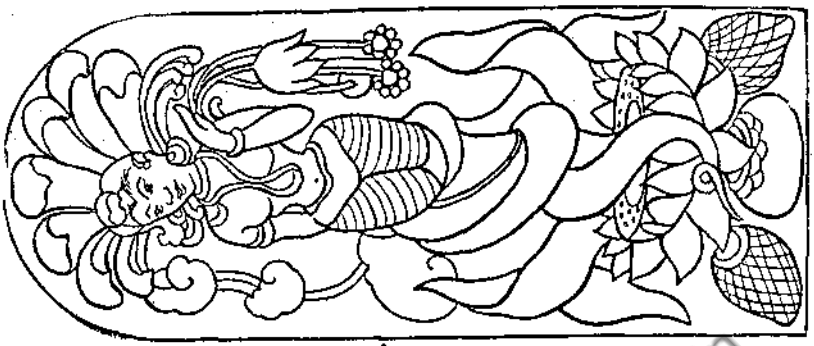

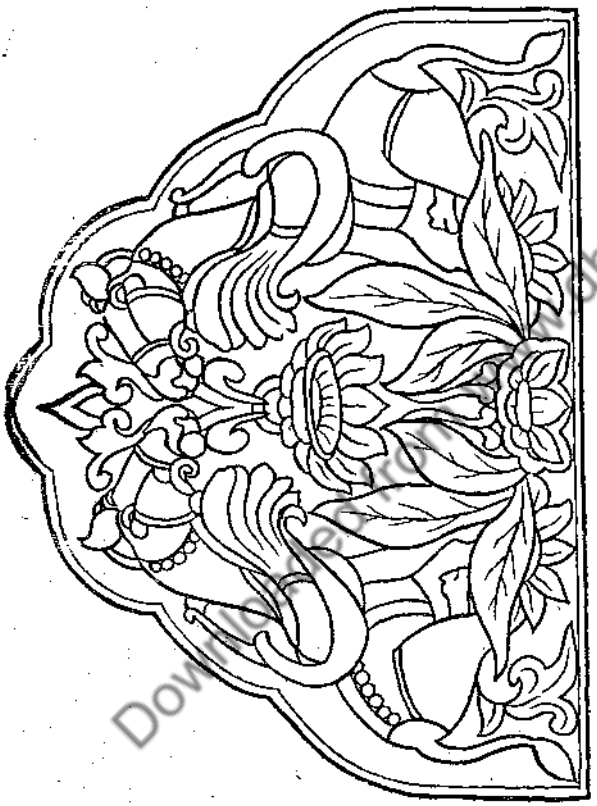

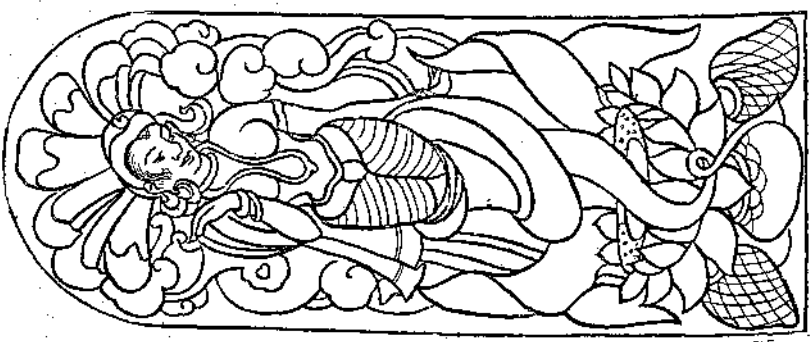

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ७

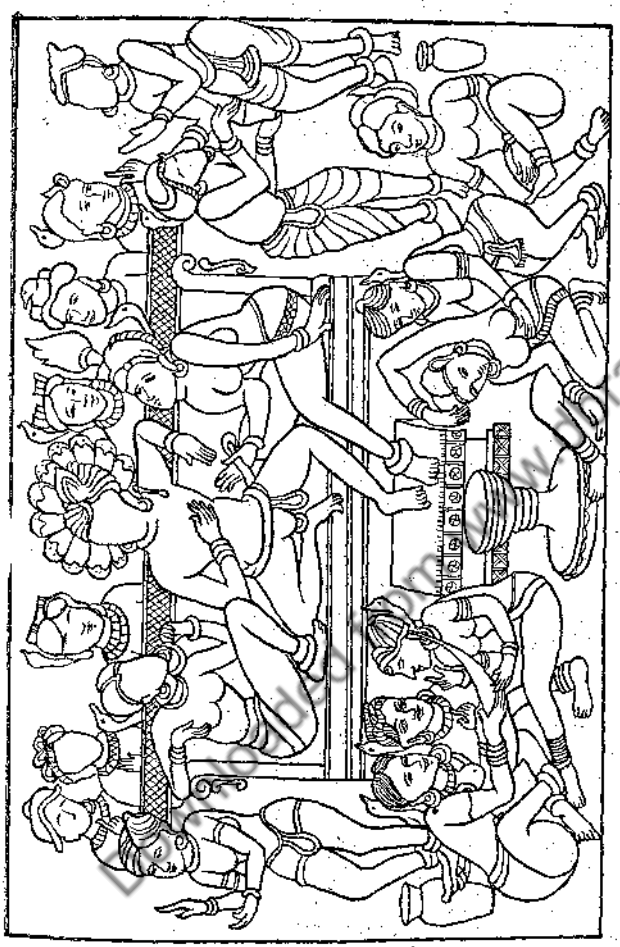

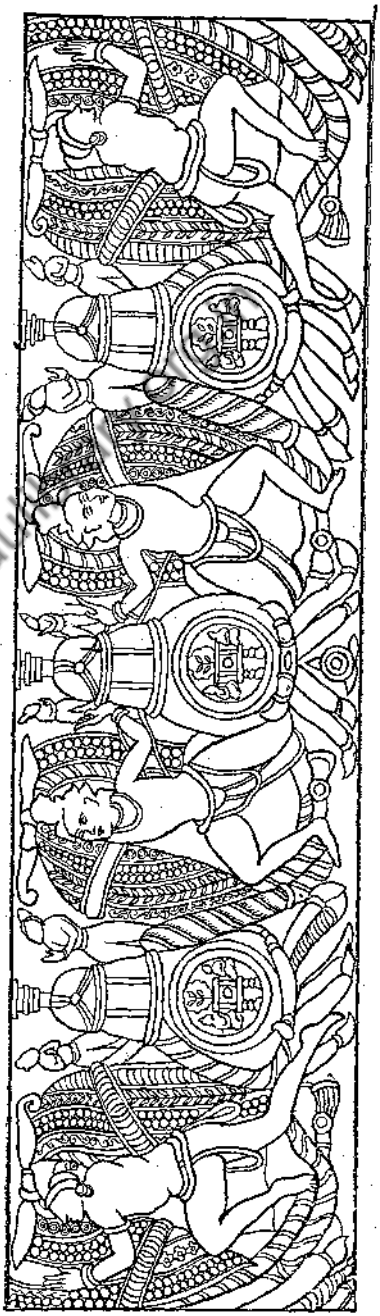

प्लेट नं० ८

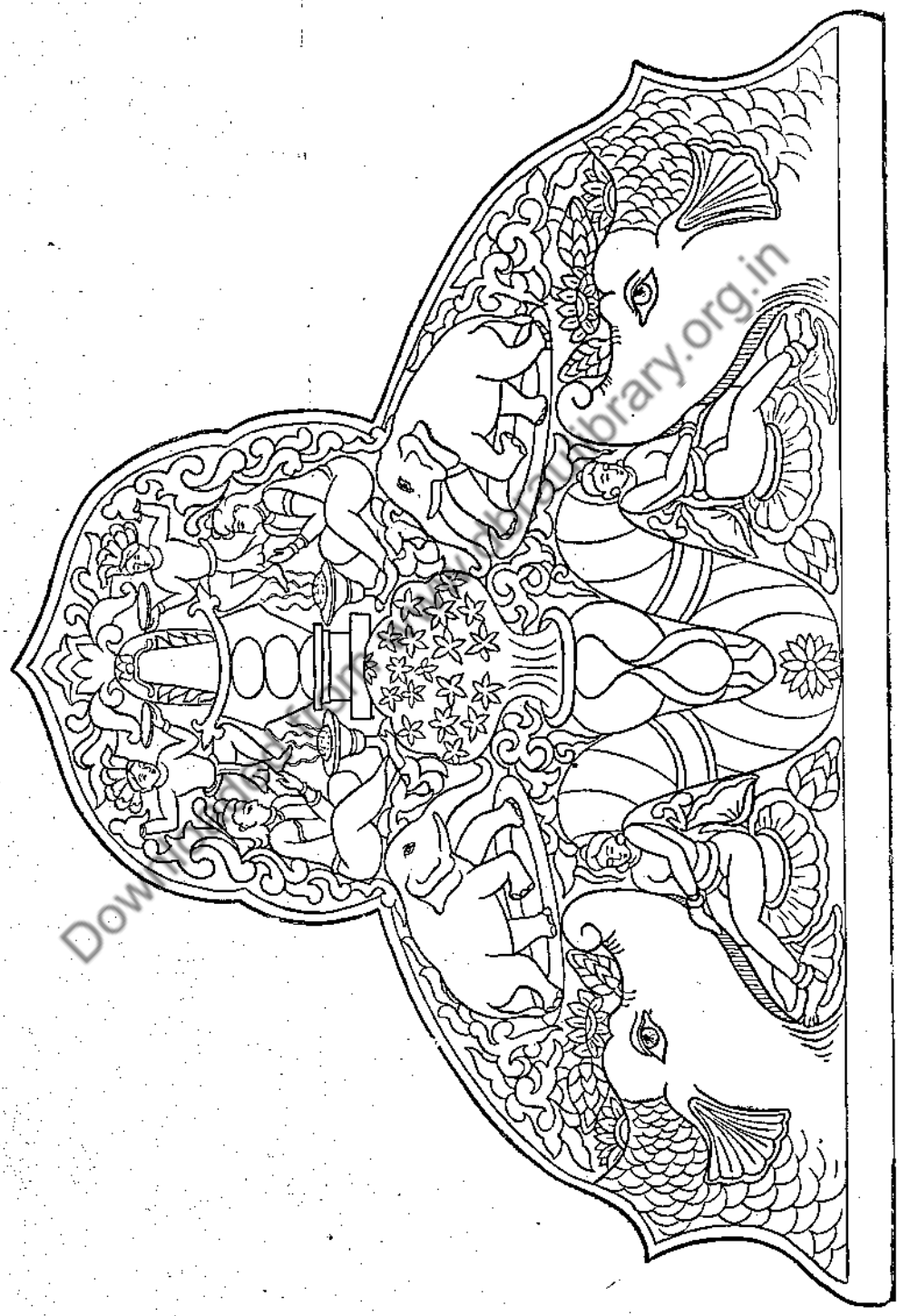

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ६

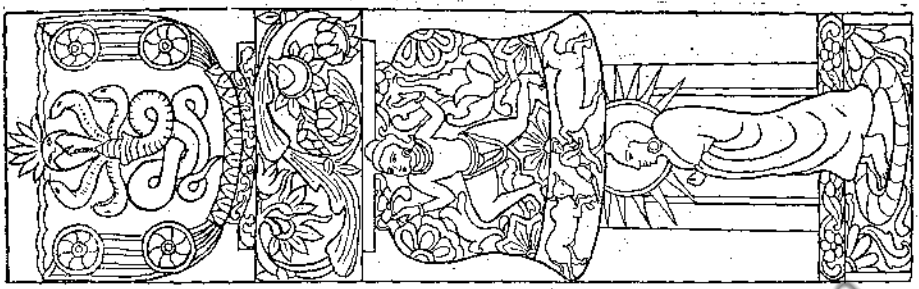

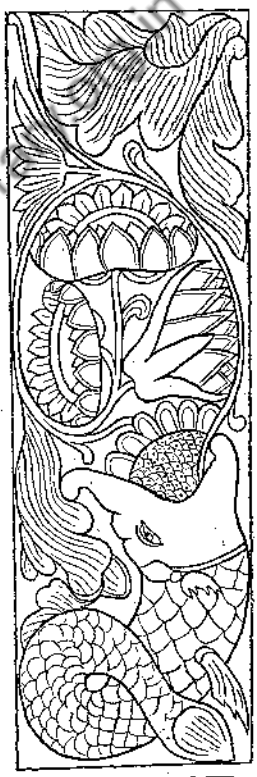

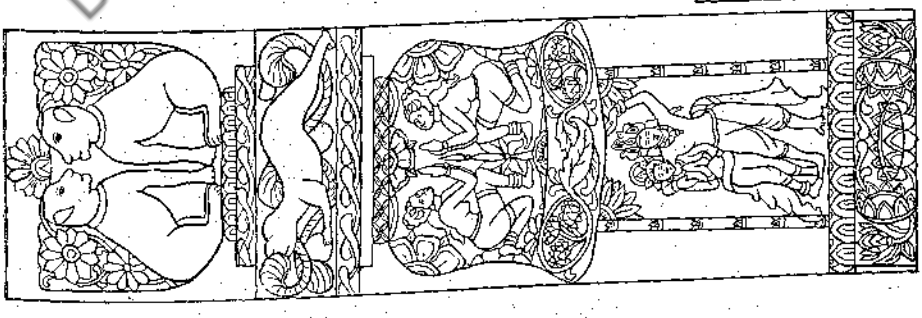

Downloaded from www.vidyalibrary.com

प्लेट नं० १०

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ११

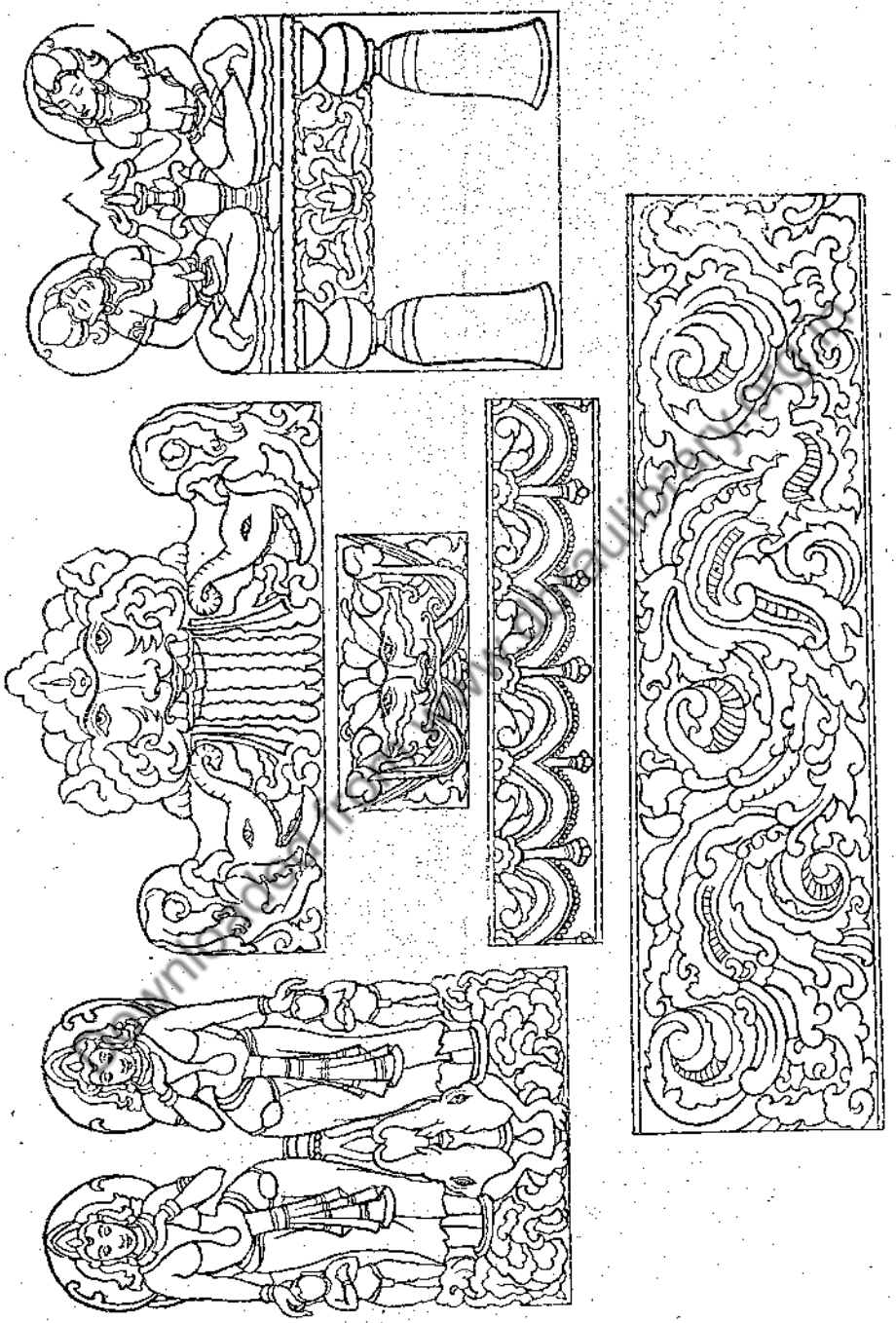

प्लेट नं० १२

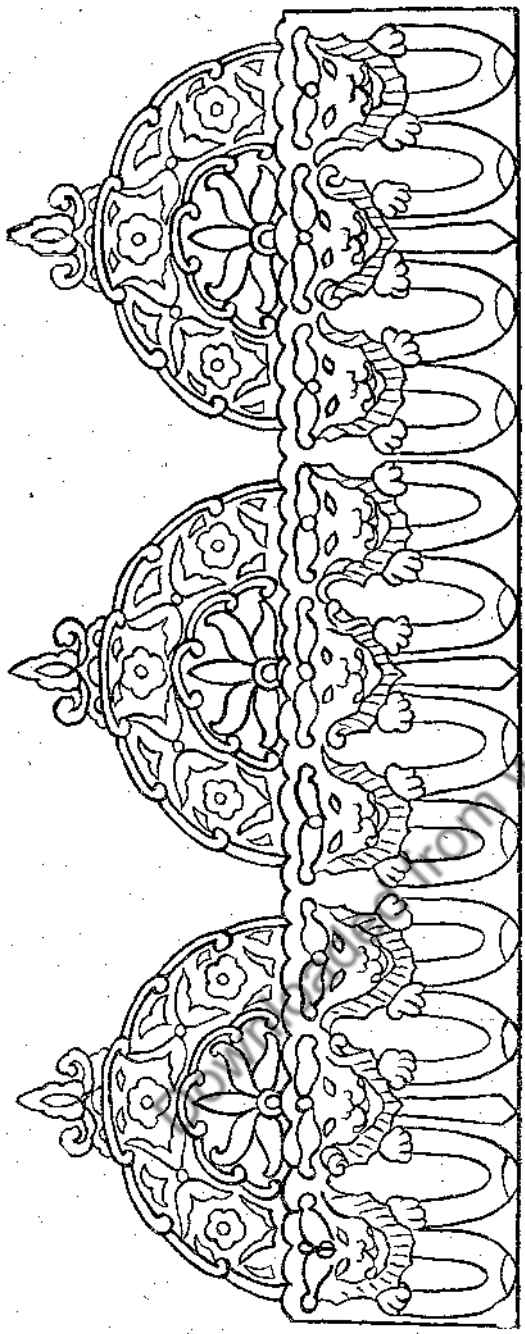

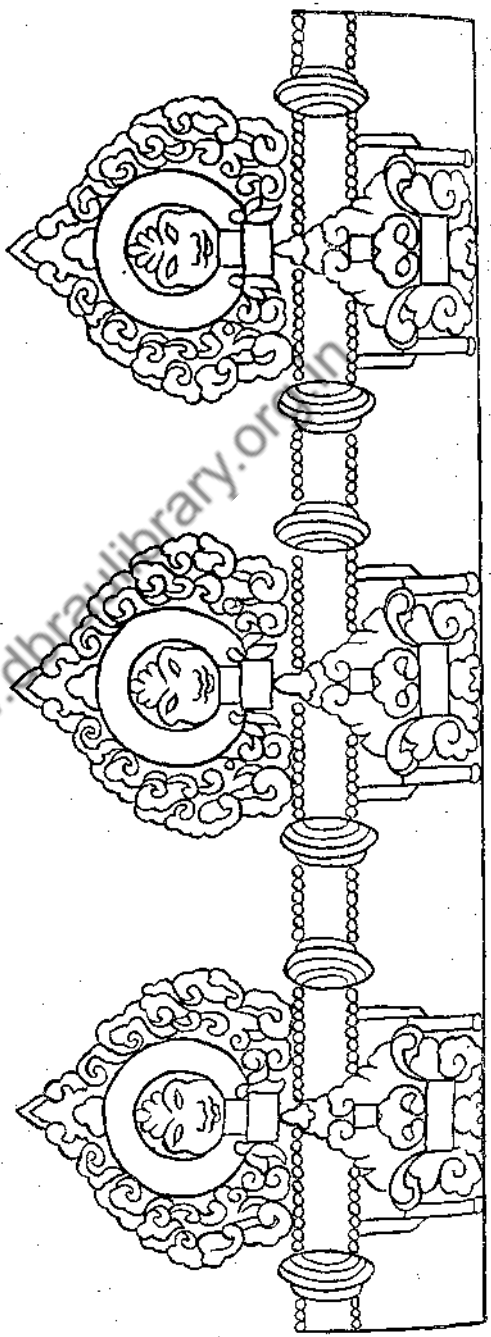

www.dbraulibrary.org.in

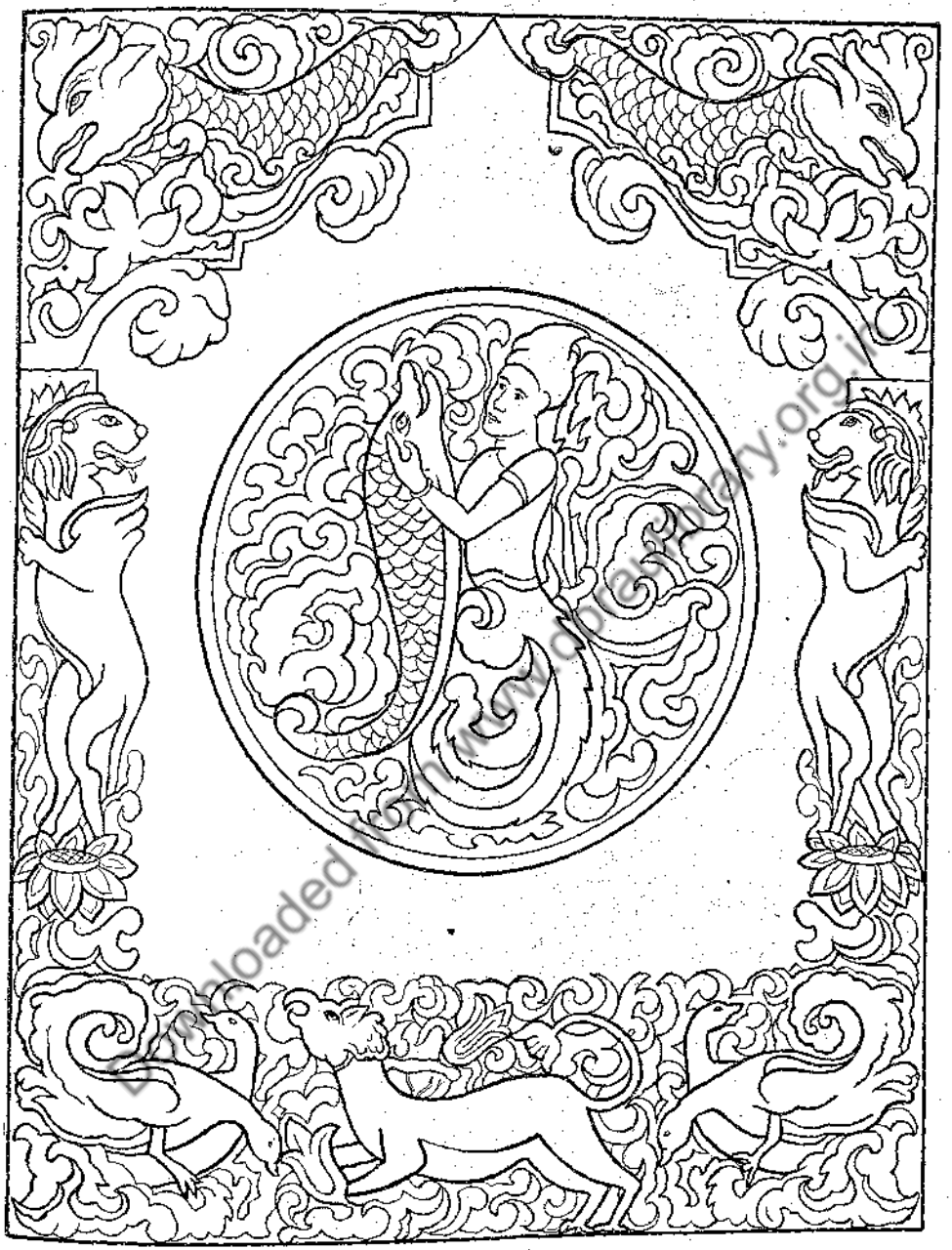

Downloaded from www.dpradlibrary.org.in

प्लेट नं० १४

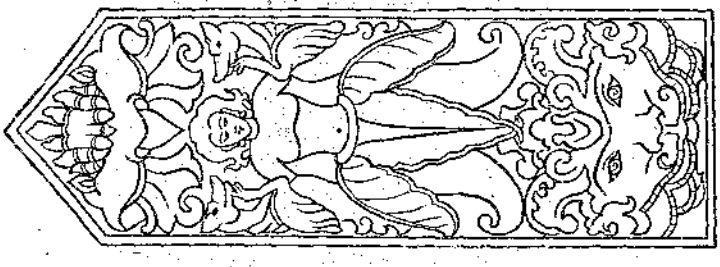

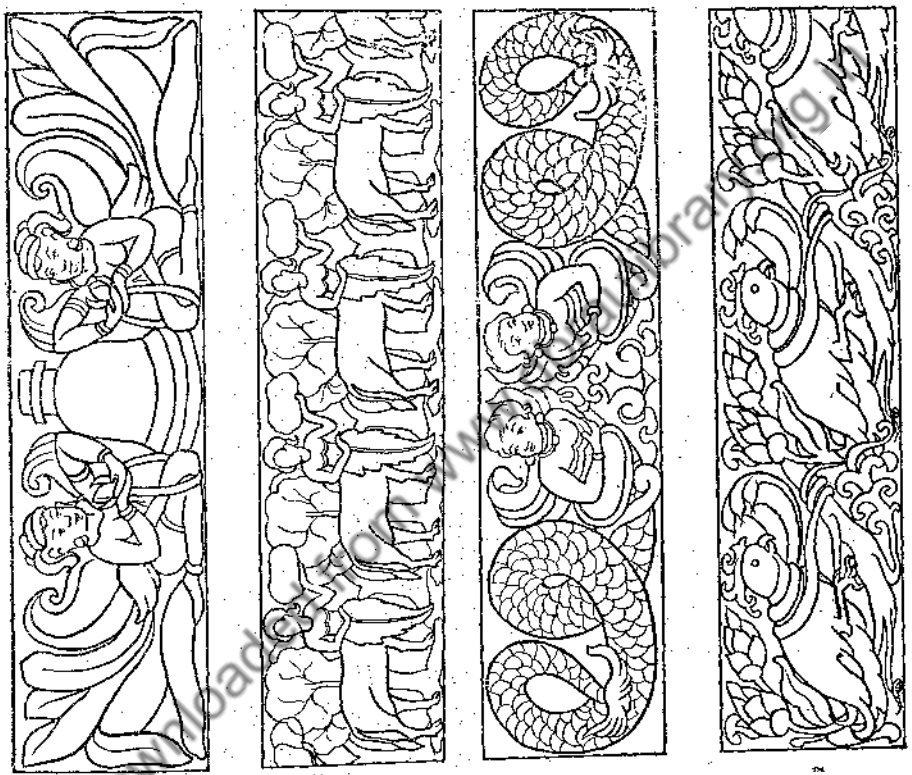

प्लेट नं० १५

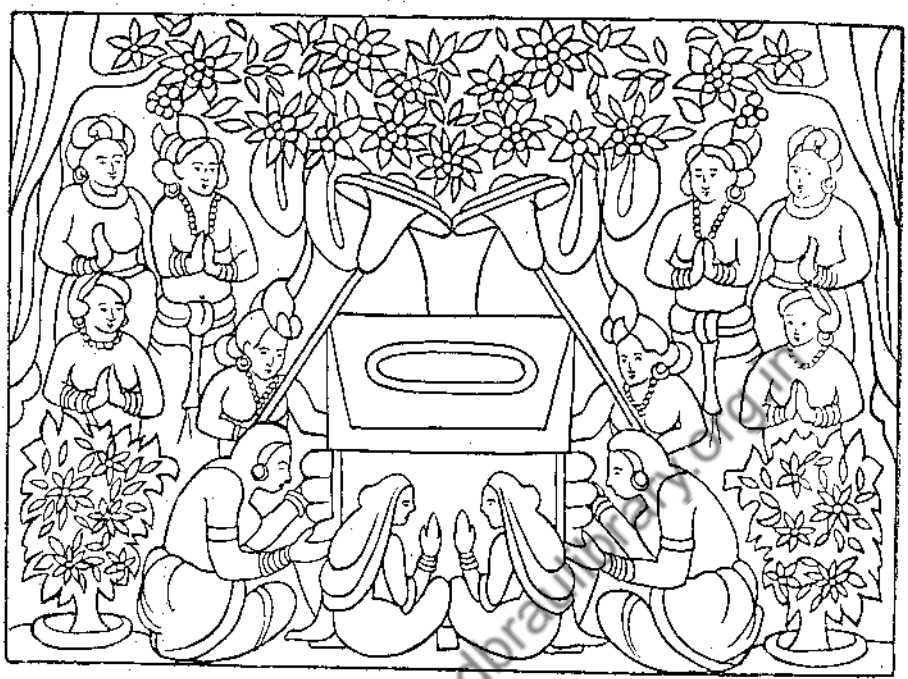

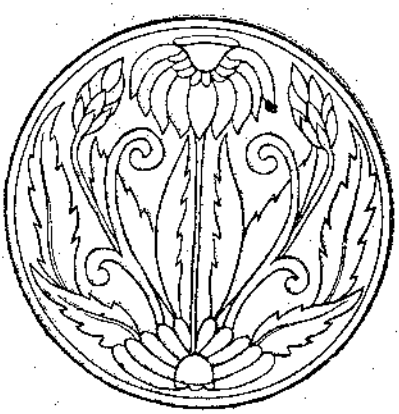

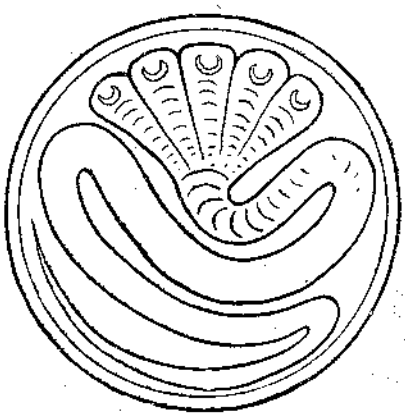

प्लेट नं० १६

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० १७

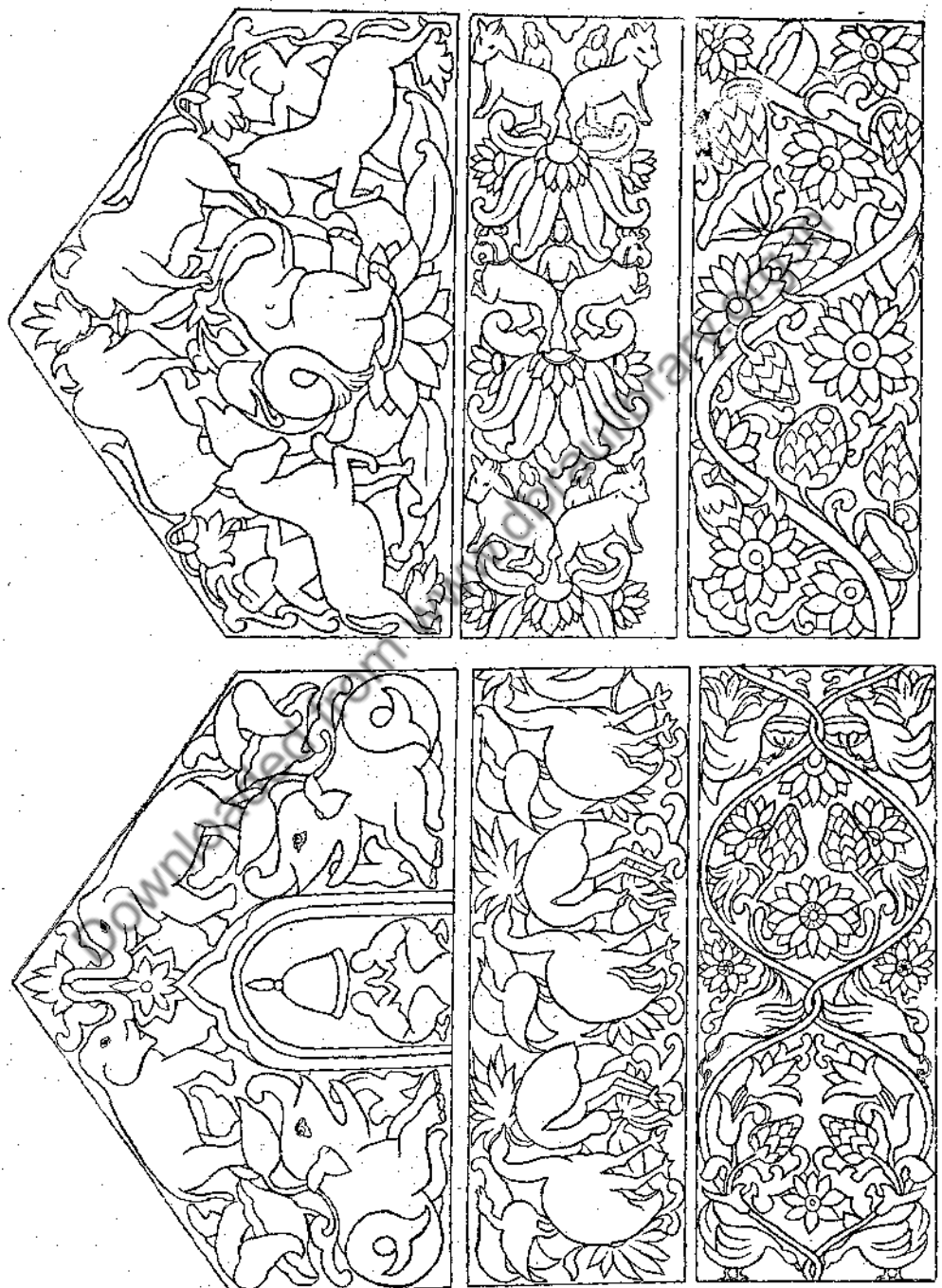

प्लेट नं० १८

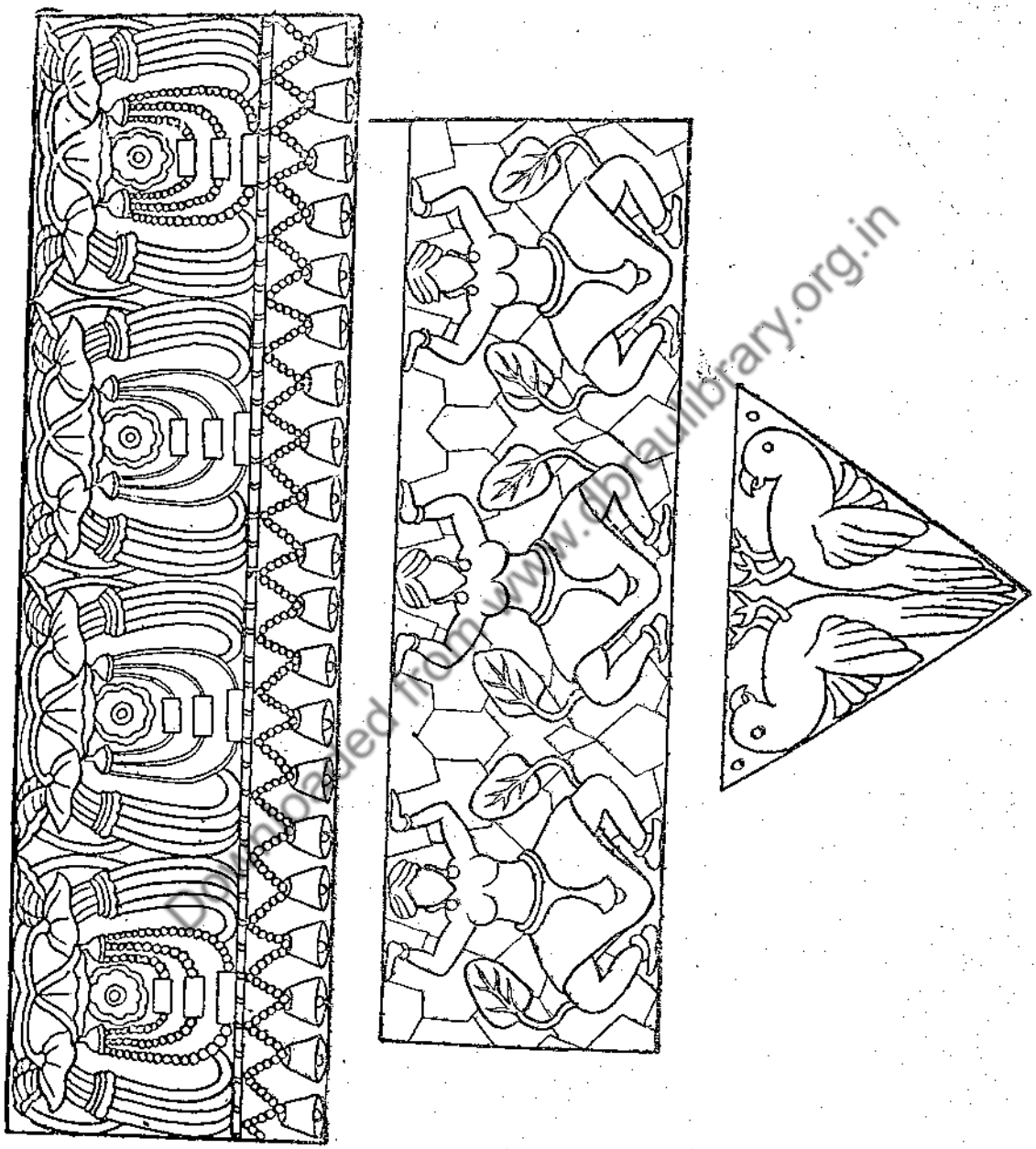

Digitalized from www.dharmalibrary.org.in

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० २०

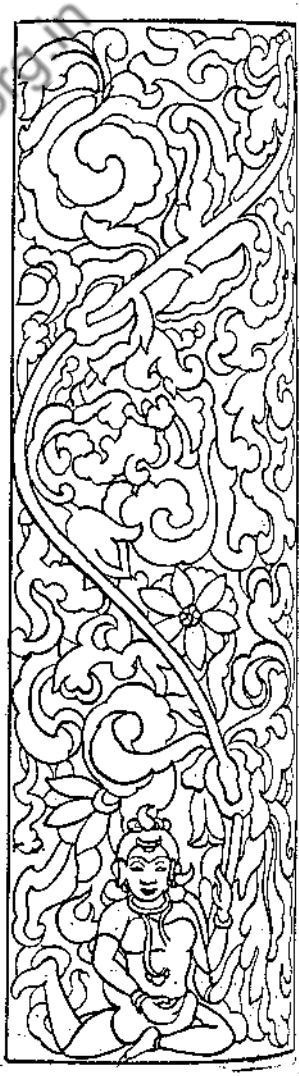

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० २१

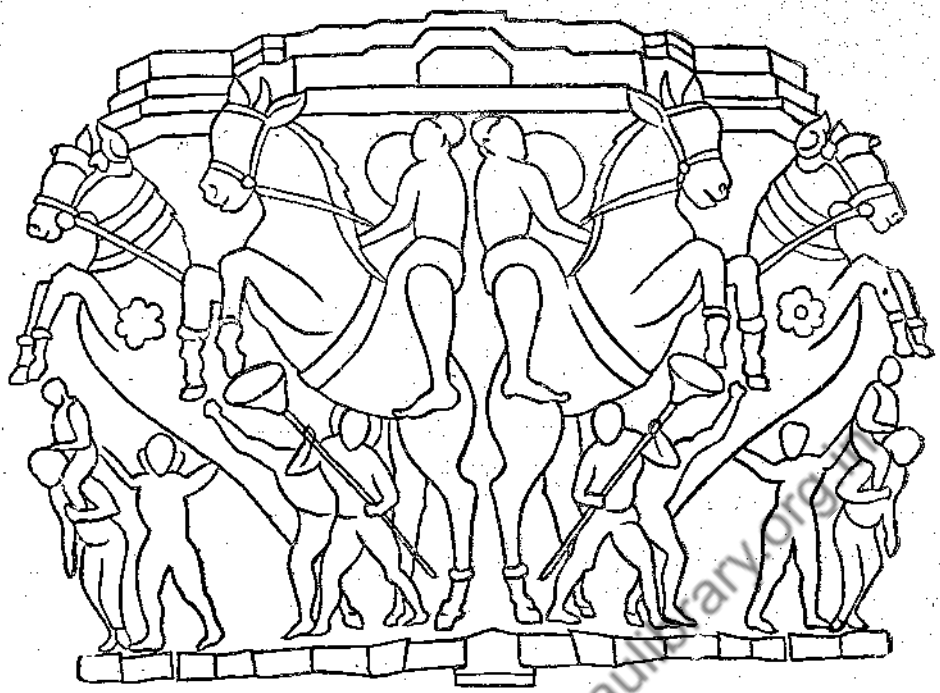

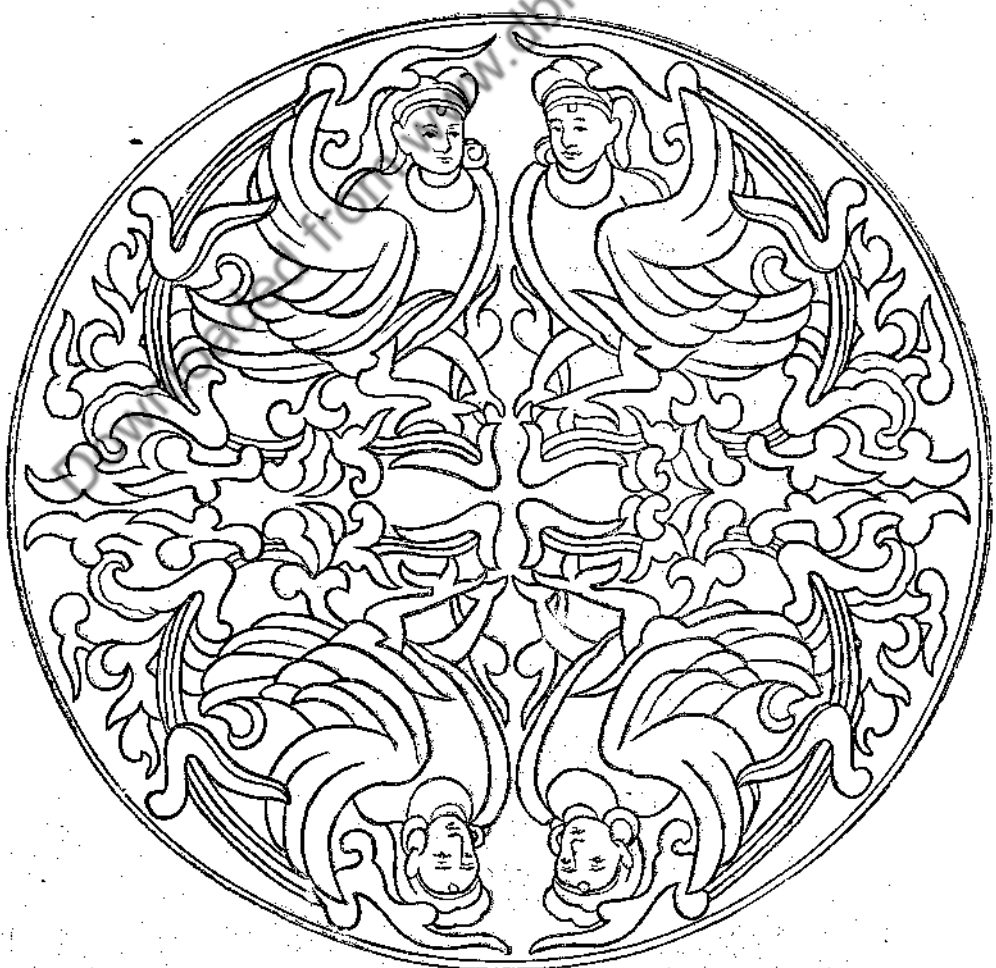

Downloaded from www.ibraulibrary.org.in

आकार कल्पना कैसे की जाती है ?

पिछले अध्यायों में हम आकार कल्पना के सिद्धान्तों का विवेचन कर आए हैं। उन सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप कैसे दिया जाता है अब इसी की विवेचना हम करेंगे।

आकार कल्पना चाहे जिस वस्तु के लिये की जाय उसके प्राथमिक नियम वैसे ही रहते हैं। फर्श पर की आकार कल्पना छत पर की आकार कल्पना से अवश्य ही भिन्न होगी किन्तु स्थान को देखते हुये दोनों में रूपों का सौन्दर्य और प्रभावोत्पादकता होनी चाहिये। अतएव एक निश्चित स्थान (वृत्त, वर्ग, आयत आदि) किस प्रकार भरा जाता है कि कोई कोना रिक्त न लगे और न कोई स्थान घिचपिच लगे यही यही बताने का हमारा प्रयत्न होगा।

१—एक दिये हुये आकार के पहले दो भाग कर लिये। २—उसमें कोई सुन्दर सी कल्पना कर उसी को उलट कर दूसरी ओर बना लिया। ३—इसके पश्चात फिर यदि बीच में स्थान अधिक बच जाता है तो उसे भरने के लिये कोई और कल्पना कर ली। यह हमारी आकार कल्पना की इकाई बन गई। इसी की आवृत्ति से हम पूरी जगह भर लेते हैं। यदि फिर भी हम देखते हैं कि कोई जगह खाली सी लगती है तो उसे भी किसी छोटी सी आकार कल्पना से भर लेते है जो उसी से सम्बन्धित हो। इस प्रकार हमारी आकार कल्पना का रेखा रूप तैयार हो जाता है। इसके बाद अपनी रुचि के अनुसार रङ्ग योजना बनाकर इम उसमें रङ्ग भर सकते हैं। रङ्ग योजना के सम्बन्ध में हम पहले बता चुके हैं।

नोटः—यह आवश्यक नहीं कि इकाई की आवृत्ति द्वारा ही आकार कल्पना पूरी बन सके। बहुत सी आकार कल्पनायें भिन्न-भिन्न रूपो द्वारा पूरी की जाती हैं जिसके उदाहरण पुस्तक में दिये गये हैं। यहां केवल किनारी और बीच की आकार कल्पना के नमूने दिये गये हैं। आकार कल्पना की अन्य पद्धतियां क्रमानुसार प्लेटों के साथ देदी गई हैं।

Downloaded from www.dreamlibrary.org.in

प्लेट नं० २२

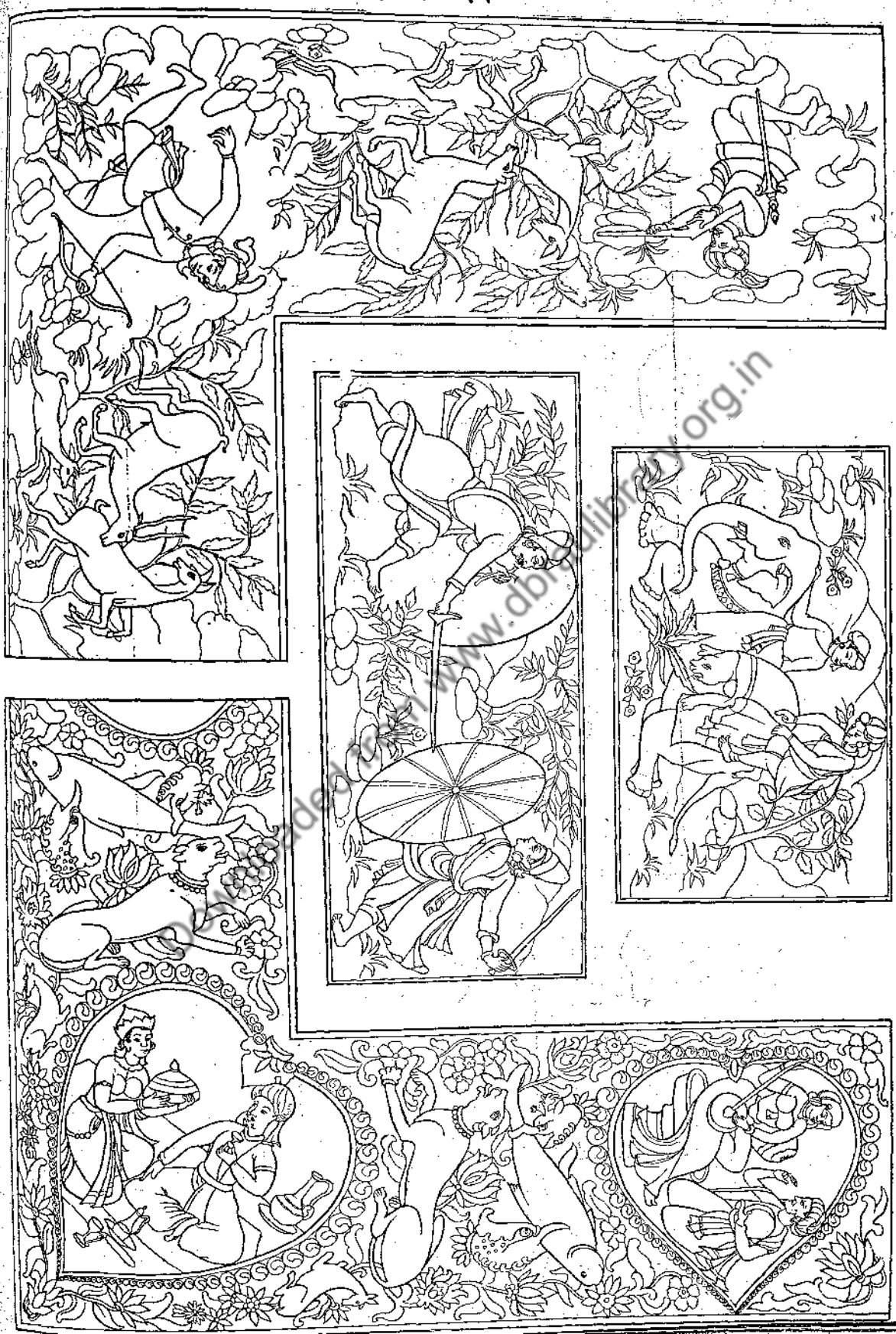

प्लेट नं० २३

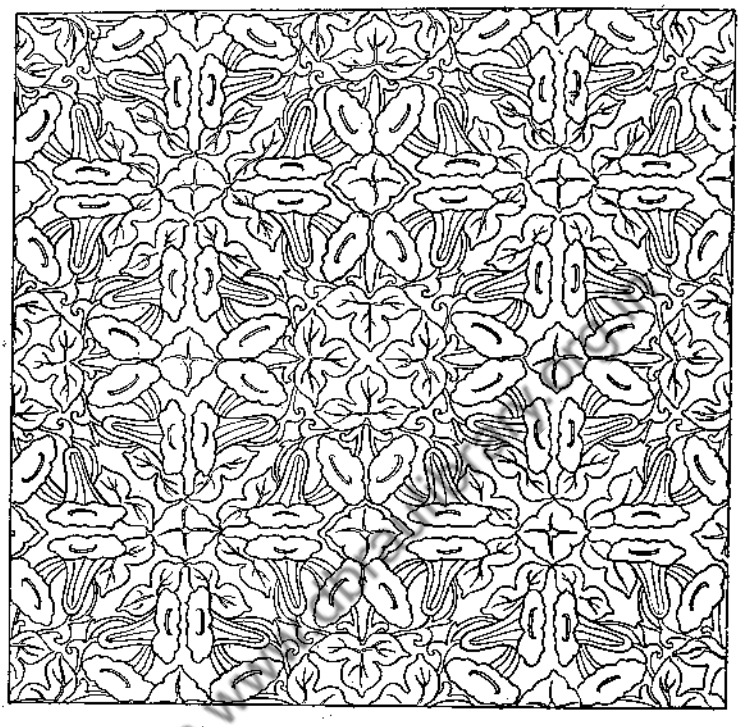

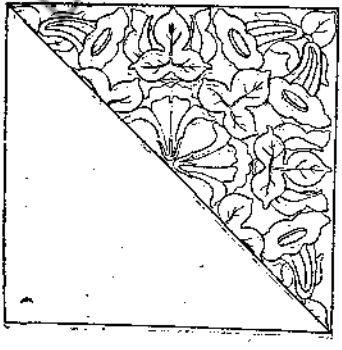

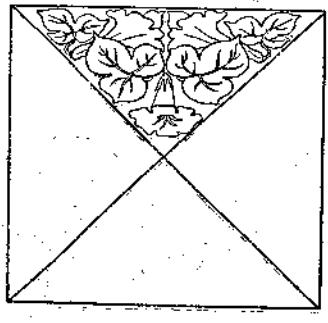

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० २४

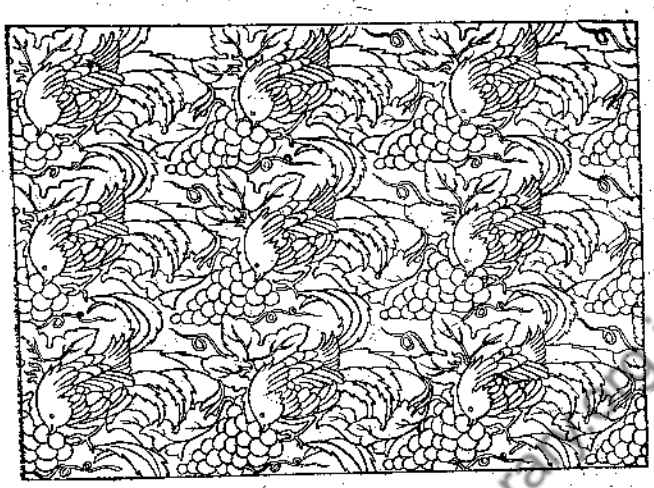

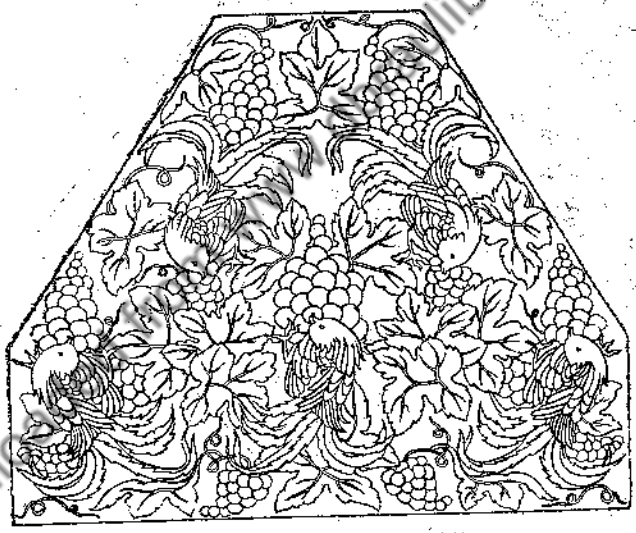

Downloaded from www.dmlibrary.org.in

प्लेट नं० २५

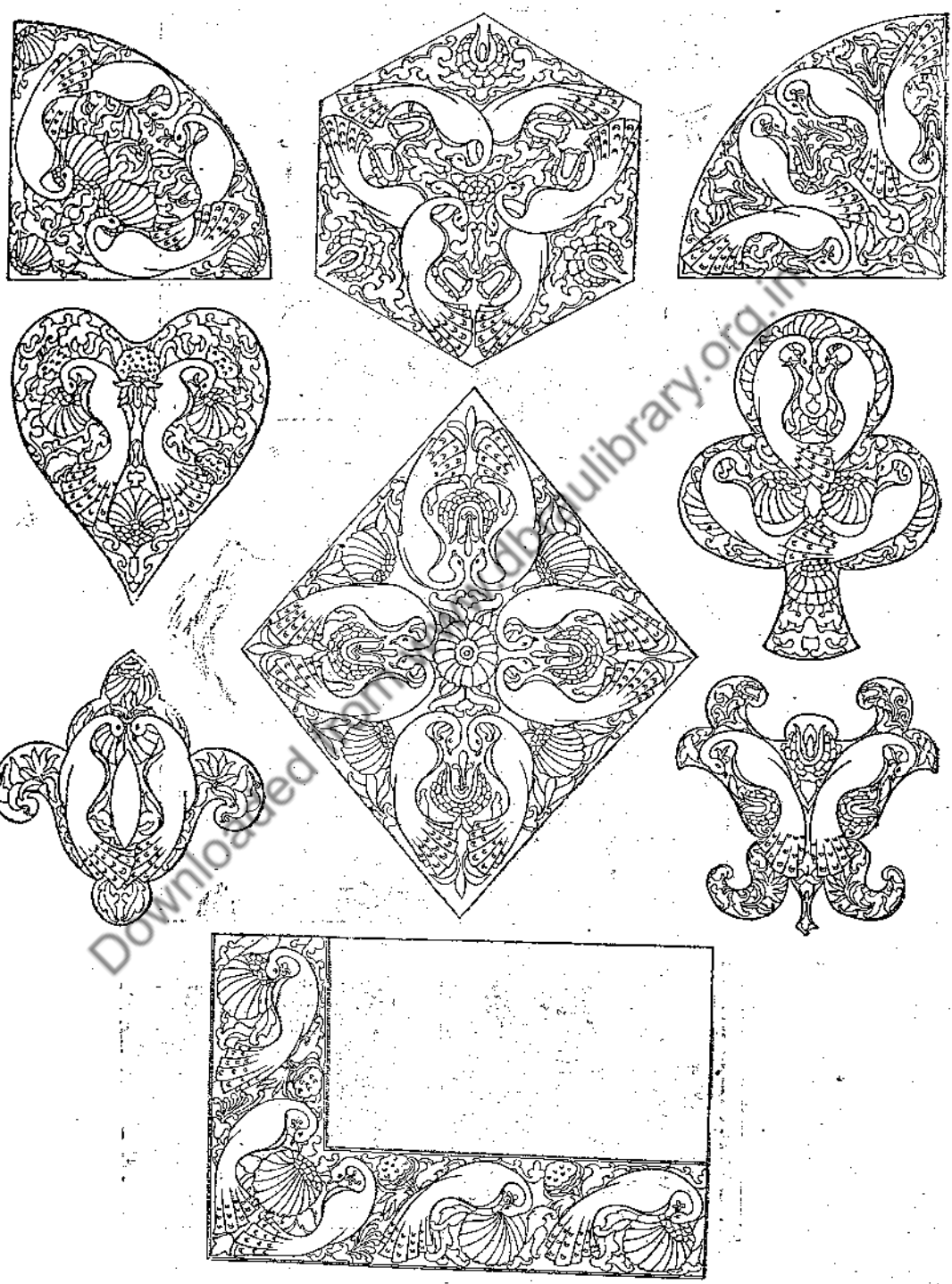

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० २६

किनारी की आकार कल्पनाएँ

प्रकृति नई-नई कल्पनाएँ प्राप्त करने के लिये अक्षय भण्डार है। सच पूछिये तो मनुष्य की कल्पना जागृत वहीं से होती है। इन आकारों में यही दर्शाने का प्रयत्न किया गया है कि किस प्रकार प्रकृति की किसी एक वस्तु को आलंकारिक रूप देकर आकार कल्पना की इकाई बनाली जाती है। पहले उसका रूप अतिसाधारण होता है अर्थात पत्तियें और फूल। आगे चलकर उनमें पक्षियों, तितलियों या पशुओं की आकृति का भी समावेश कर उन्हें जटिल बना लिया जाता है। अधिक उच्च स्तर पर पहुँच कर जब कल्पना मौर जागृत हो जाती है तो कुछ काल्पनिक रूप भी आने लगते हैं। या तो उन्हें अलग रखते हैं या प्रकृति के अन्य रूपों के साथ।

आकार कल्पना को और आकर्षक बनाने के लिए या उन्हें बिल्कुल नया रूप देने के लिये व्यंग चित्रों का प्रयोग होता है। इस विभाग की अन्तिम दो आकार कल्पनाएँ इसी प्रकार की है। बच्चों के लिये इनमें विशेष आकर्षण होता है। इन्ही व्यंग्य चित्रों के द्वारा किसी घटना दृश्य को भी अङ्कित कर आकार कल्पना की इकाई बनाई जा सकती है। उदाहरणार्थ शिकारी वाला आकार। दूसरी में पद्धति की दृष्टि से भी विविधता मिलती है। पहली और तीसरी पंक्ति में रूप तिब्बती है, दूसरी में कत्थकली नृत्य की एक मुद्रा है और अन्तिम में पुजारिन का रूप लिया गया है।

तिब्बती ढङ्ग के आकारों में मनुष्याकृतियों और प्राचीन काल्पनिक पशुओं के रूपों को सङ्गठित किया गया है। इसके लिये उस देश की प्राचीन मान्यताओं तथा पौराणिक आख्यानों का अध्ययन आवश्यक है। कत्थकली मुद्रा इस बात का संकेत है कि आकार कल्पनाओं में स्थिर सौन्दर्य को स्थान मिलता ही है, गत्यात्मक सौन्दर्य उसके सौन्दर्य और भी बढ़ा देता है। जहाँ तक रङ्गों का प्रश्न है वह दो प्रकार से हल किया जा सकता है। एक तो ऊपर से भरकर दूसरे रङ्गीन कागजों को ही काटकर सफेद कागज़ पर चिपका कर।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० २७

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

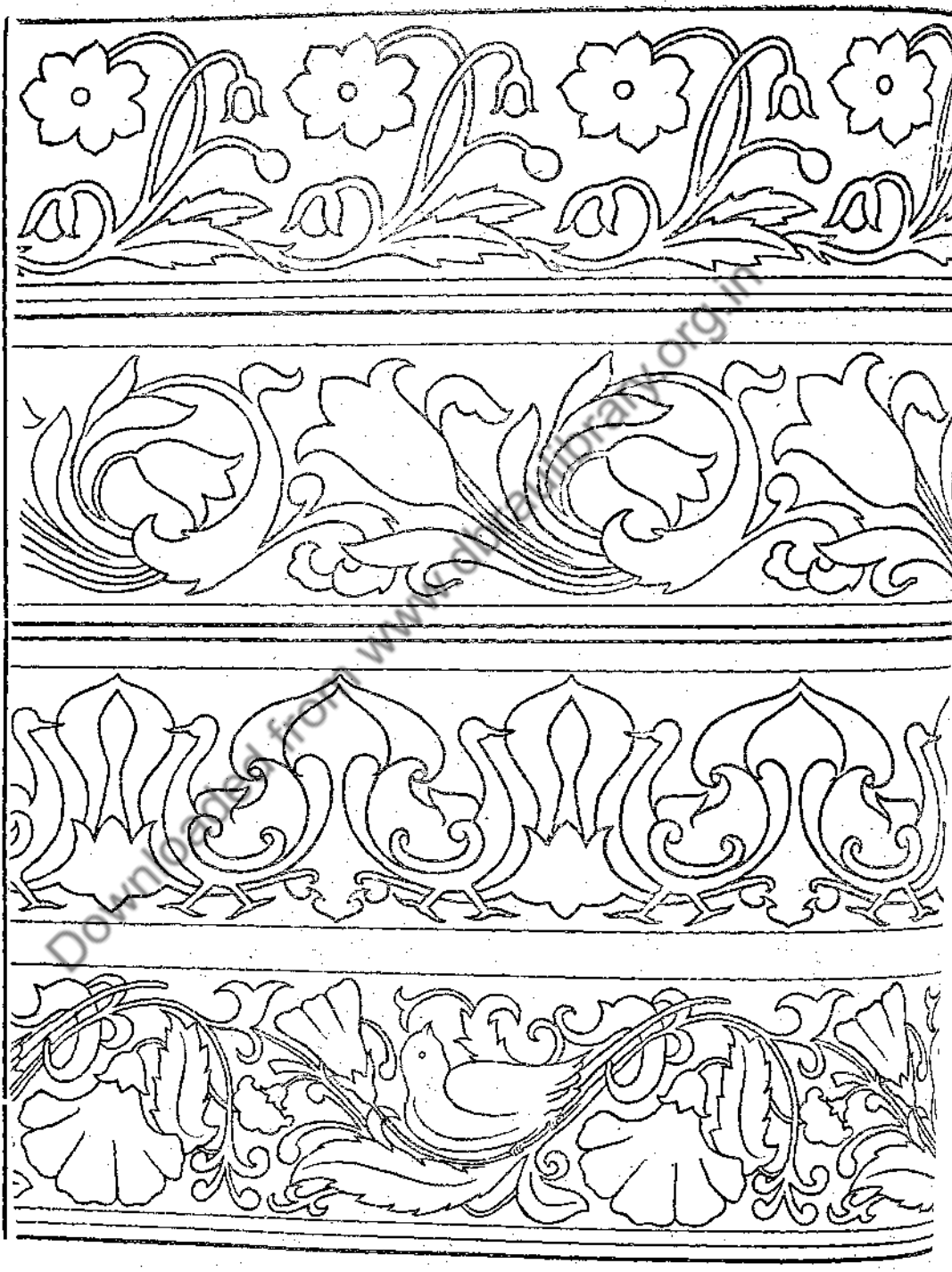

Downloaded from www.indianlibrary.org.in

प्लेट नं० २६

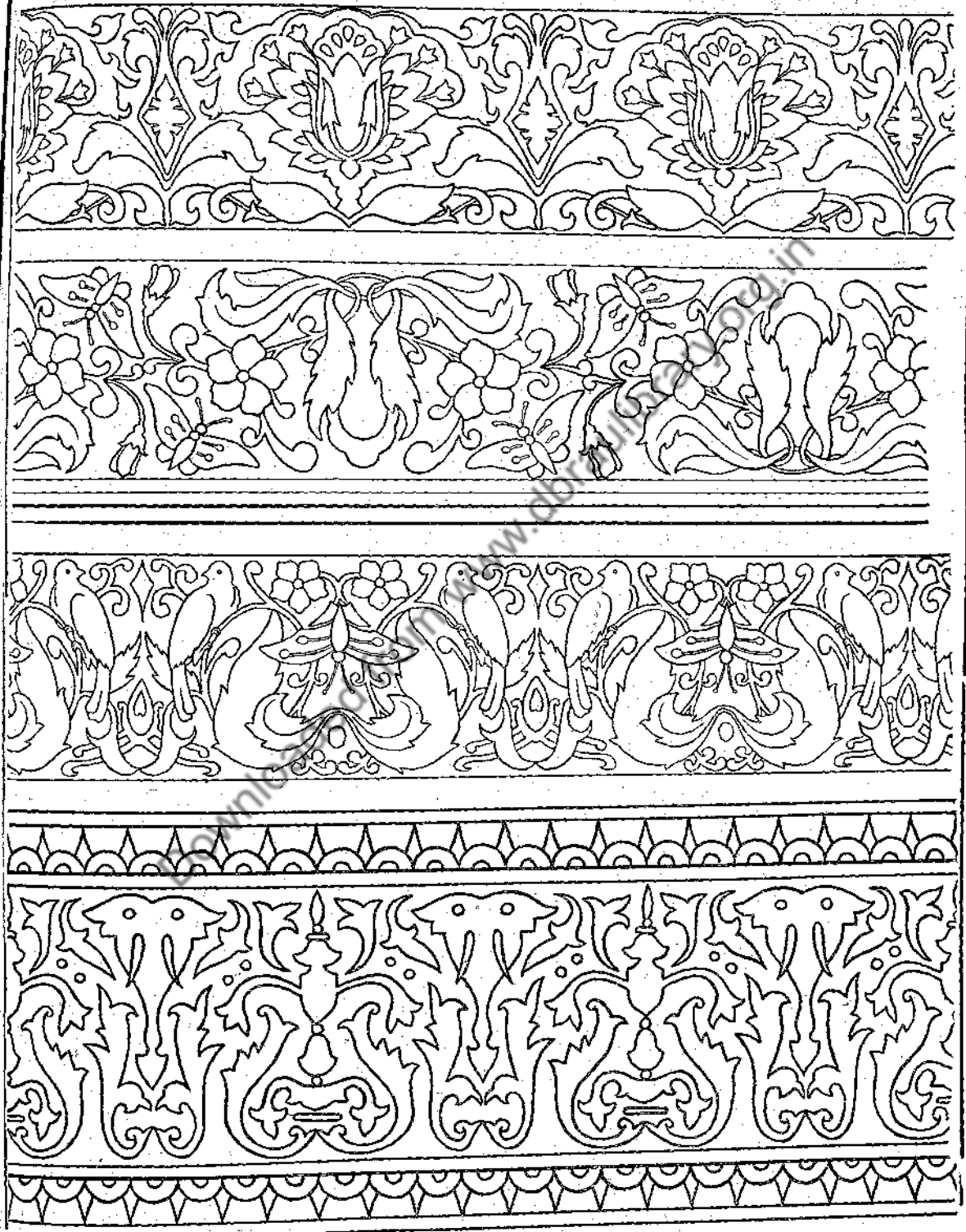

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ३०

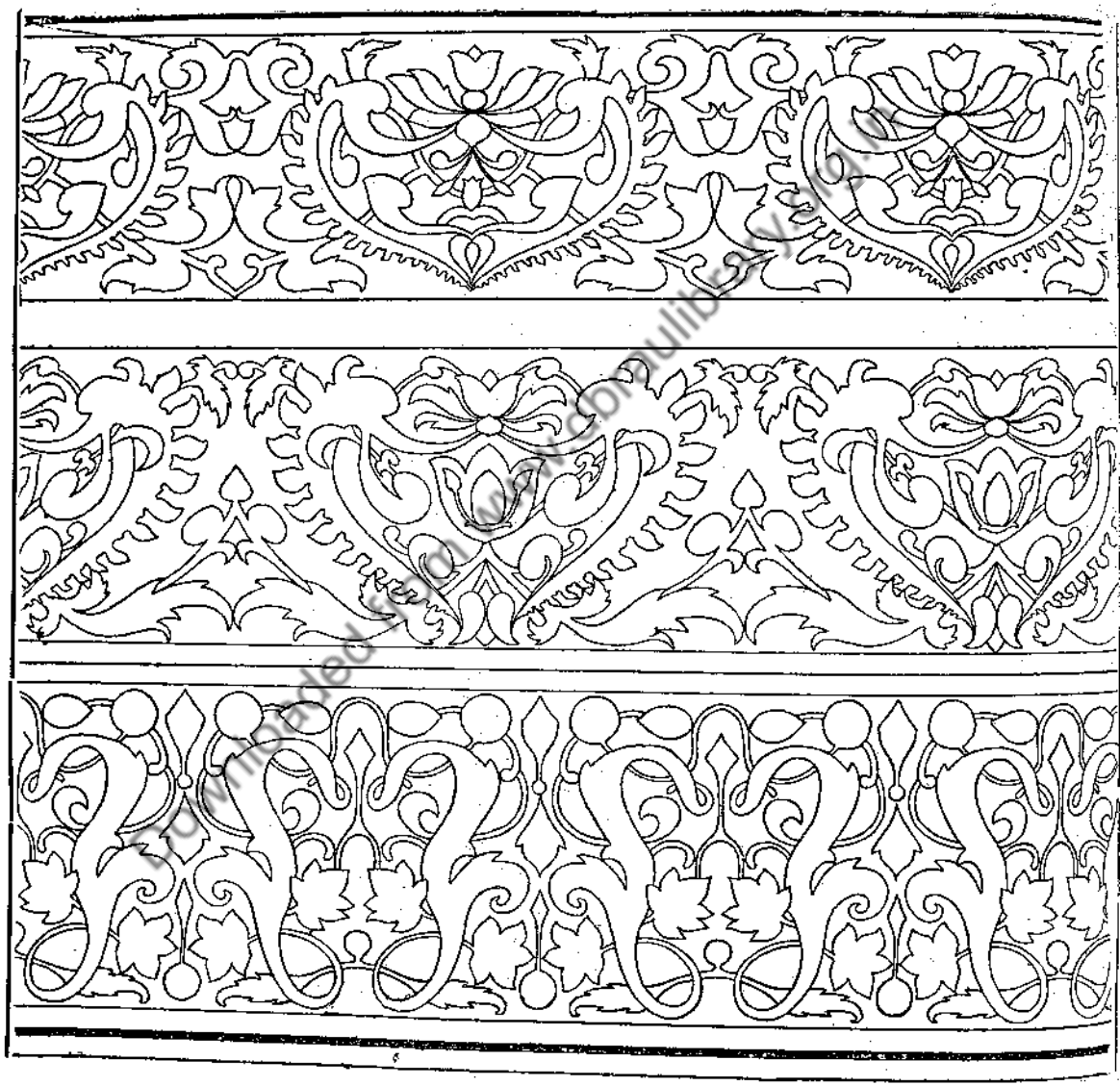

प्लेट नं० ३१

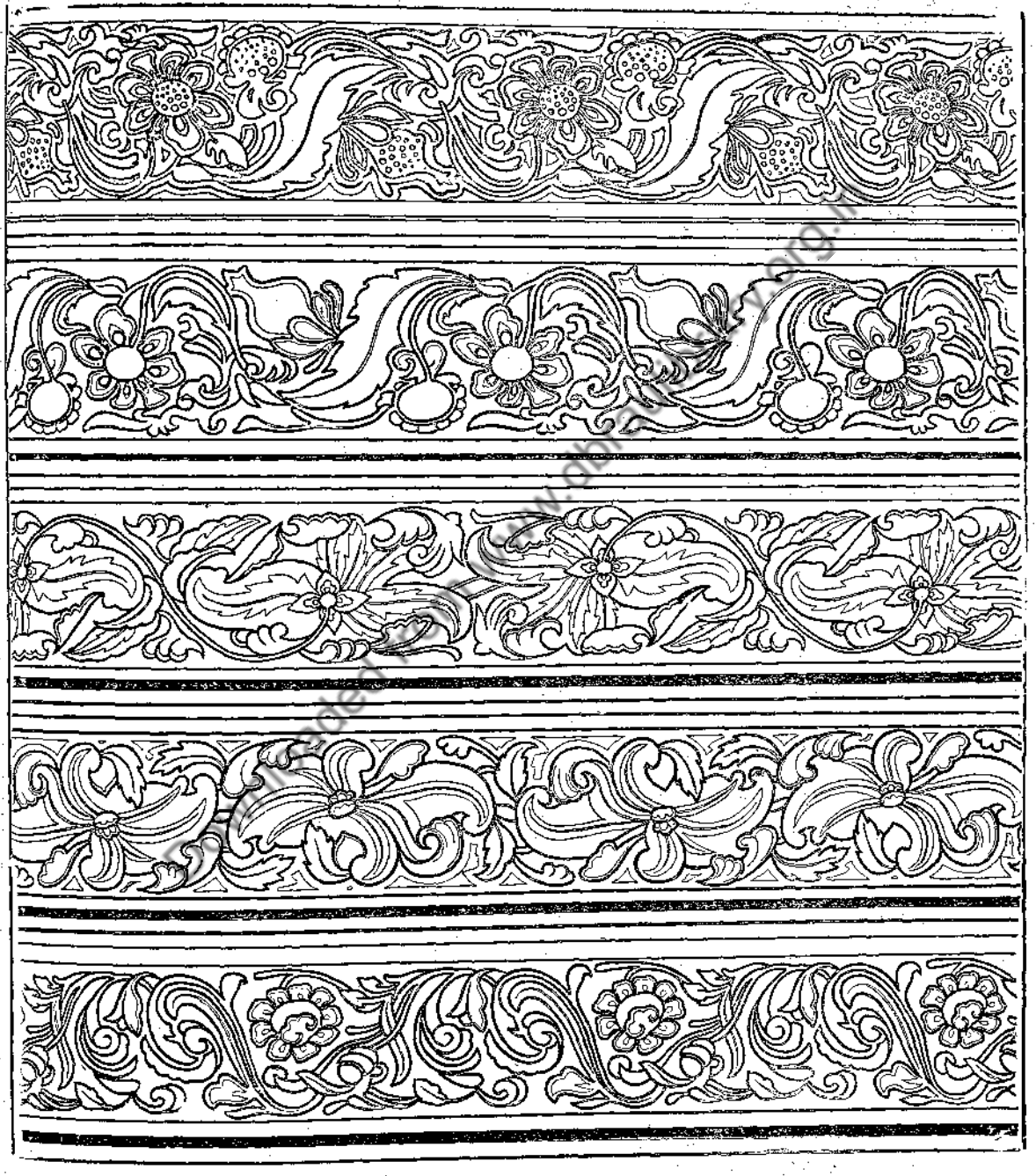

प्लेट नं० ३२

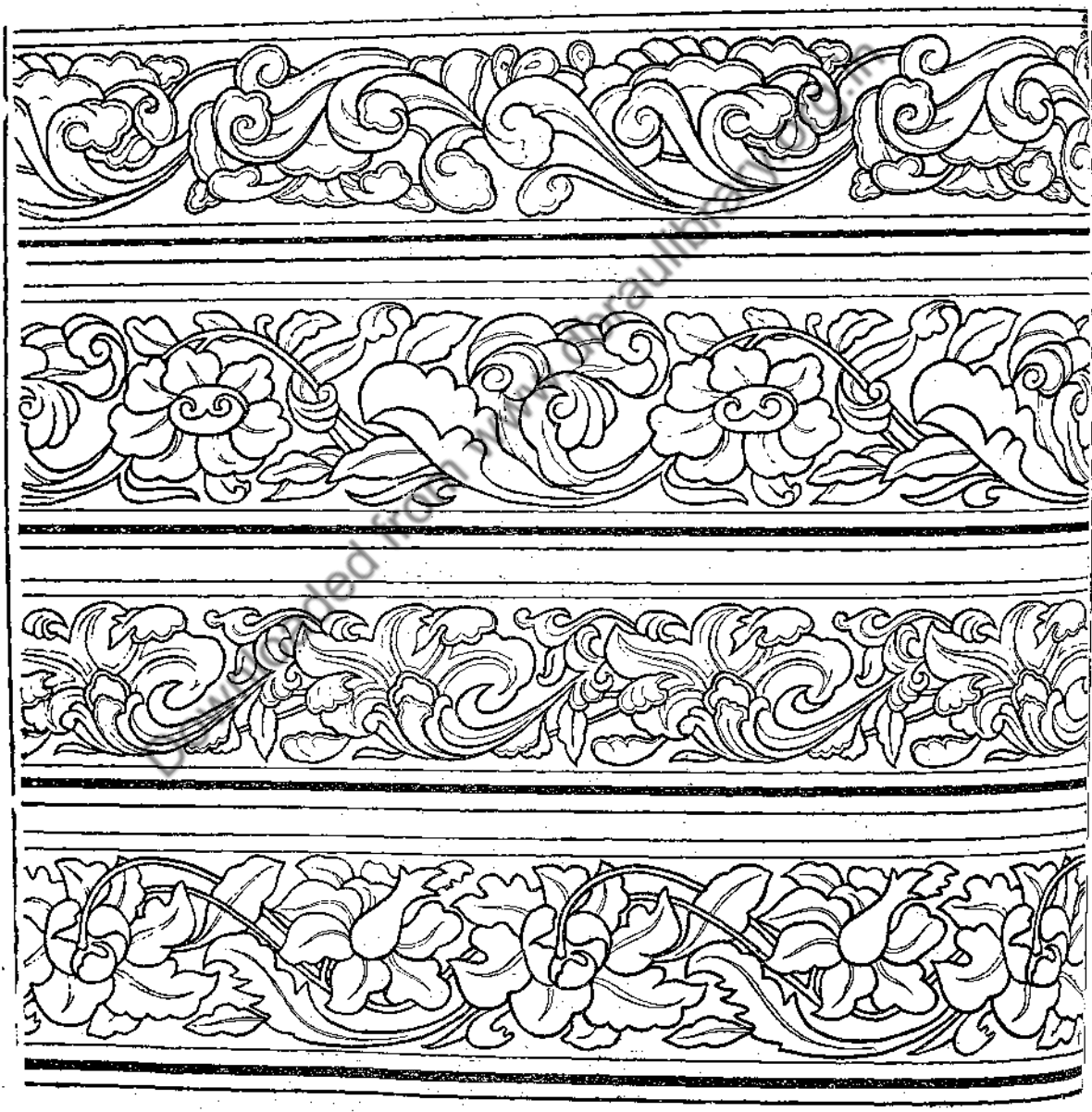

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

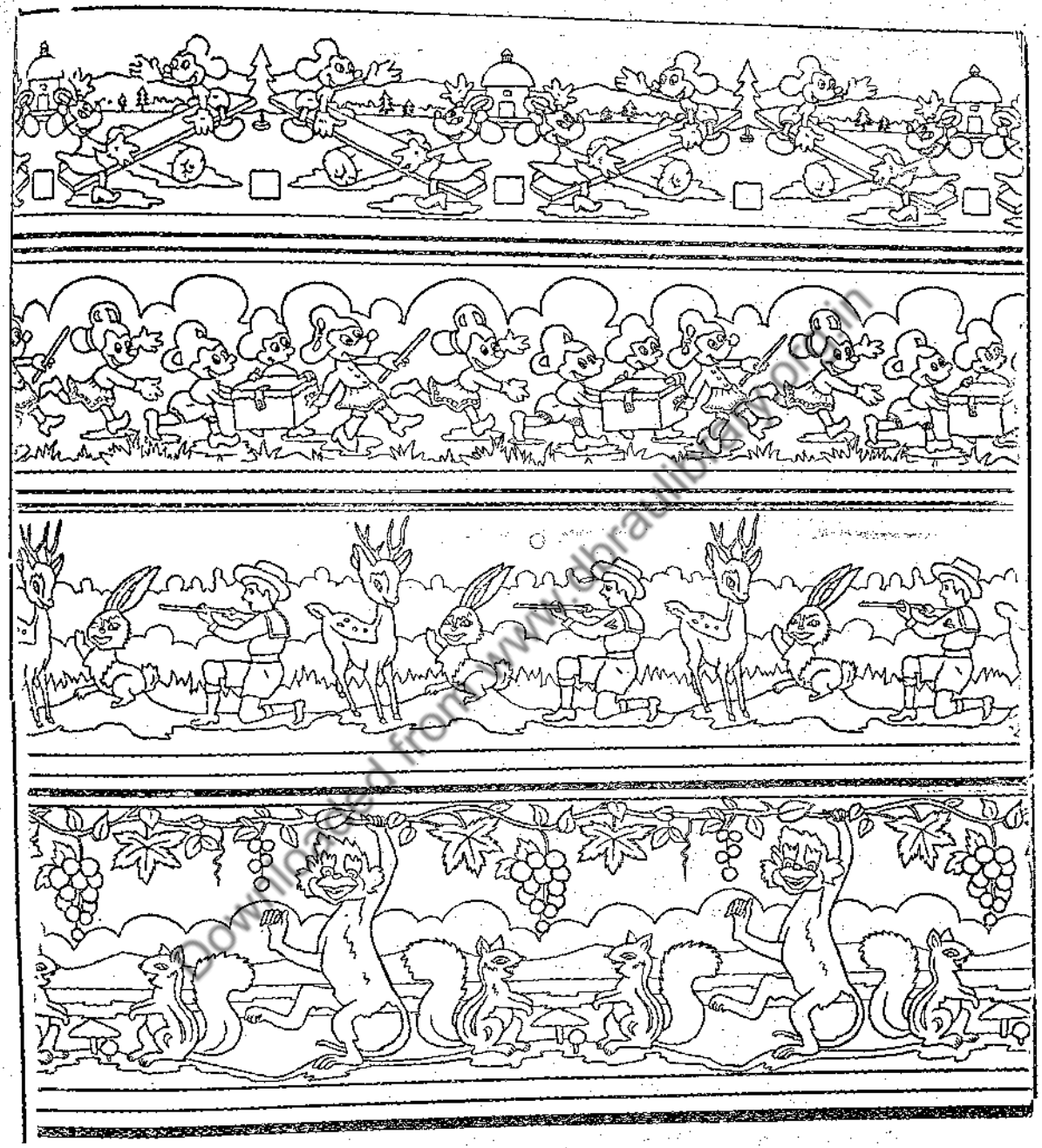

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

समष्टि रूप आकार कल्पना

नित्य प्रति की ऐसी बहुत सी वस्तुऐं होती हैं जिनमें एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक एक ही रूप की आवृत्ति होती है। वस्तु भेद से इस रूप में परिवर्तन होता रहता है। उदाहरण के लिए दीवार पर चिपकाया जाने वाला कागज़ एक प्रकार से स्थिर वस्तु है अतः उस पर बनाया जाने वाला आकार ठोस होना चाहिये। दूसरी ओर पर्दे पर का आकार गोभूमि के ढङ्ग पर बनाया जाना चाहिए ताकि हवा से उत्पन्न लहरों का प्रभाव आसानी से पैदा हो सके। इसी प्रकार से रज़ाई के लिए दूसरी प्रकार का आकार होना चाहिये और साड़ी के लिये और प्रकार का।

पद्धति के सम्बन्ध में वही नियम अपनाया जा सकता है जिसके अनुसार थोड़ी सी और सादी सी वस्तुओं को लेकर अधिक और जटिल वस्तु का समावेश किया जाता है।

मछलियों, और पशु-पक्षियों के रूप बनाते समय इस बात का ध्यान रखा जाता है कि उनके उठने दौड़ने या उड़ने की वे ही मुद्रायें लेनी चाहिए जिनमें वे बहुधा दिखाई पड़ते हैं। उदाहरण के लिये हिरन सोते भी अवश्य होंगे, जम्हाई भी लेते ही होंगे, किन्तु उनके इस रूप को कितने लोगों ने देखा है। अतः उनको चौकड़ी भरती, खड़ी या बैठी मुद्रा ही ली जाती है।

मुख्य बात इसमें ध्यान देने की यह है कि उसकी इकाइयाँ एक दूसरे से इस प्रकार मिली होनी चाहिए कि इकाई का प्रभाव उत्पन्न हो न कि अलग-अलग इकाइयों का।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

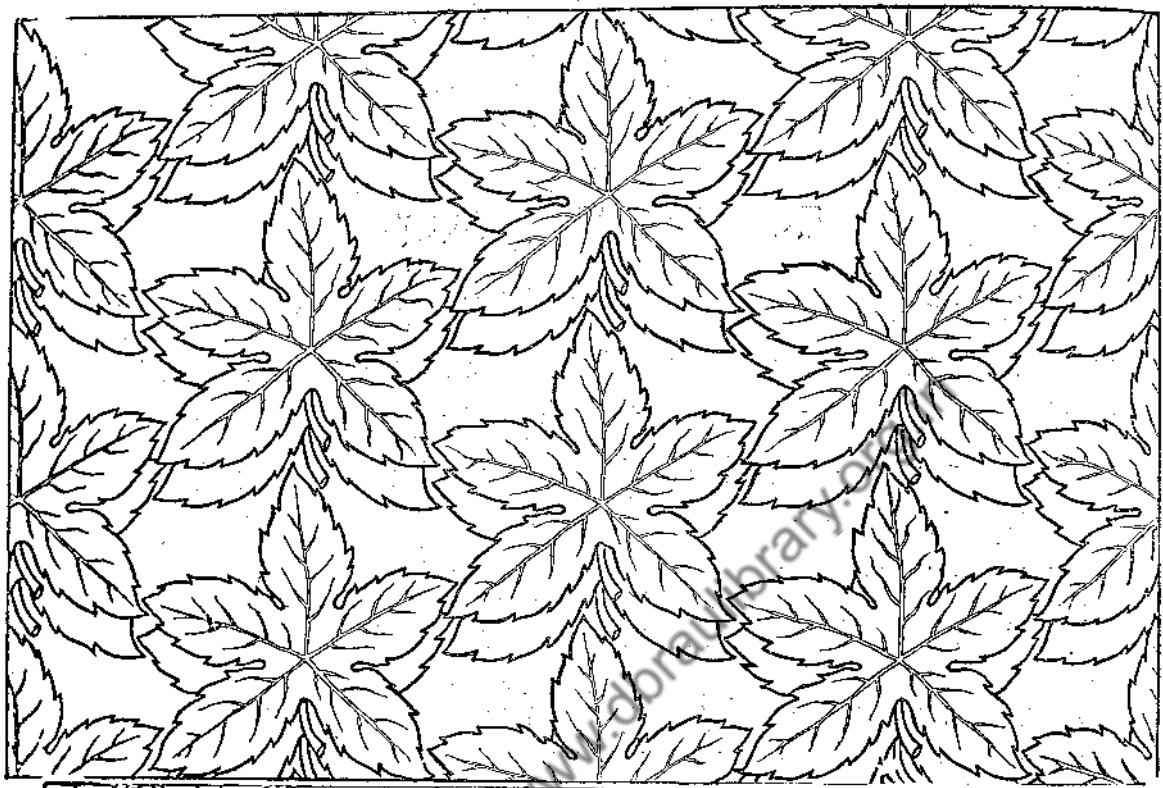

प्लेट नं० ३५

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ३६

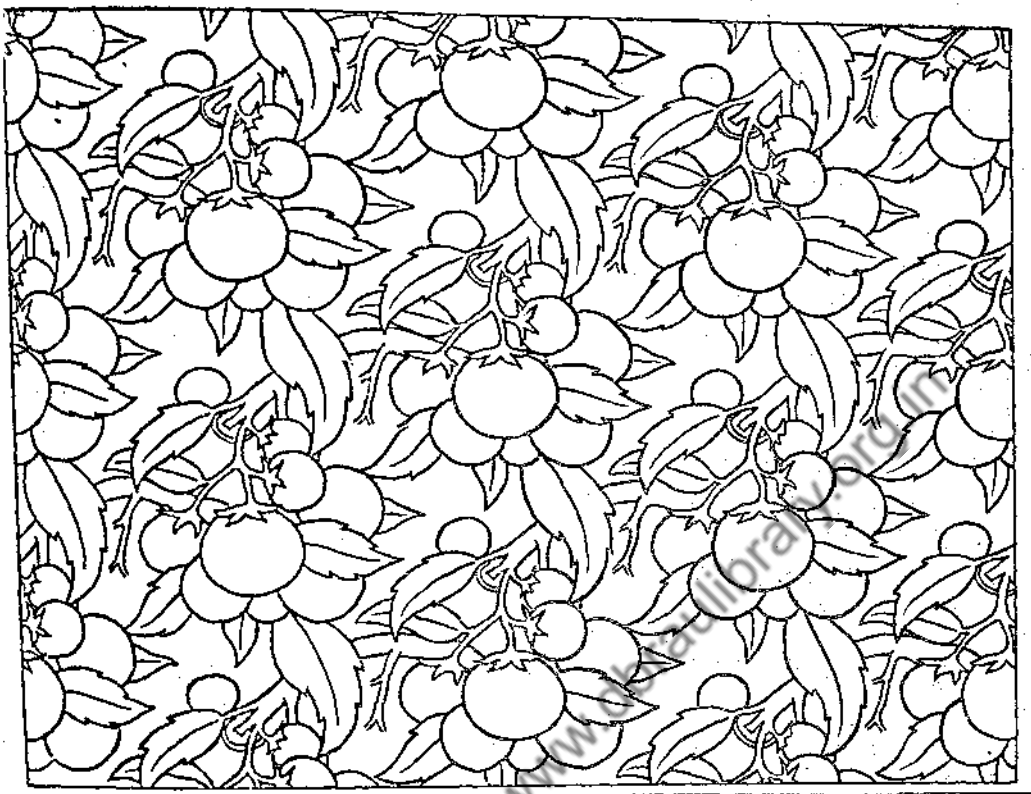

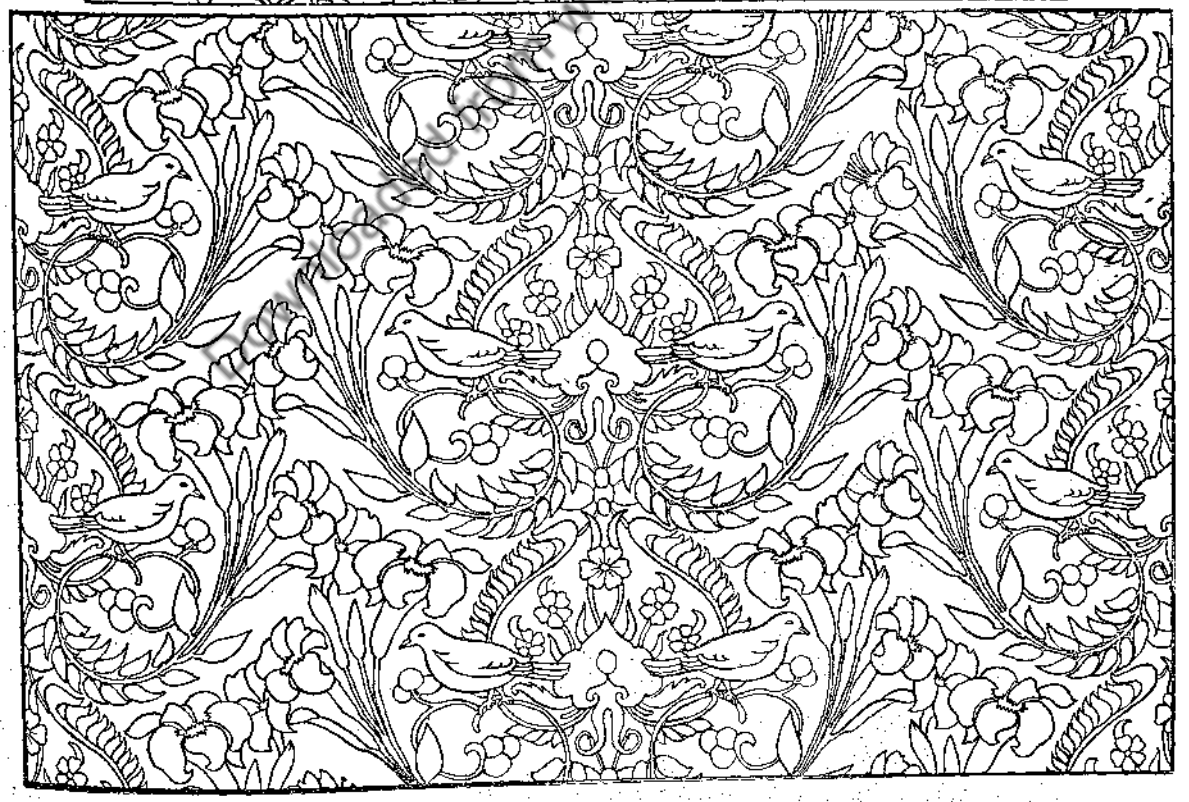

प्लेट नं० २७

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ३८

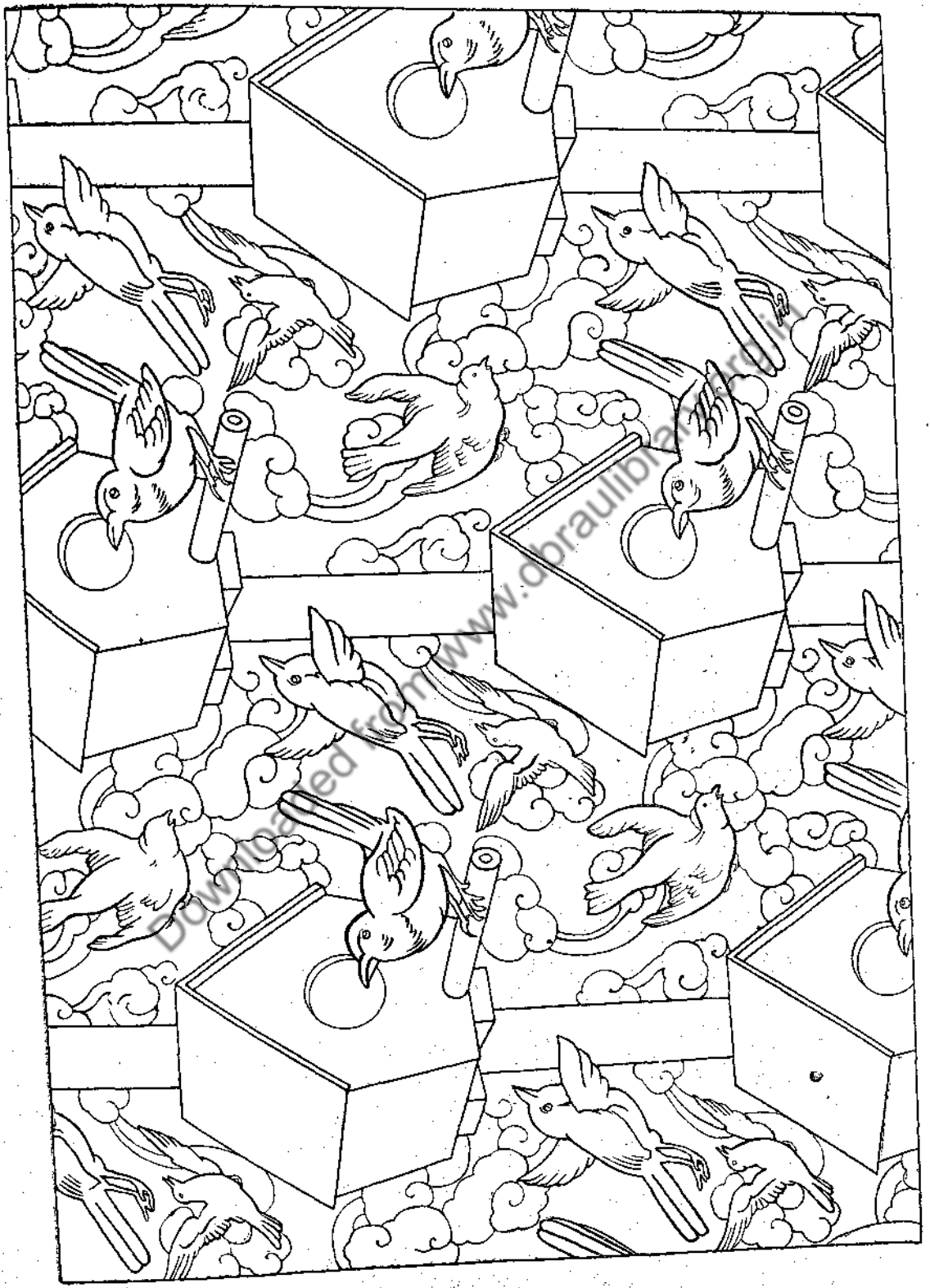

Digitized from www.dbraulibrary.org.in

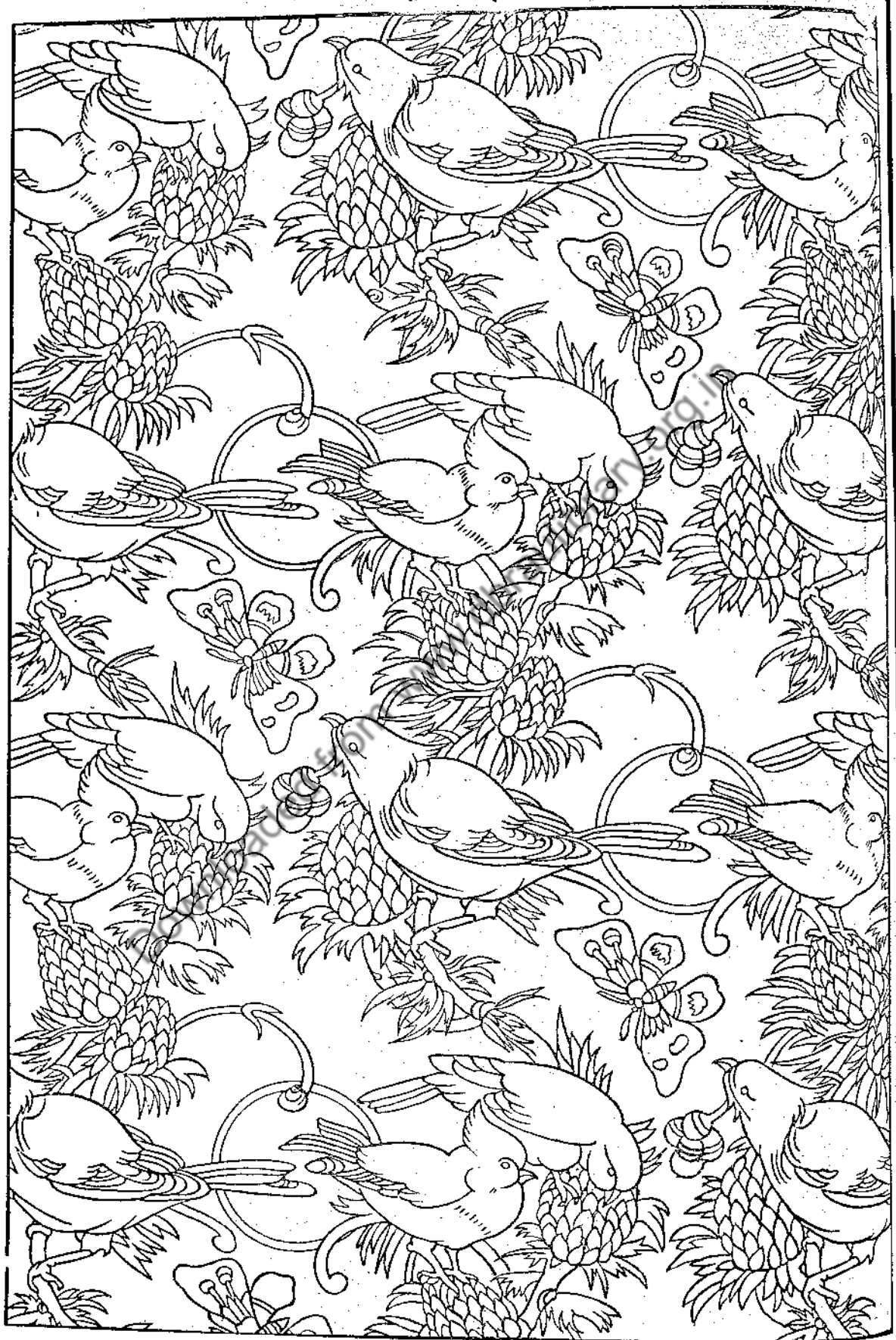

प्लेट नं० ४०

Downloaded from www.dharmalibrary.org.in

प्लेट नं० ४१

Downloaded from www.dlibrary.org.in

प्लेट नं० ४२

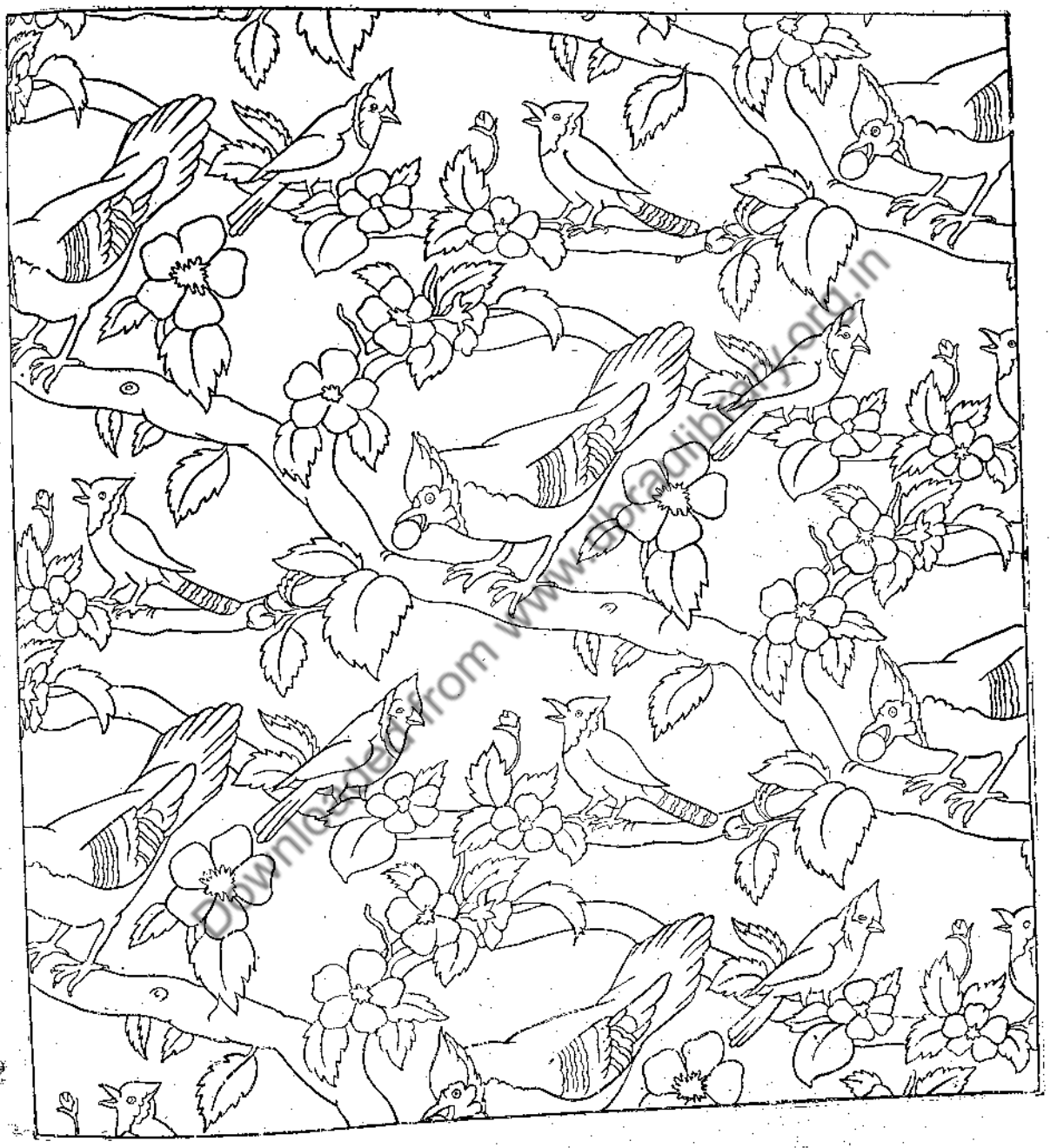

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ४२

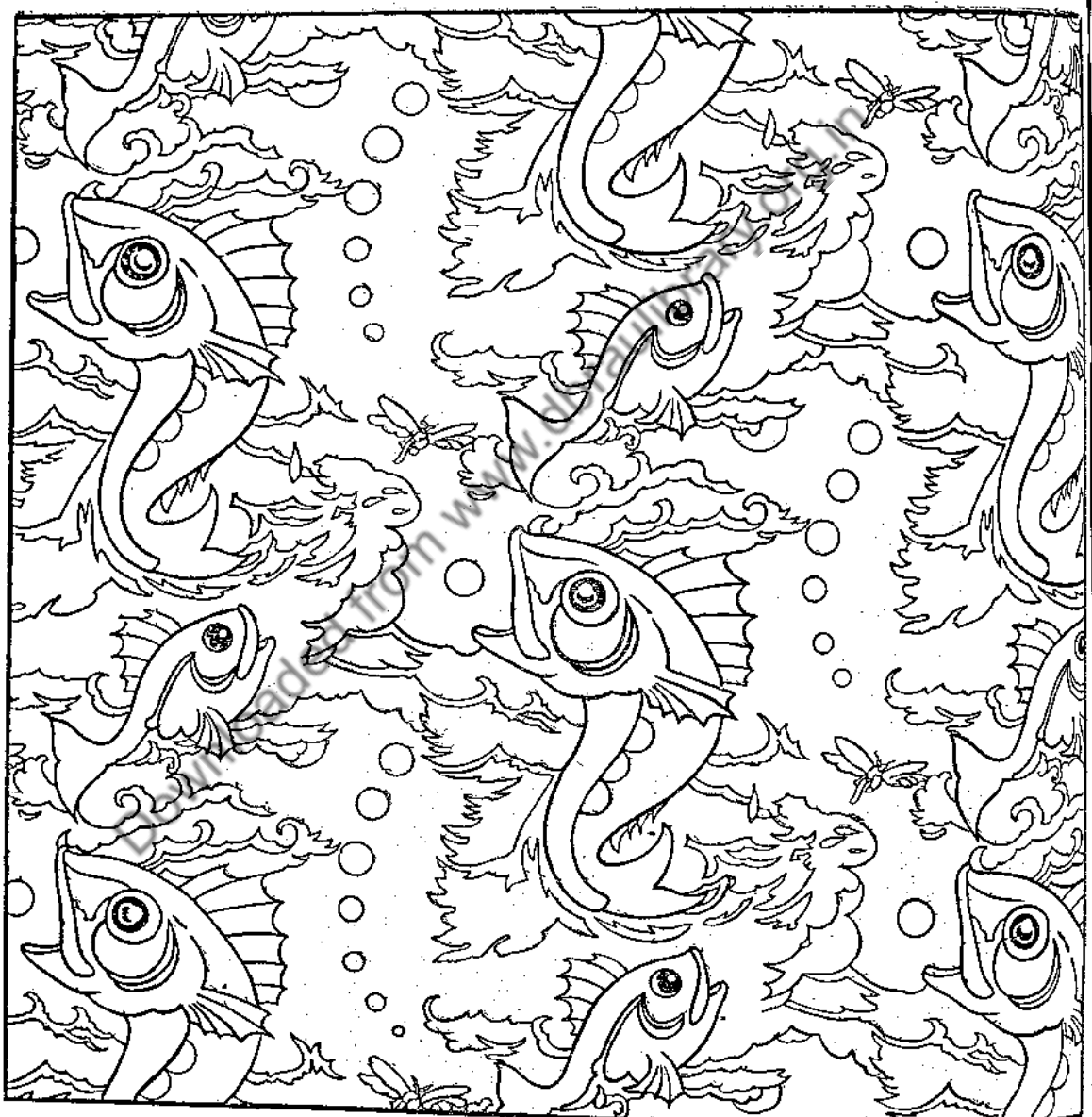

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ४५

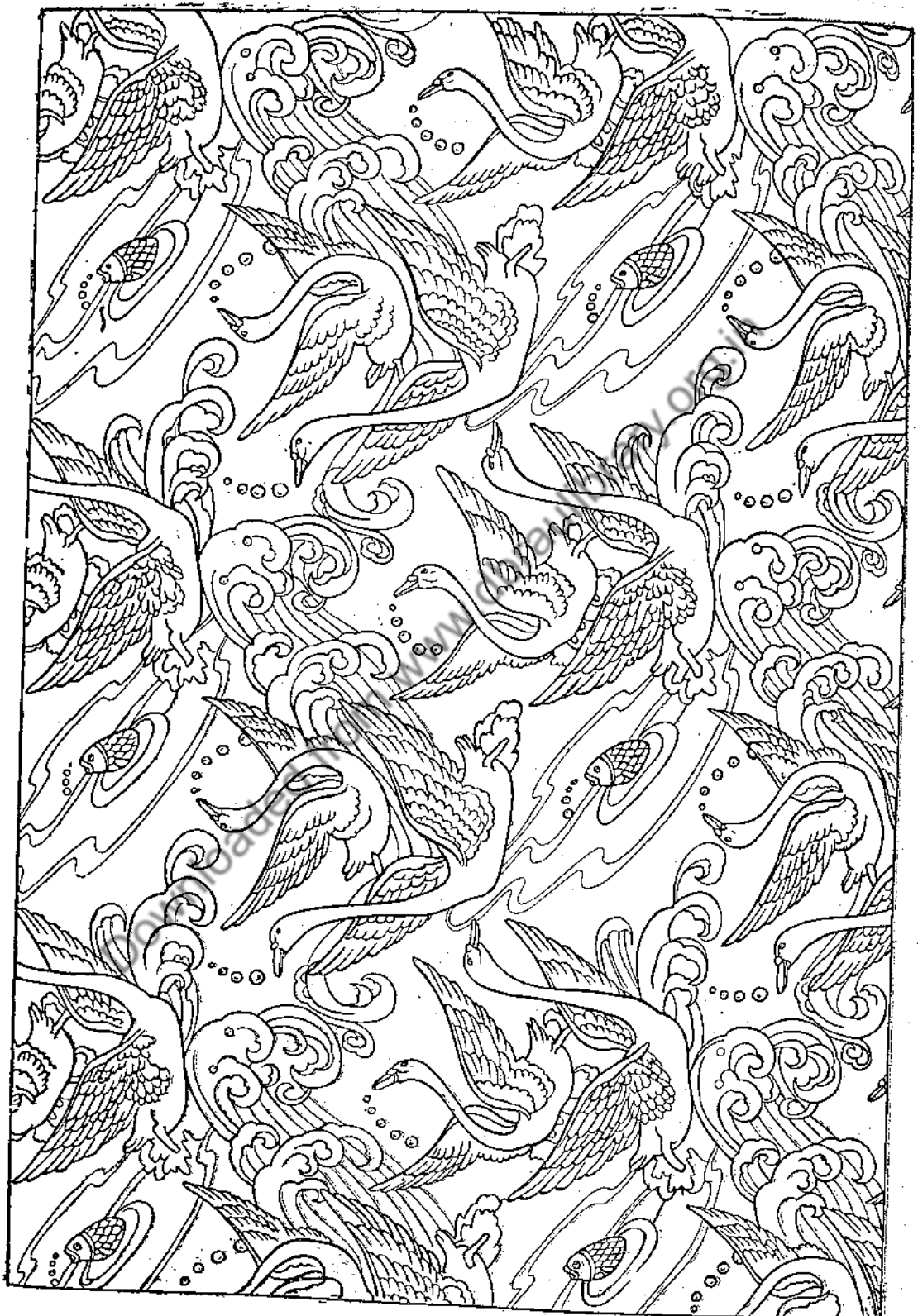

प्लेट नं० ४६

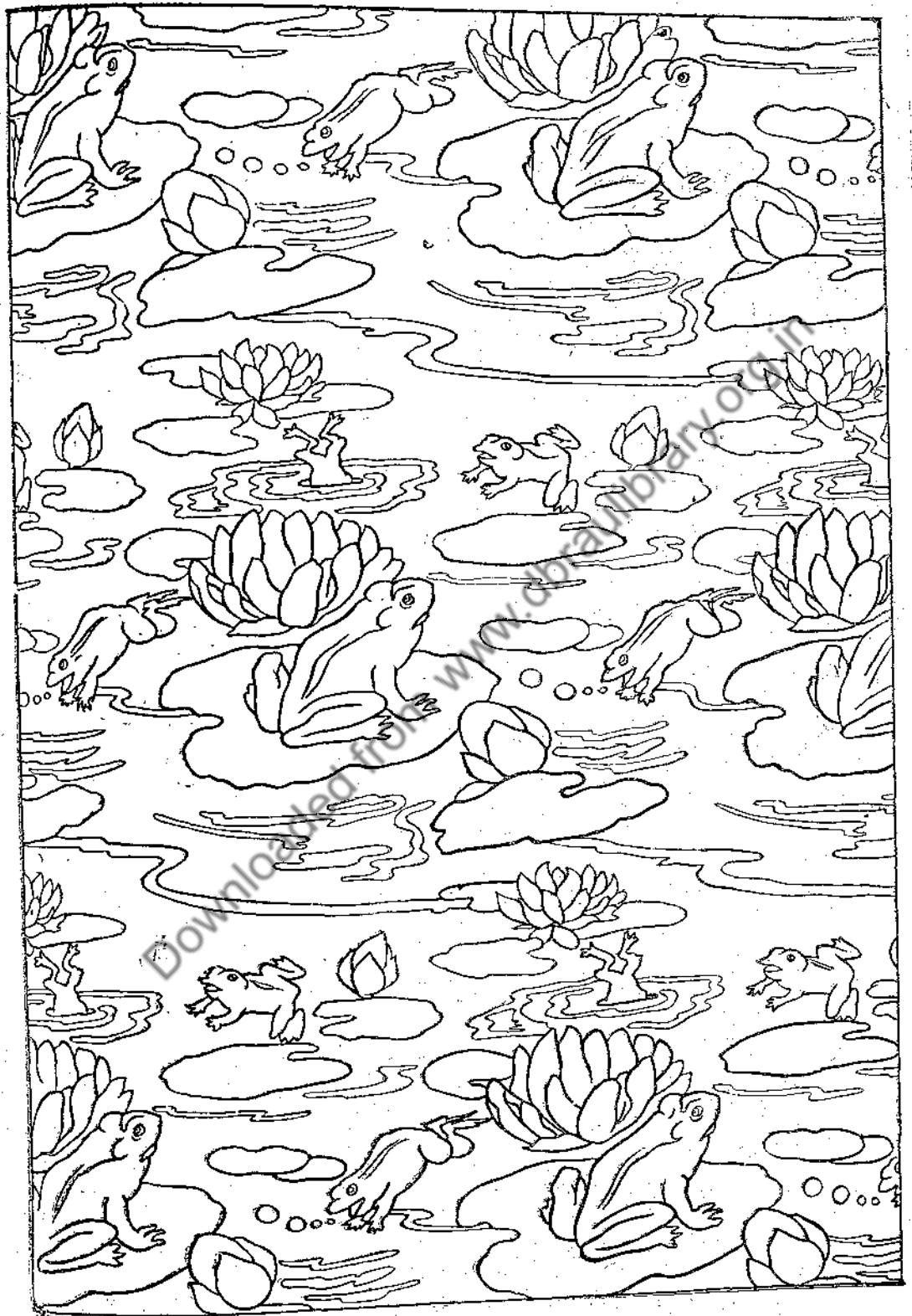

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ४७

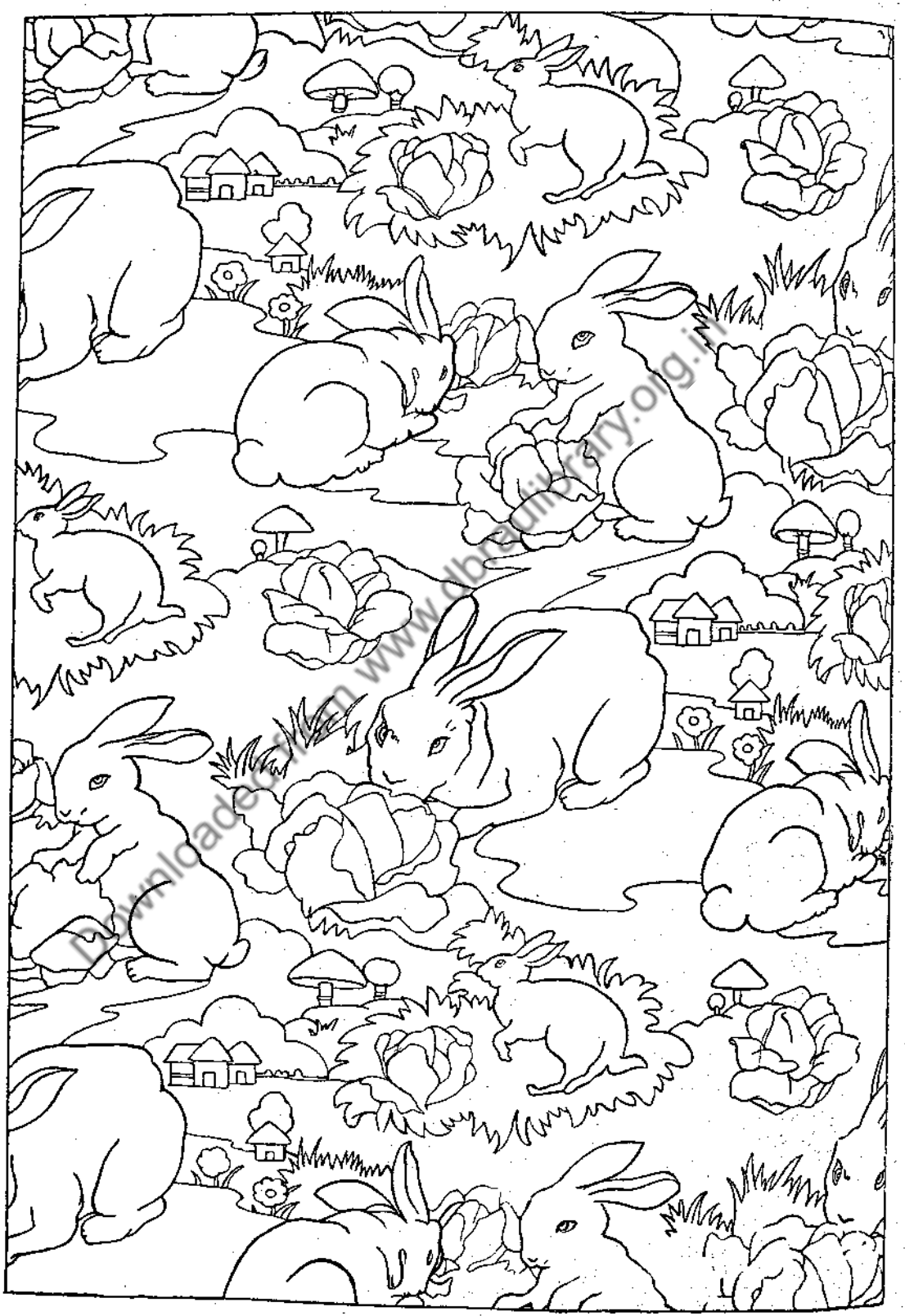

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ४८

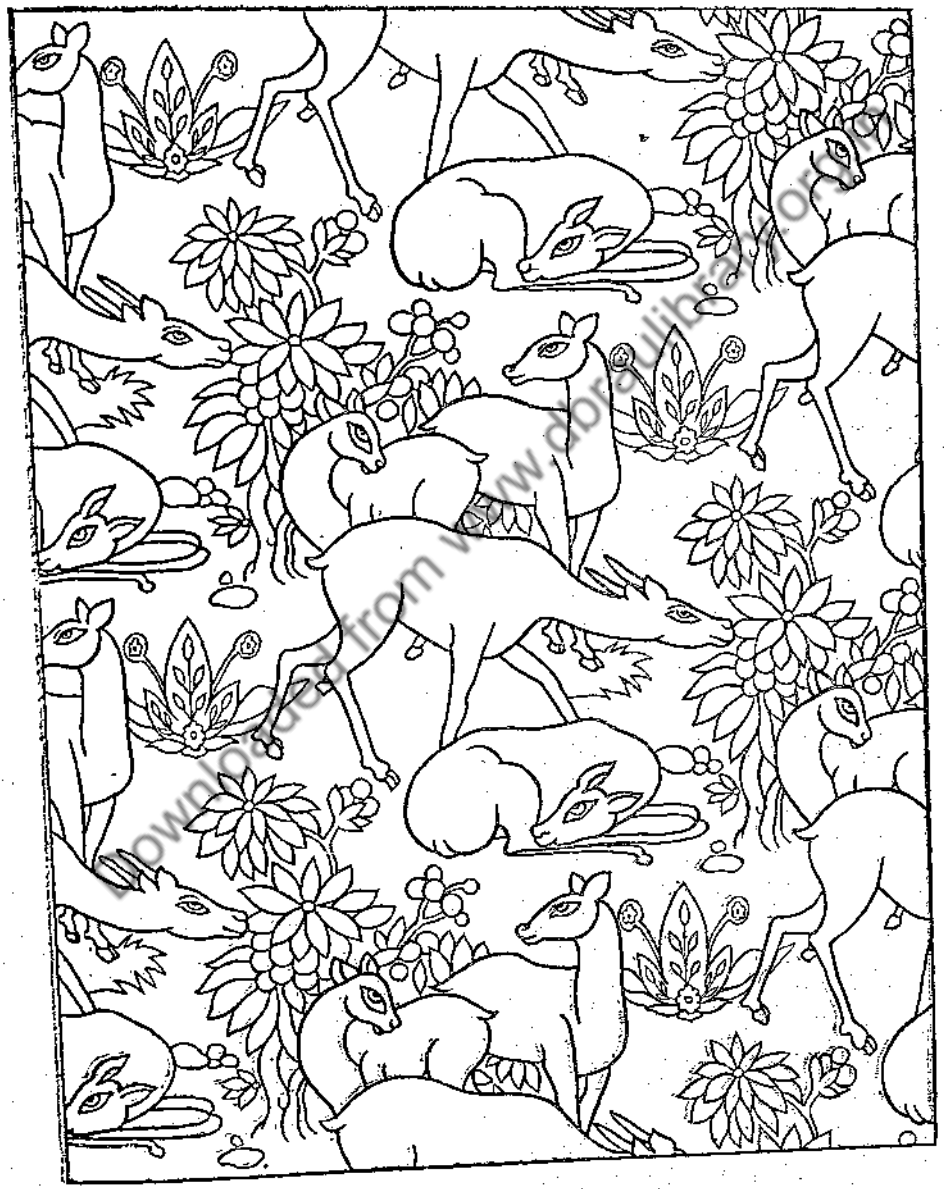

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

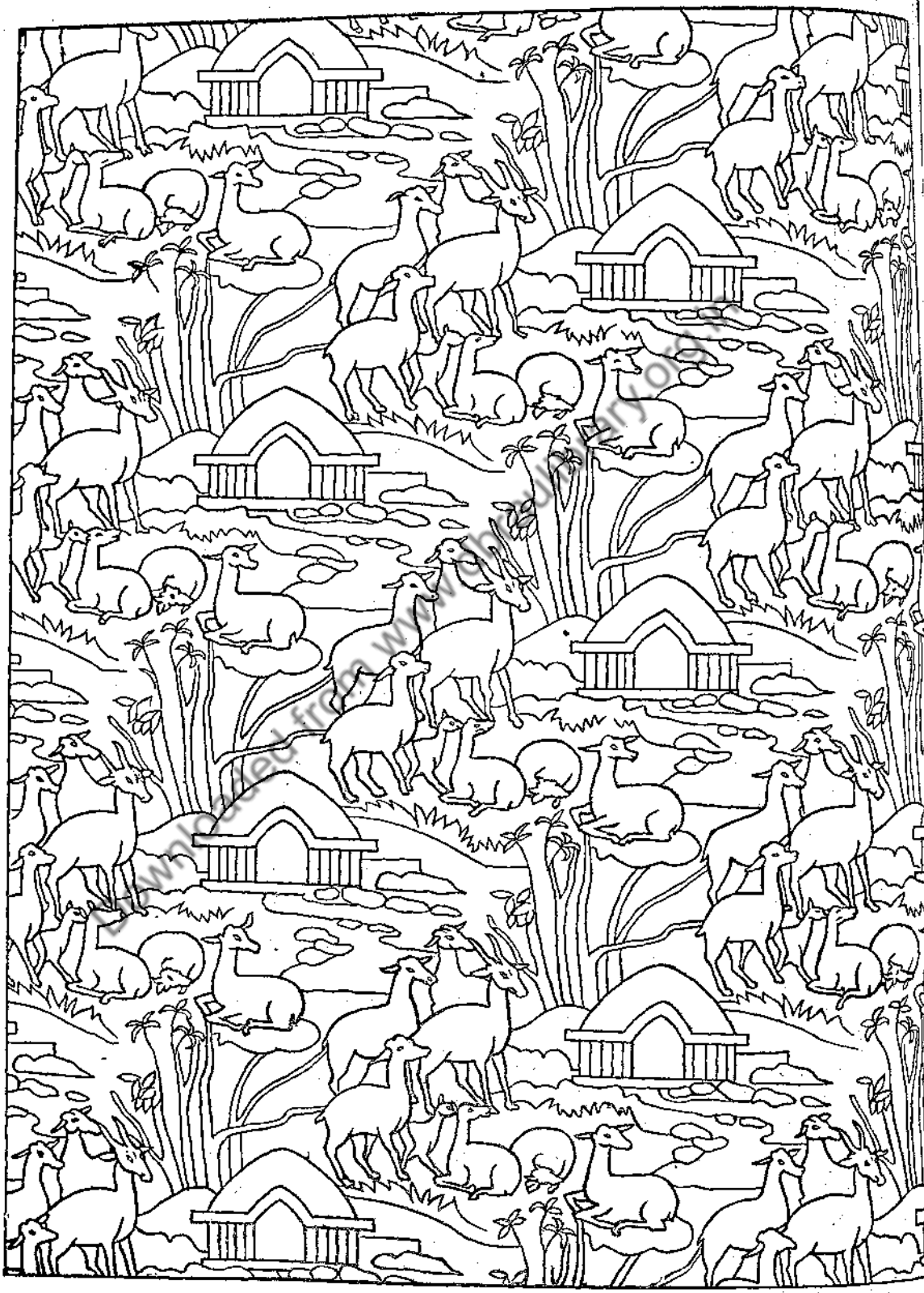

Downloaded from www.dbrauiibrary.org.in

Downloaded from www.dlibrary.org.in

प्लेट नं० ५१

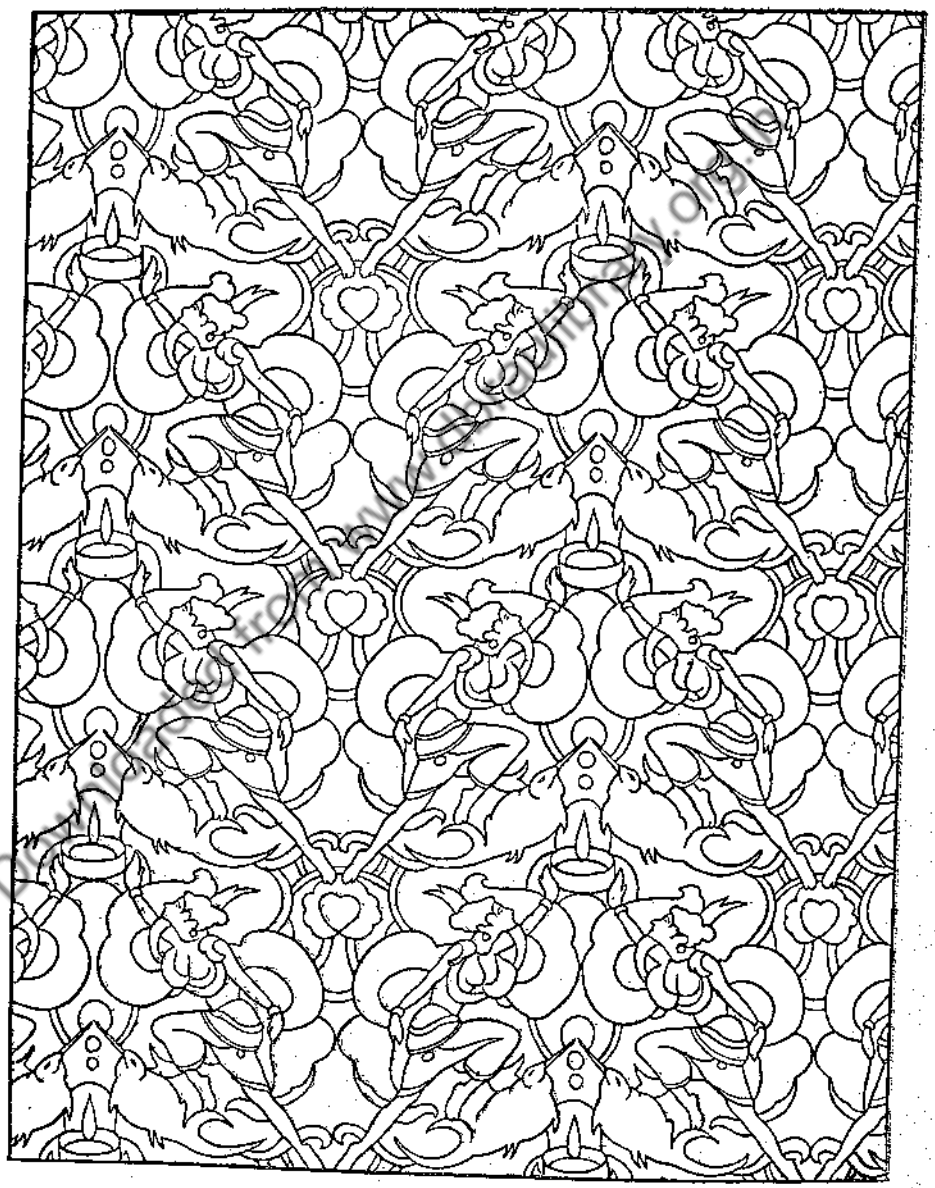

Downloaded from www.dhamtobhandagar.org.in

Downloaded from www.dlibrary.org.in

प्लेट नं० ५३

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ५४

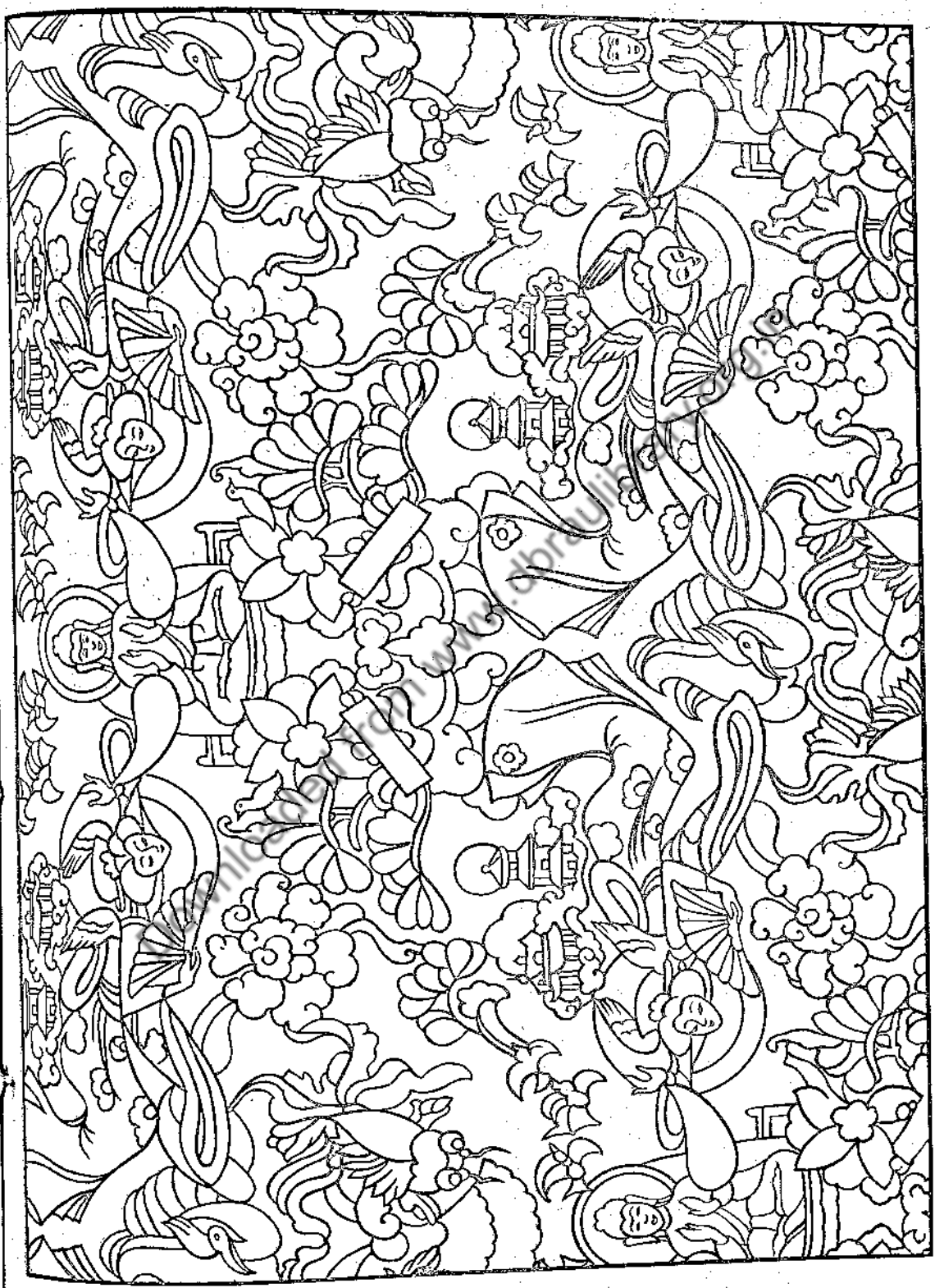

कोने, किनारी और बीच के लिए आकार कल्पनाएँ

इस विभाग में यह बताने का प्रयत्न किया गया है कि किनारी पर के आकार को कोने पर कैसे बिठाया जाय। सबसे अधिक कठिनाई कोने से किनारी से जोड़ने में आती है। कोने की इकाई अपने में पूर्ण होनी चाहिये और किनारी से ऐसी जुड़ी होनी चाहिए जिससे यह प्रतीत हो कि या तो वह कोने से निकली है या वहाँ आकार समाप्त हो गई। इस प्रभाव को उत्पन्न करने के लिये मूल इकाई में यदि कुछ परिवर्तन भी करना पड़े तो कोई हानि नहीं।

किनारी के साथ बनने वाले बीच के आकारों में दो बातें ध्यान में रखी जानी चाहिये। पहला यह कि उनके आकारों की सामान्य रेखायें किनारी के रूपों की रेखाओं पर जैसा प्रभाव उत्पन्न करें। दूसरा यह कि उनका उत्स जहाँ तक संभव हो सके एक ही हो। अर्थात् या तो दोनों कल्पना जन्य हों या दोनों प्रकृति से गृहीत। ऐसी करने से ही हमारी आकार कल्पनाओं में अधिक सौन्दर्य आ जायगा।

Downloaded from www.dsraulibrary.org.in

प्लेट नं० ५५

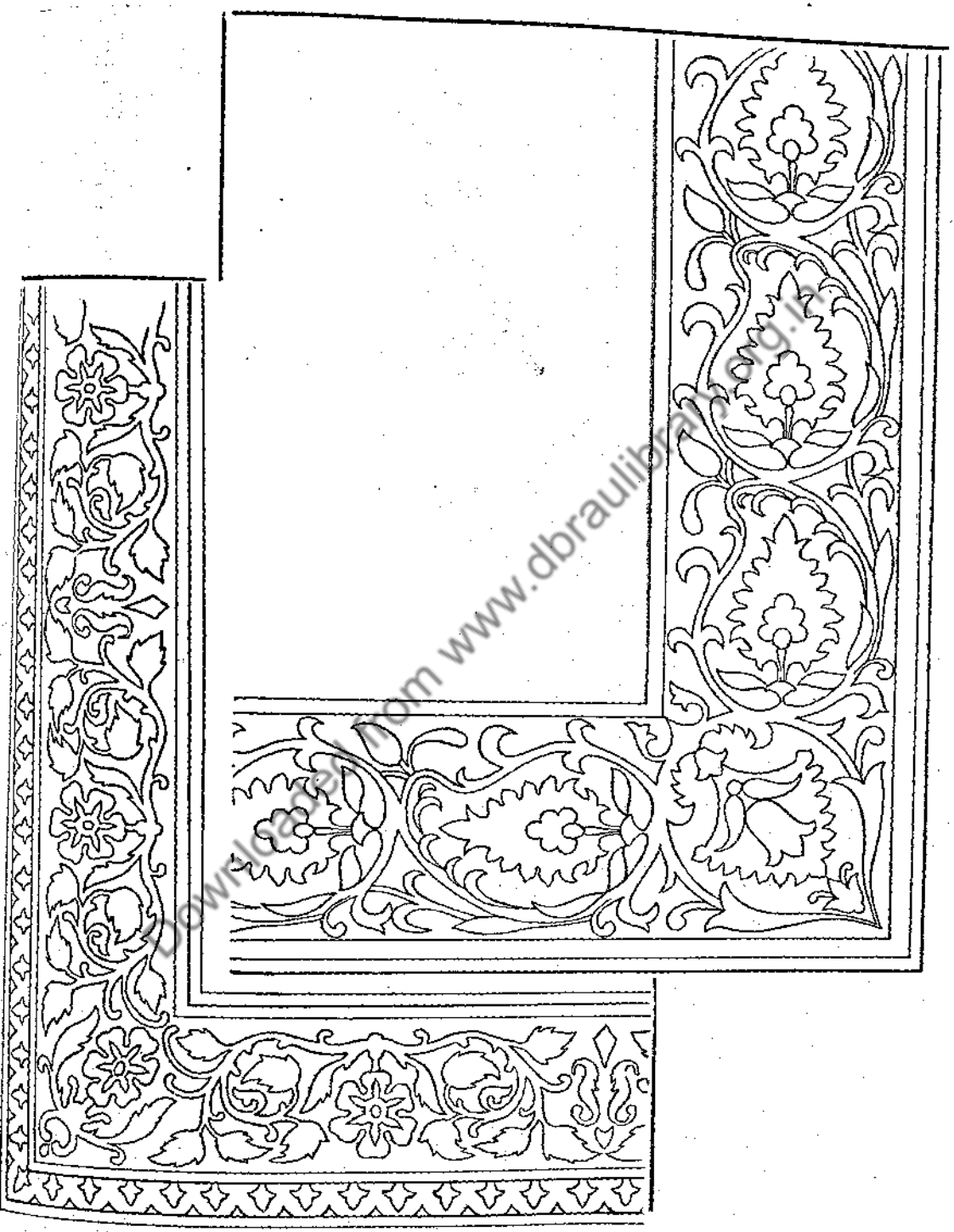

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

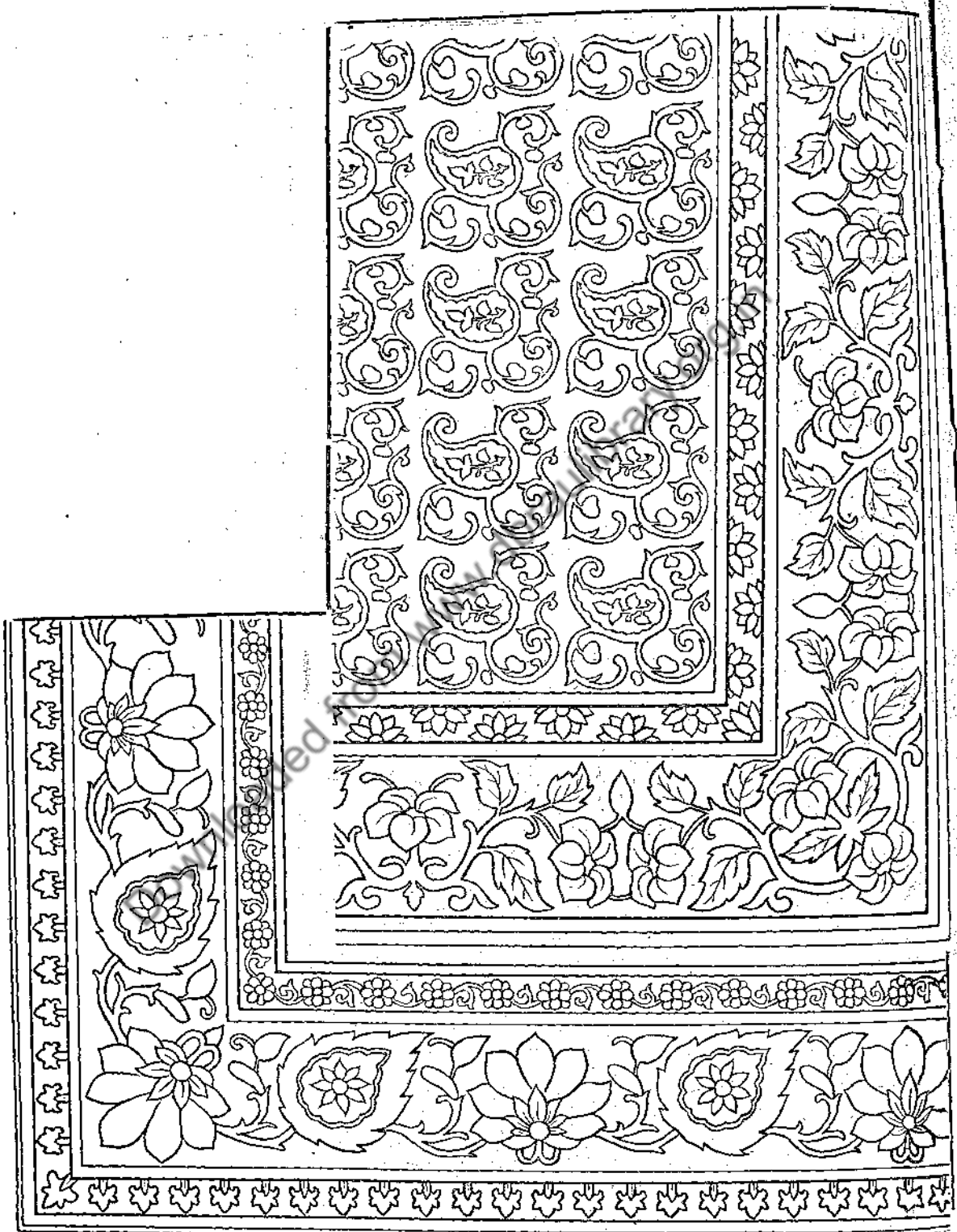

प्लेट नं० ५७

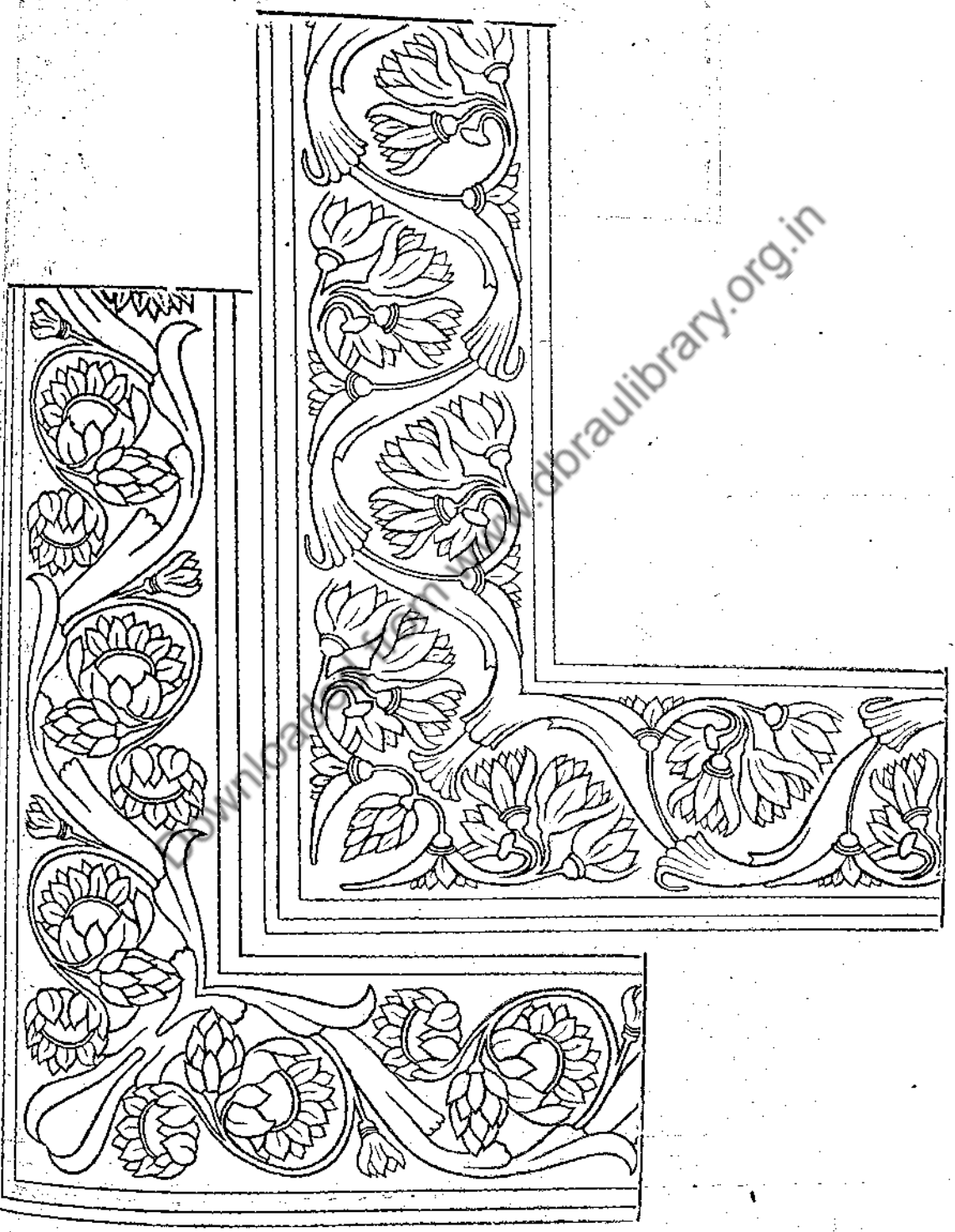

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

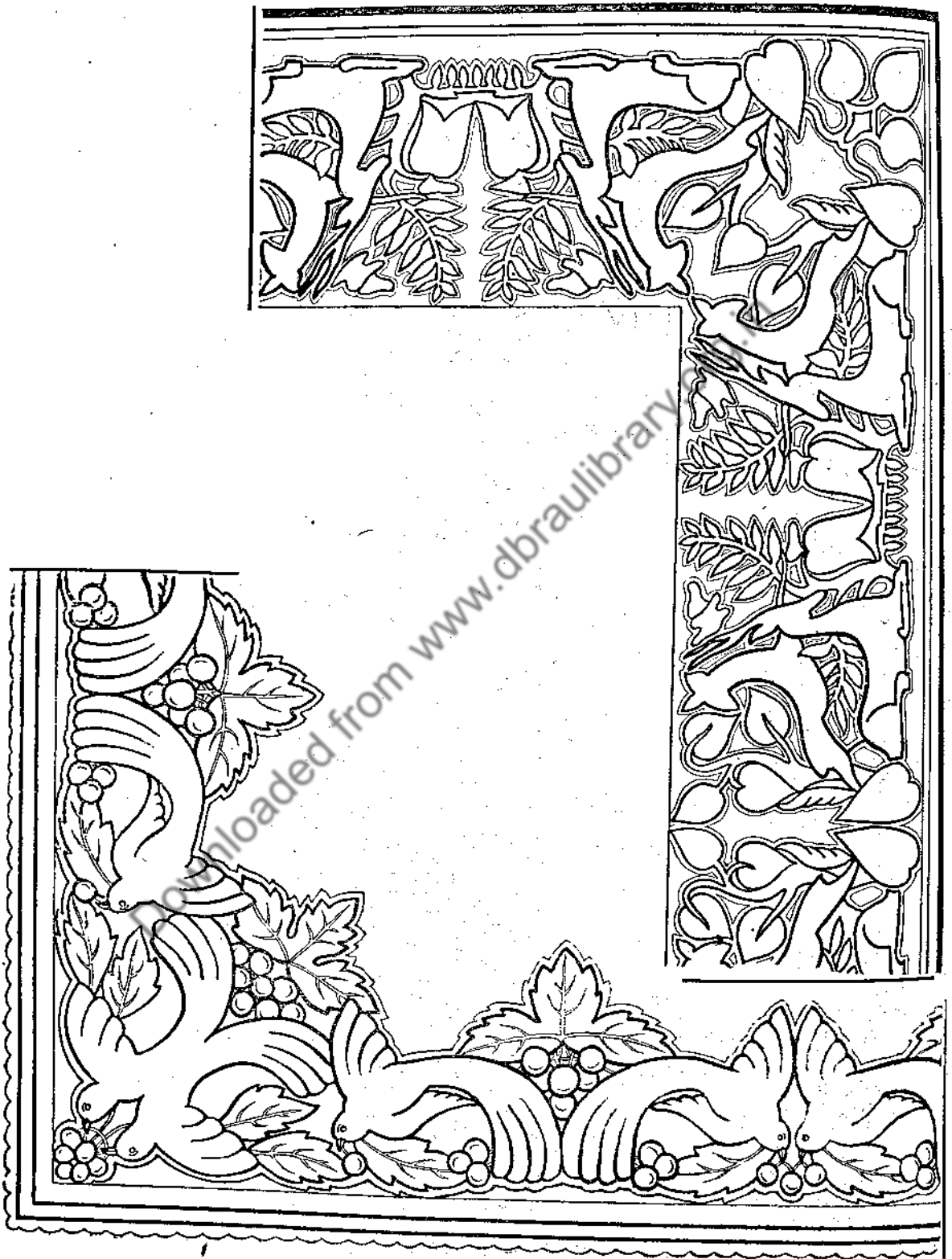

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ५६

प्लेट नं० ६०

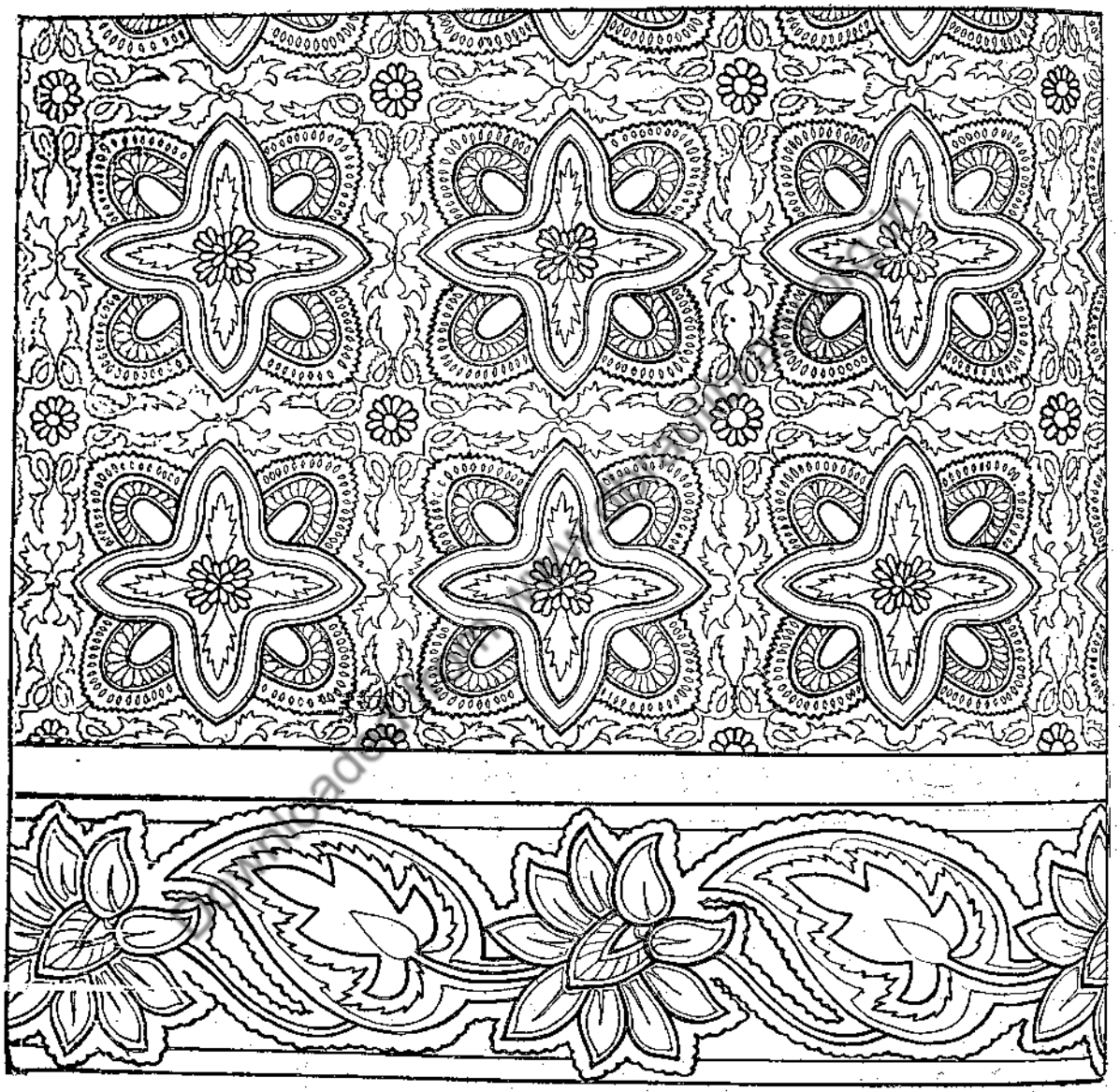

प्लेट नं० ६१

त्रिकोण तथा वर्ग के लिये आकार कल्पनाएँ

एक निश्चित स्थान को भरने के लिये सुविधानुसार उसके कई भाग किये जाते हैं। उदाहरणार्थ त्रिकोण के दो, और वर्ग के चार। त्रिकोण के तीन भाग भी किये जासकते हैं किन्तु यदि वर्ग के हम चाहें कि तीन भाग हो जांय या पाँच तो यह असम्भव है। अतः इस बात को ध्यान में रख कर त्रिकोण में हम निचले भाग में अधिक इकाइयों को रख कर ऊपर की ओर उनकी संख्या कम करते जांय तो सुन्दर आकार बन सकता है। कभी-कभी बीच में प्रधान रूप को रख कर उसके दायें बायें और ऊपर की ओर छोटे-छोटे रूप रखे जाते हैं। दूसरी ओर वर्ग में कोने और बीच के आकार अधिक ठोस होते हैं।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ६२

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ६३

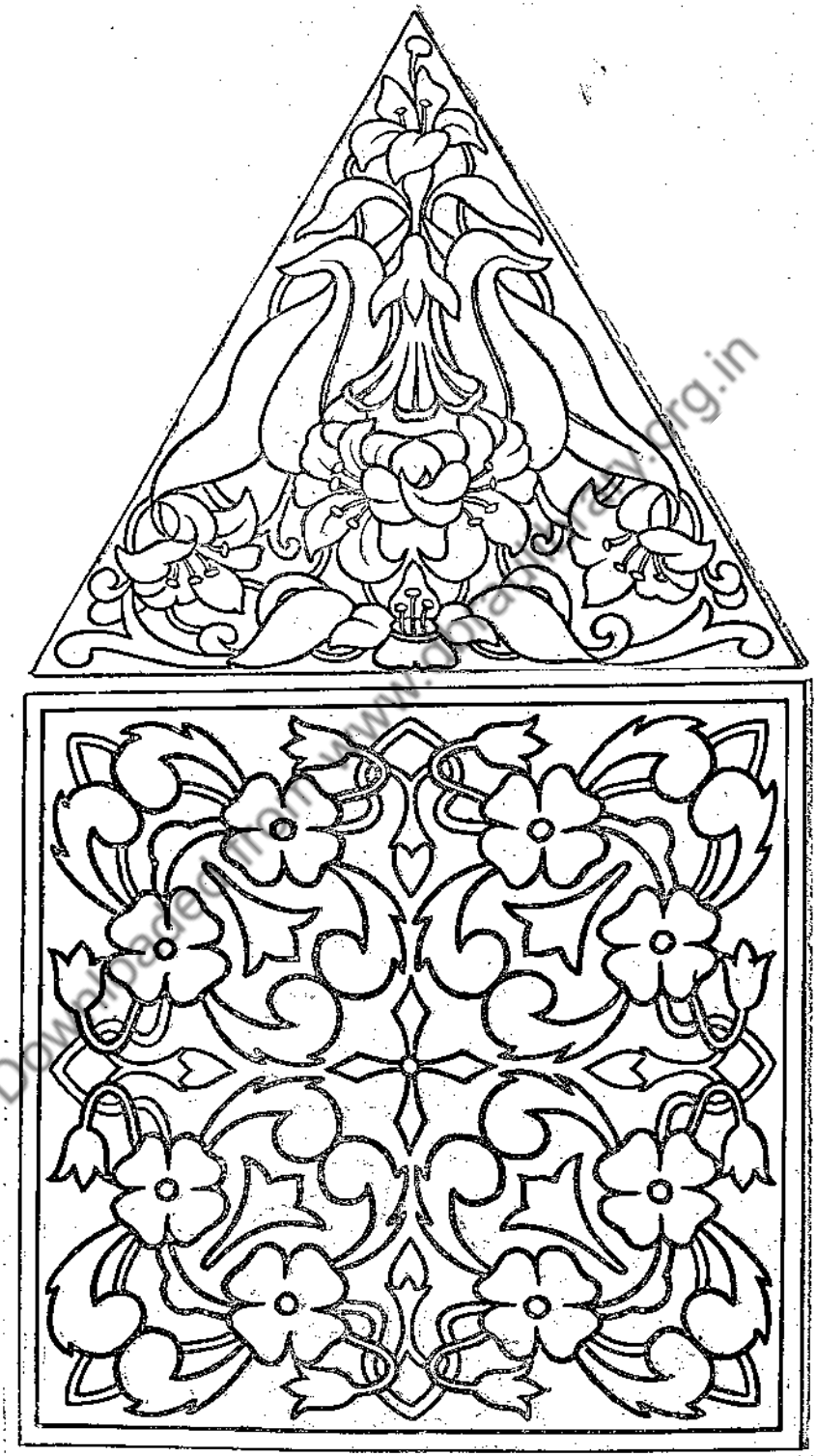

Downloaded from www.dharmiklibrary.org.in

प्लेट नं० ६४

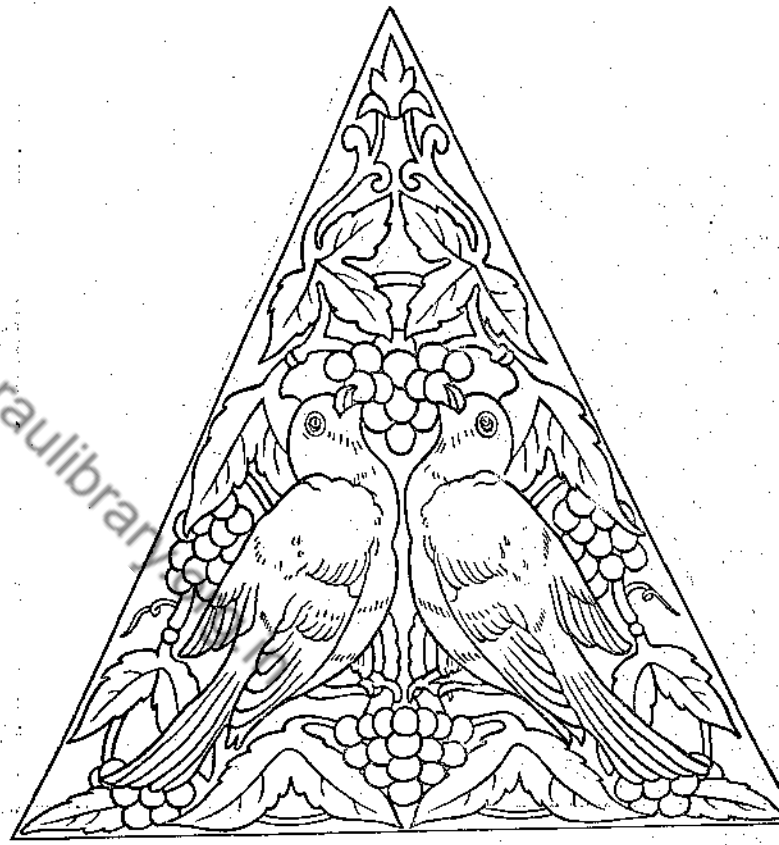

प्लेट नं० ६५

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ६६

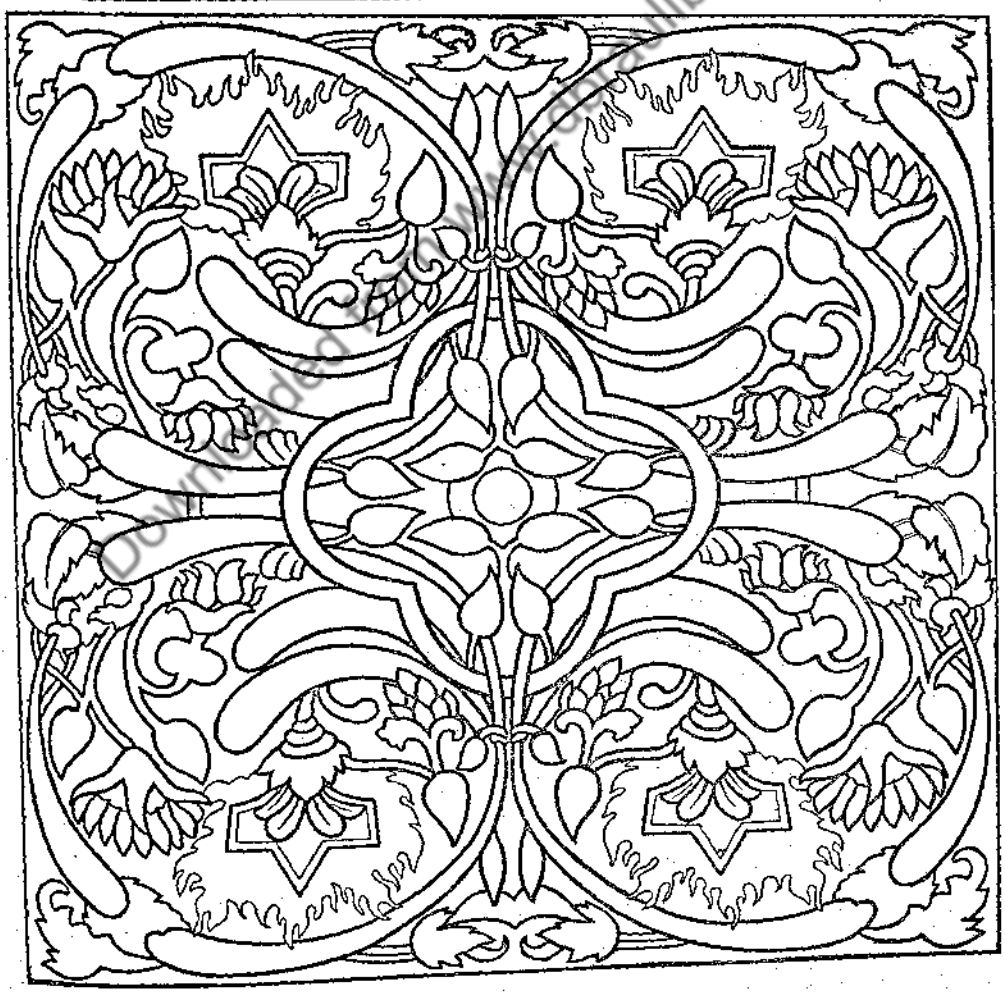

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ३७

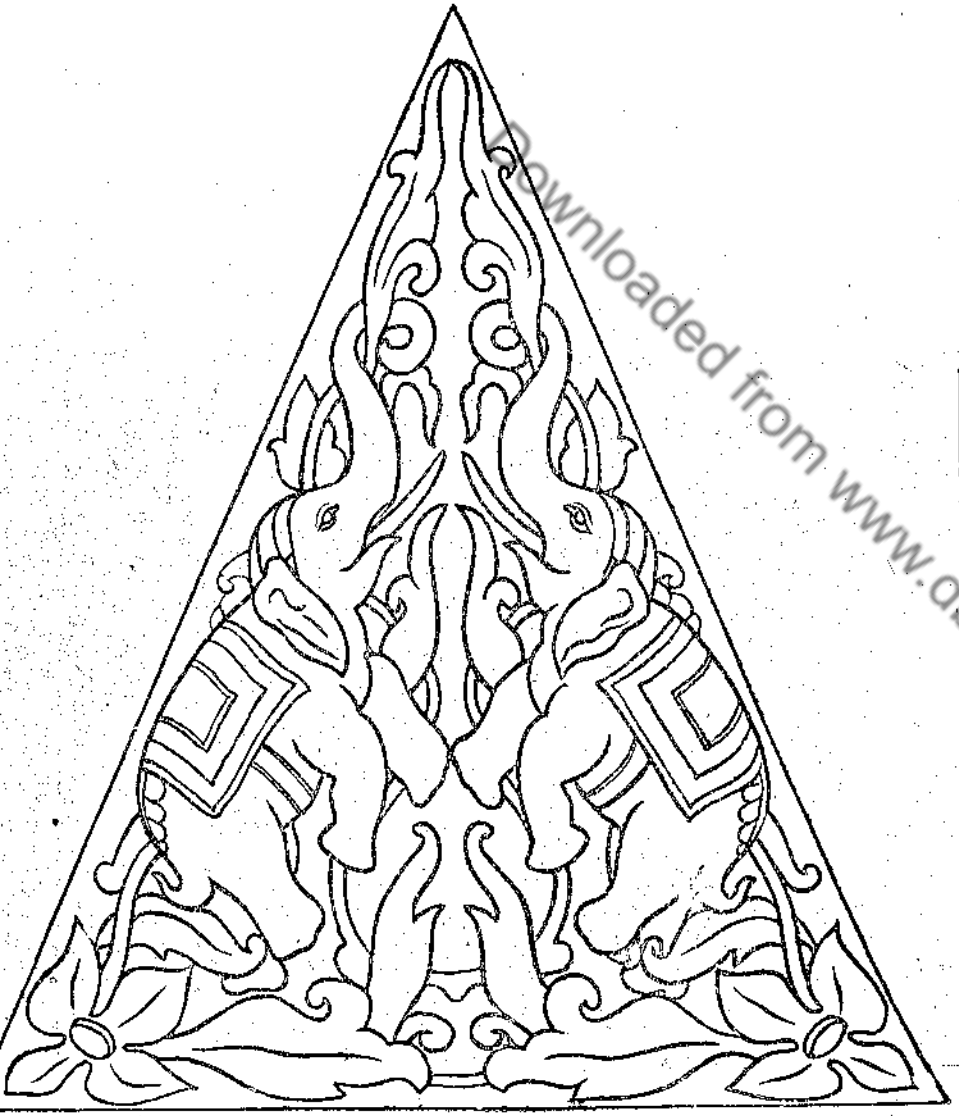

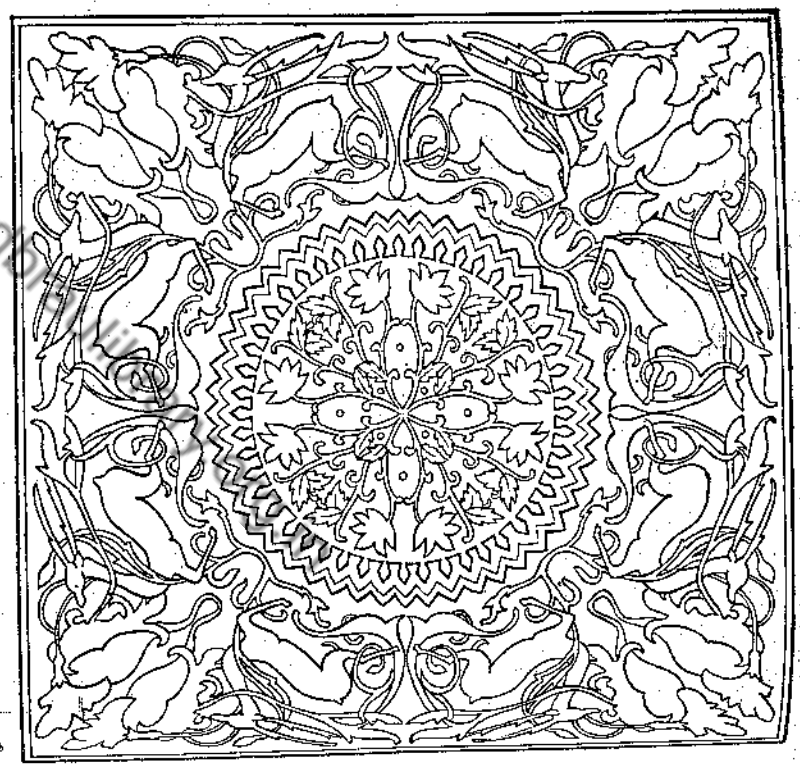

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ६८

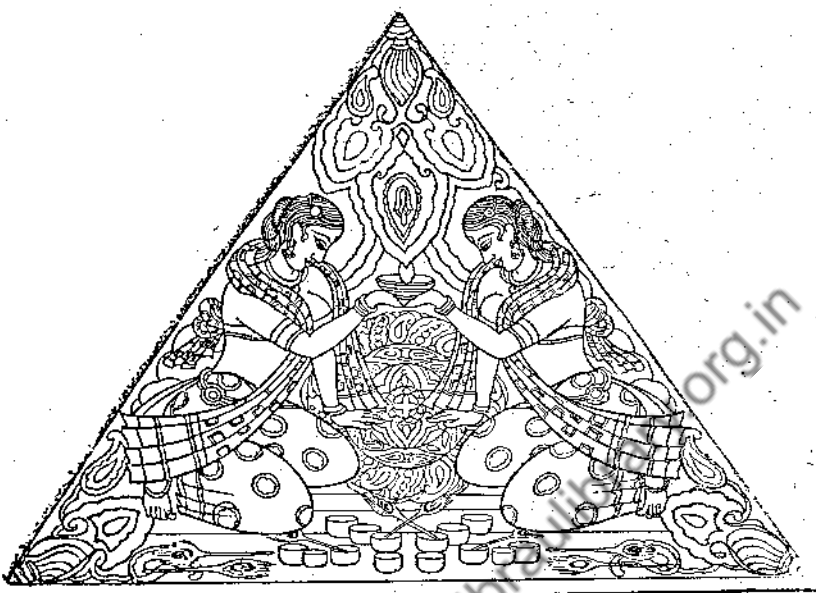

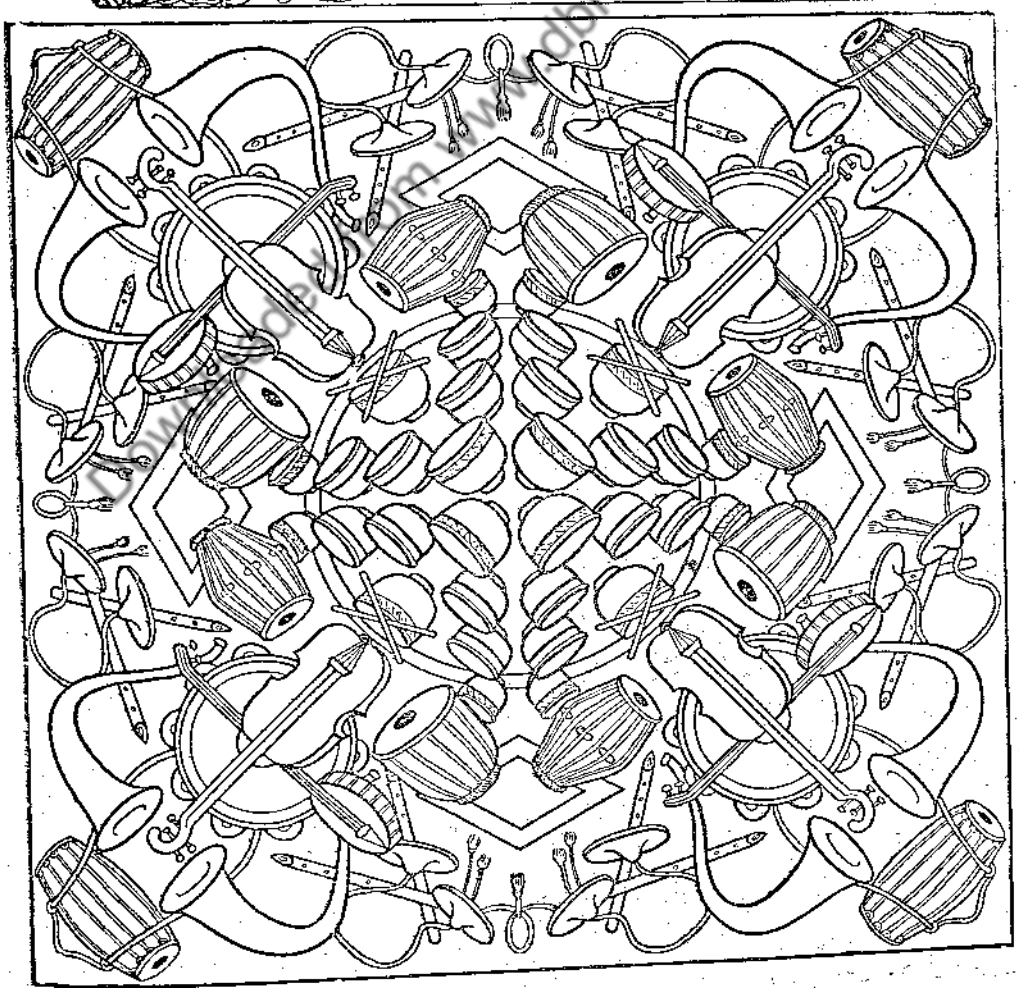

प्लेट नं० ६९

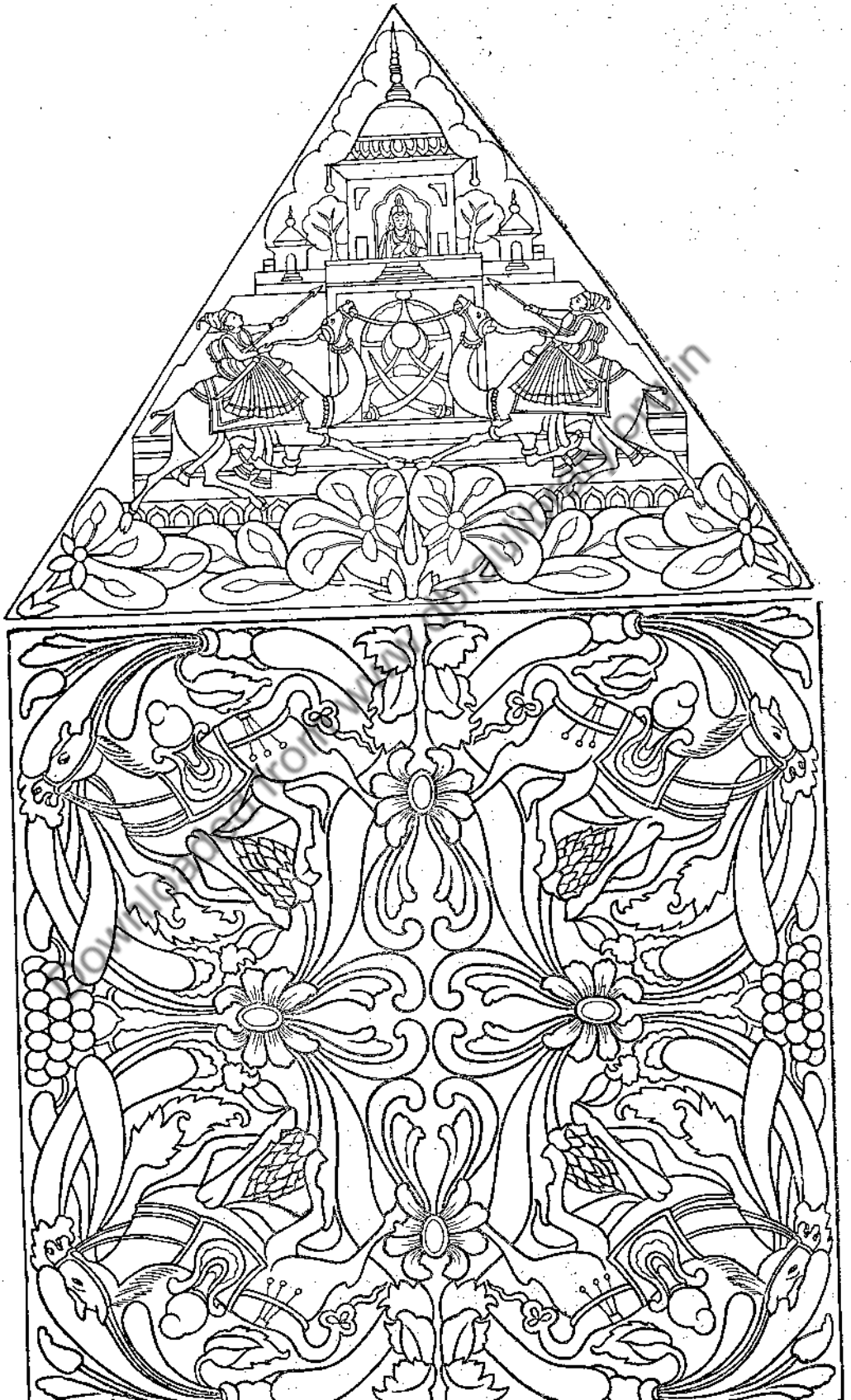

Downloaded from www.dpradulibrary.org.in

प्लेट नं० ७०(अ)

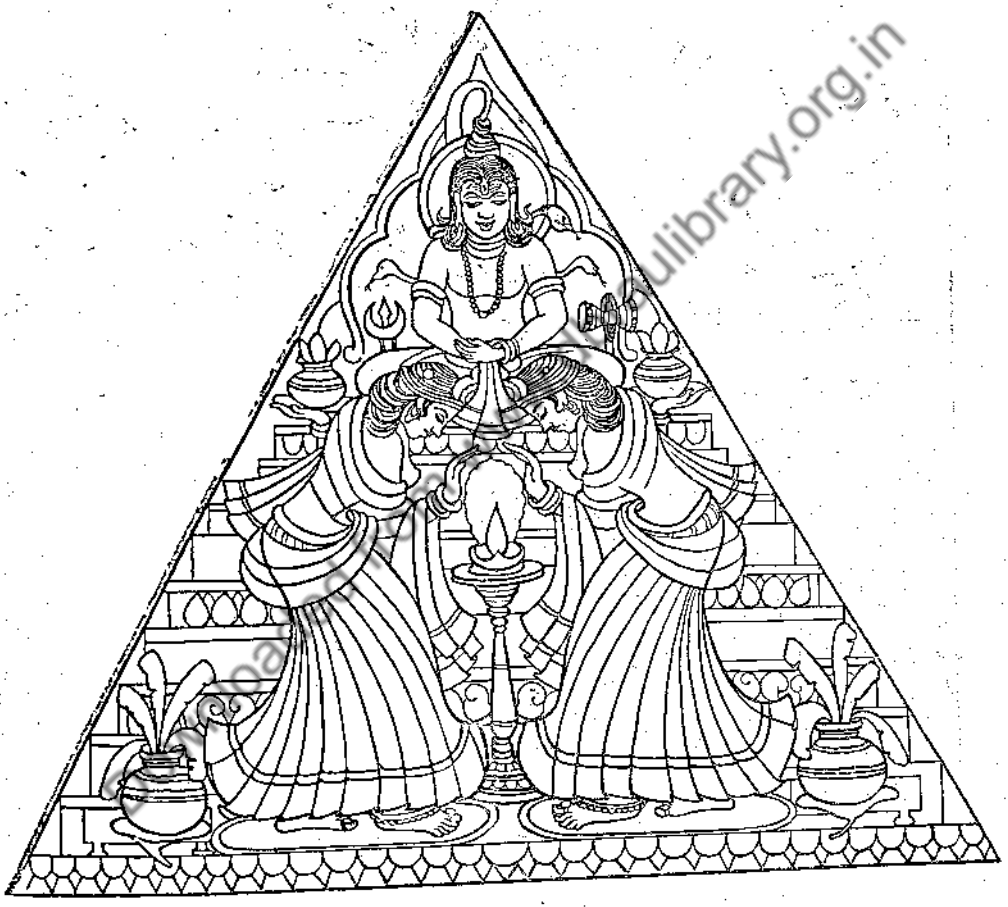

प्लेट नं० ७० (ब)

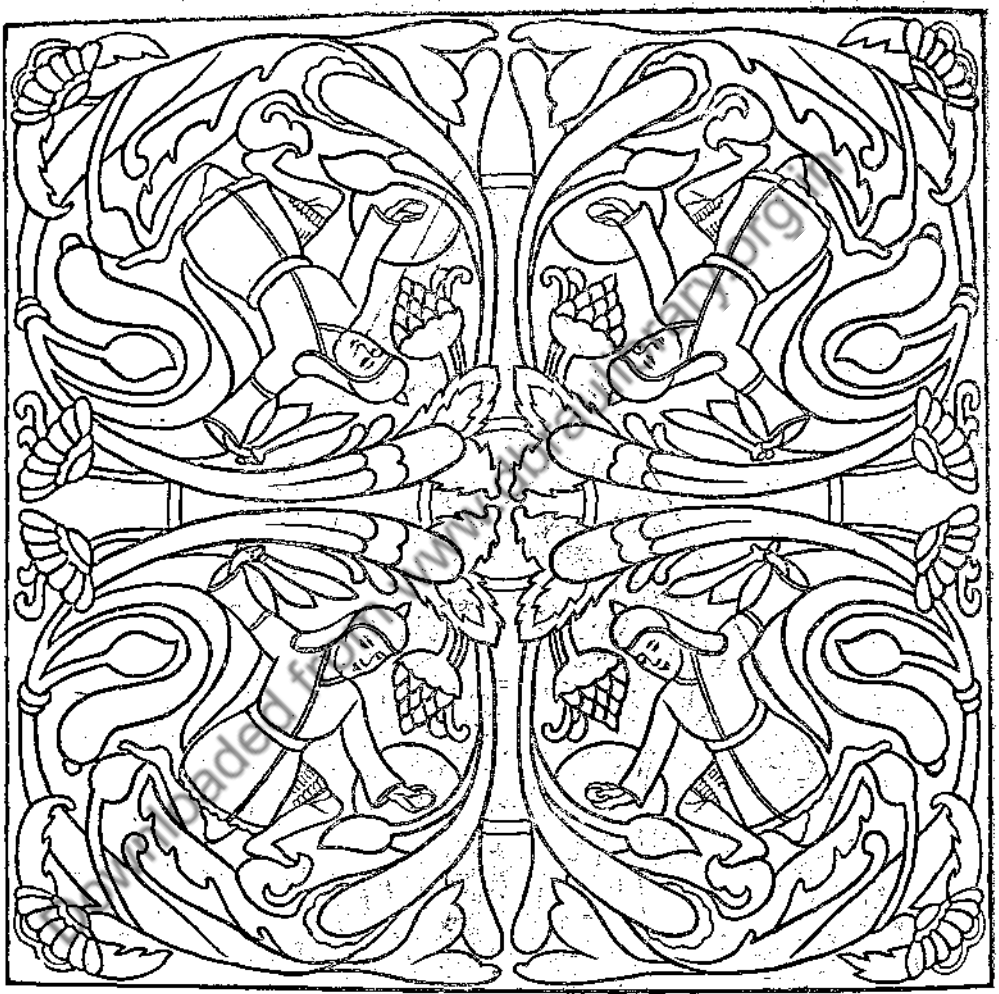

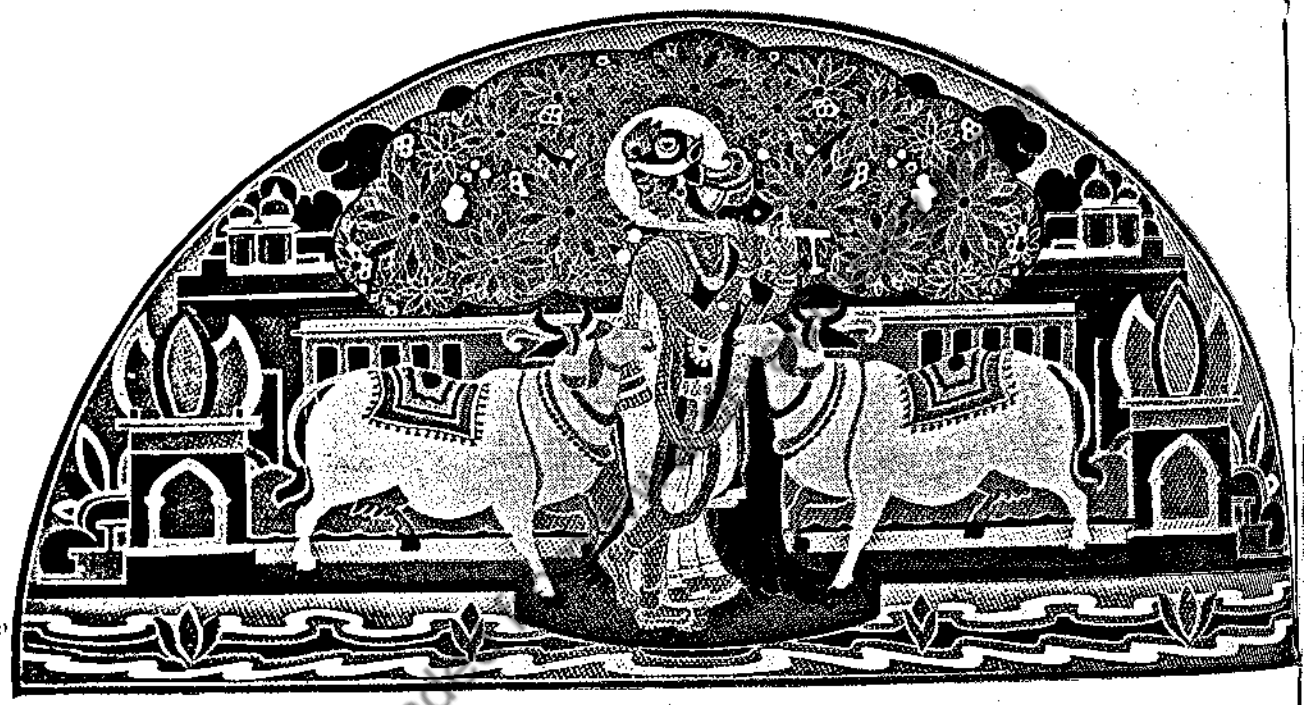

अर्ध वृत की आकार कल्पना

Downloaded

वृत तथा अर्द्ध वृत

वर्ग की भान्ति वृत को कई भागों में बाँटने में कोई कठिनाई नहीं होती अतः उसके किनारे पर कोई बेल अथवा आकार की इकाई रखकर बीच में अपेक्षाकृत बड़ा रूप रखा जाता है। बीच में बड़े रूप की आवश्यकता इसलिये पड़ती है क्योंकि पहली बार में हमारी दृष्टि वहीं पड़ती है।

दूसरी ओर अर्द्ध वृत में त्रिकोण वाली आकार कल्पना का नियम अपनाया जाता है। अर्थात् या तो उसके दो भाग कर एक ही इकाई को दुहरा दिया जाता है या बीच में एक बड़े रूप को लेकर पार्श्व भाग में छोटे-छोटे रूप रखे जाते हैं। कुछ अर्द्ध वृत्तों में किनारों पर से चलने वाले बड़े आकार बीच में आकर समाप्त होते हैं, अतः इनमें बीच का रूप छोटा किन्तु अधिक प्रमुख होता है।

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ७१

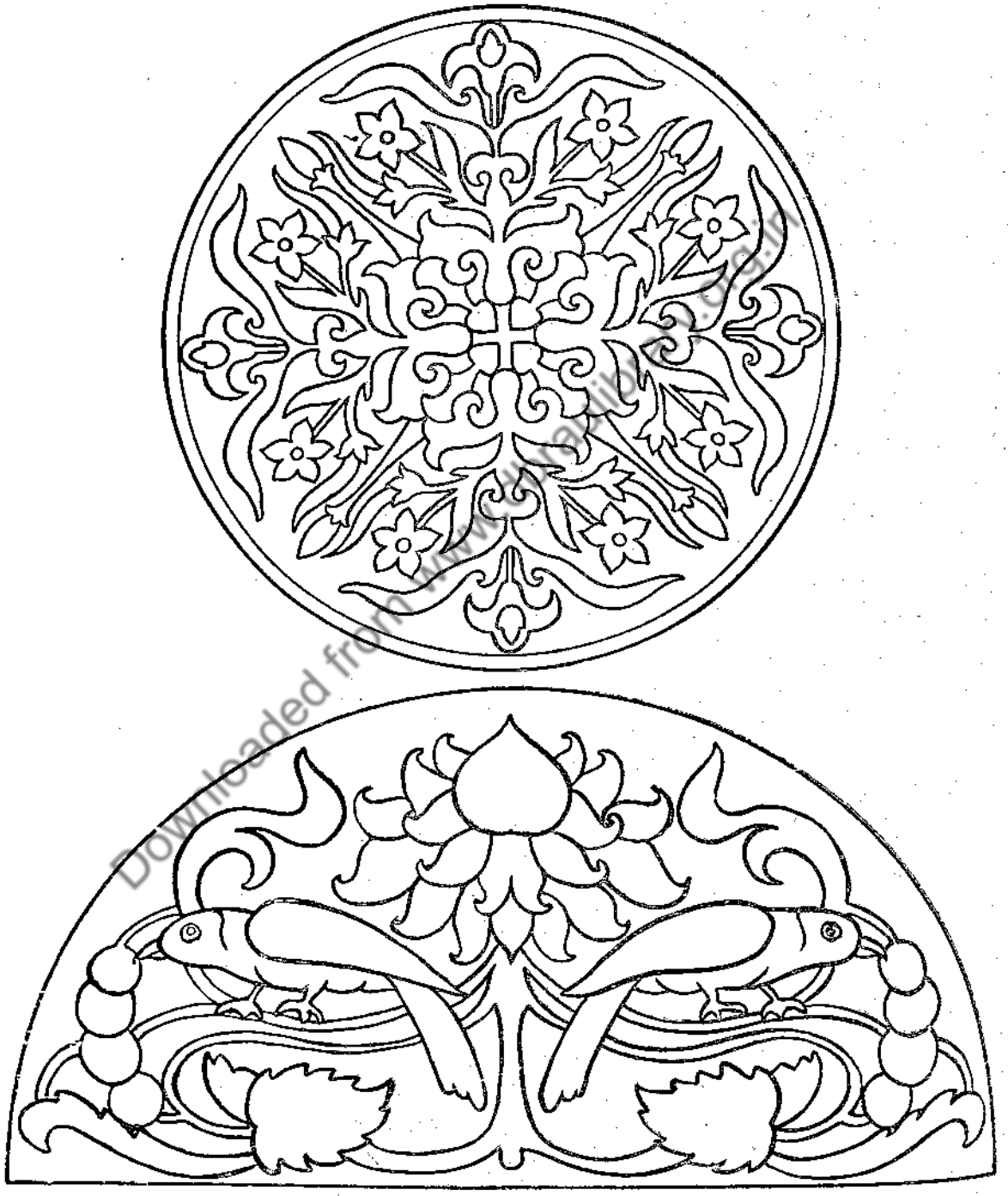

Downloaded from www.vaibhavlibrary.com

प्लेट नं० ७२

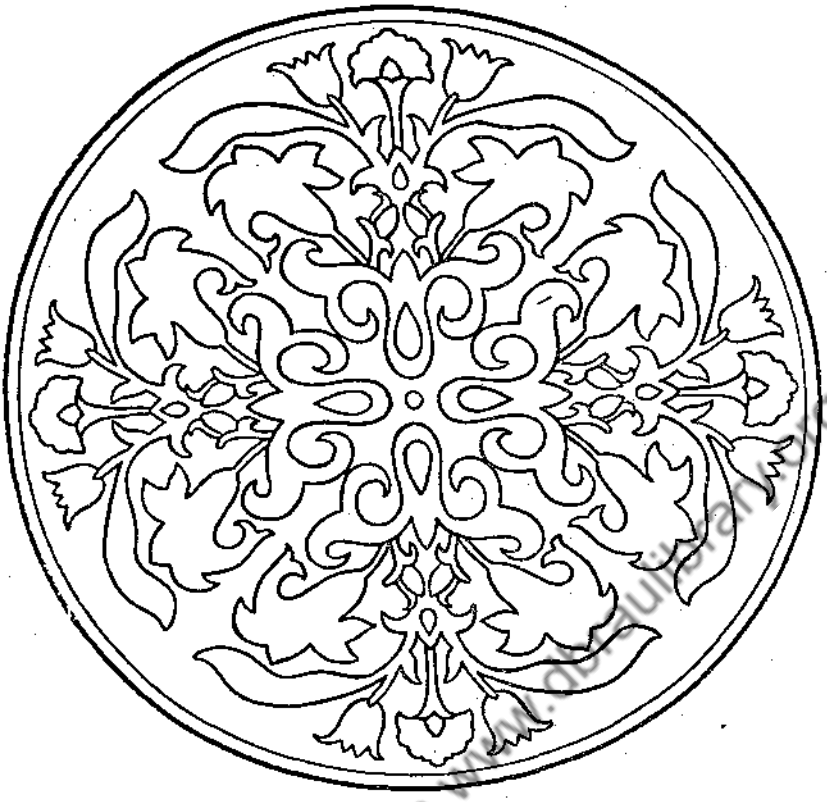

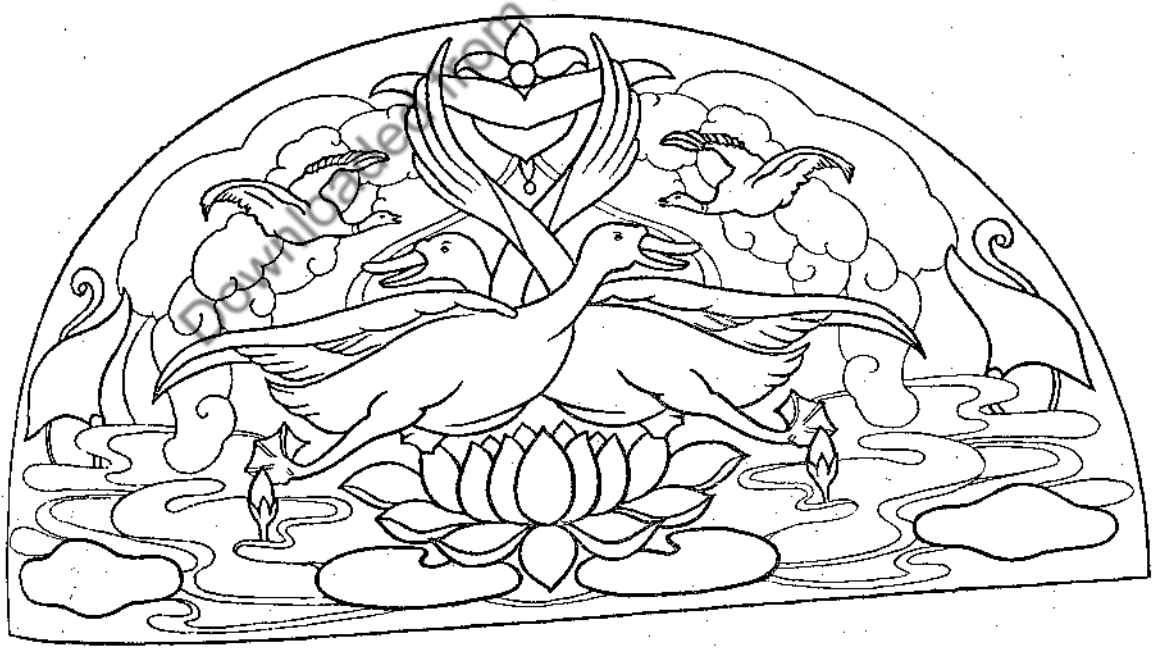

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

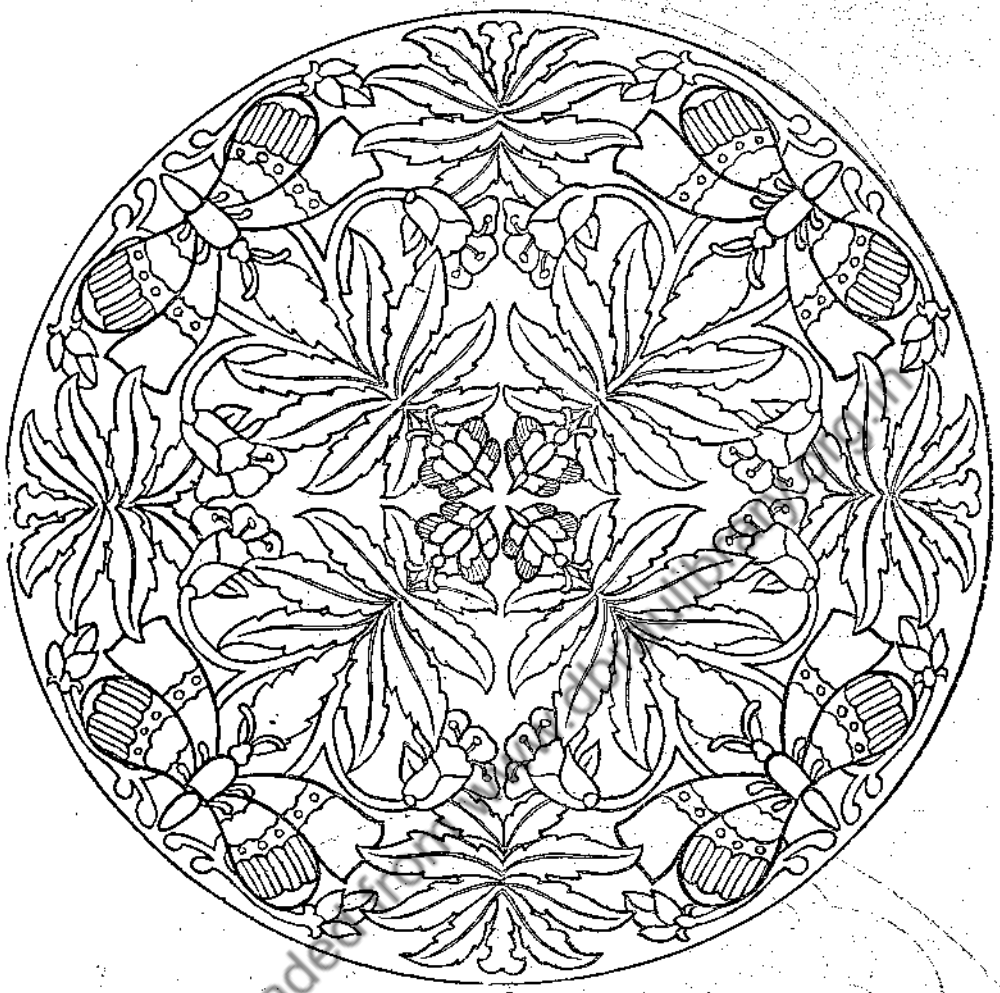

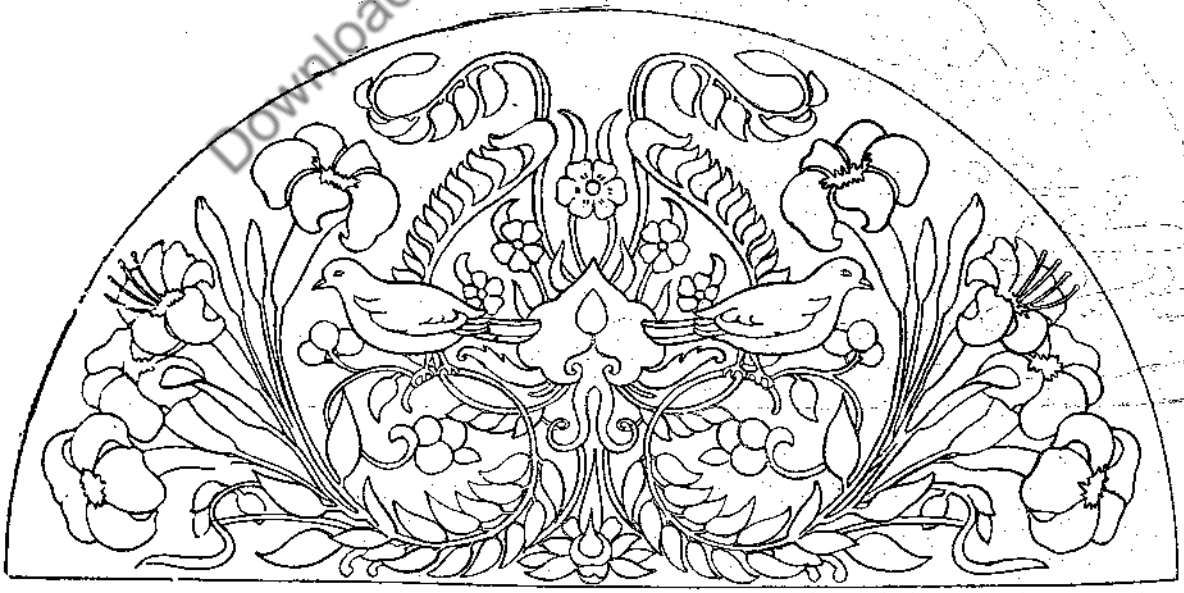

Downloaded from www.dbraulibrary.in

प्लेट नं० ७४

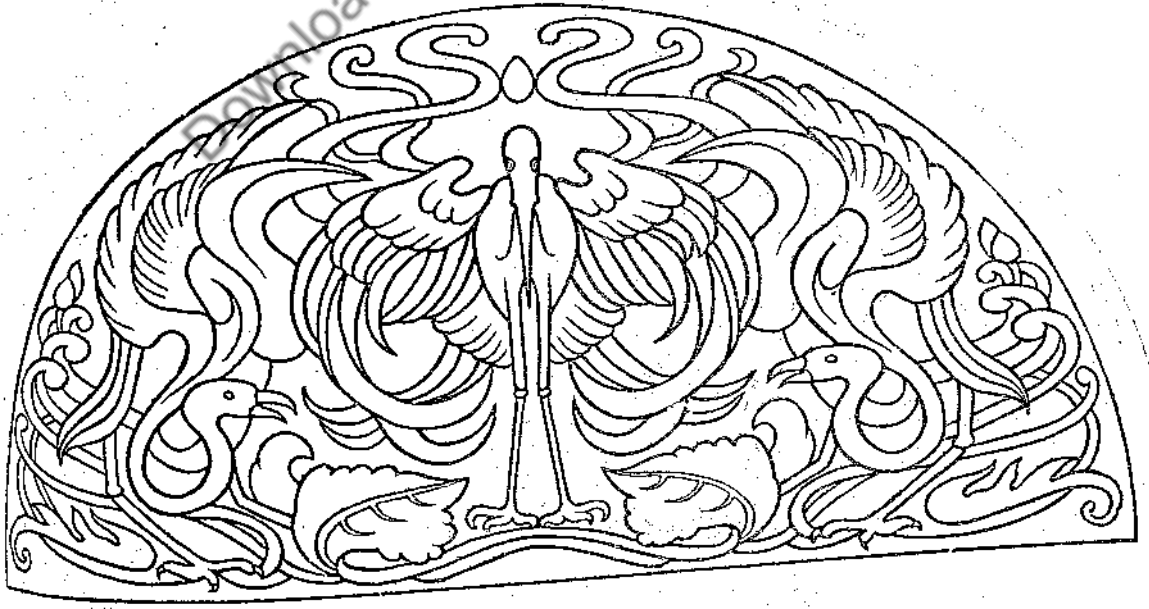

Downloaded from www.vedicbooks.com

प्लेट नं० ७५

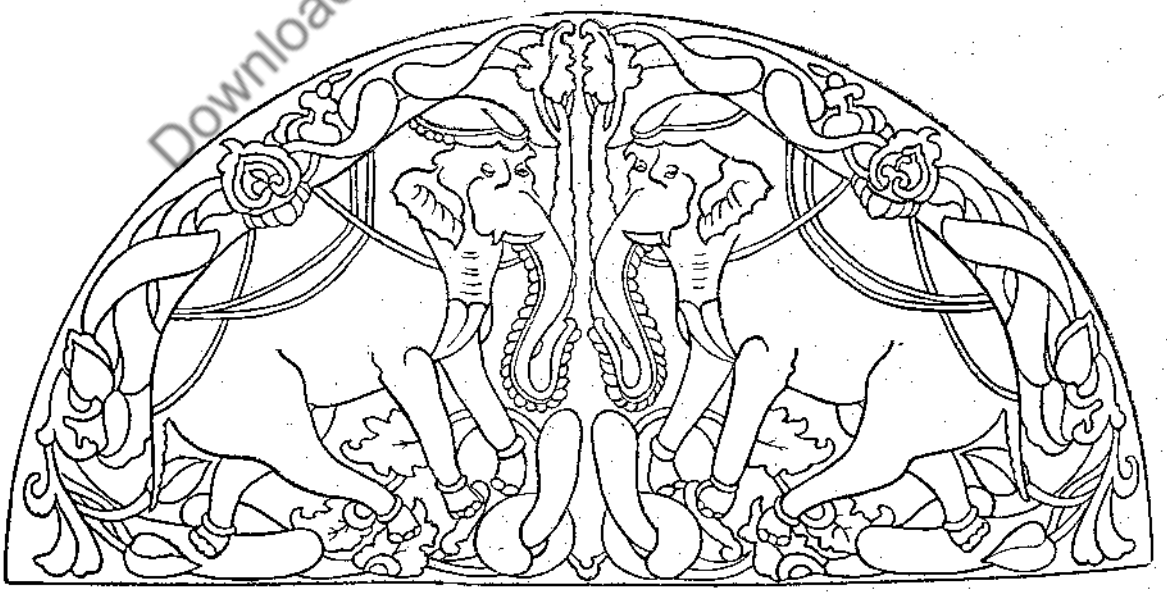

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

Downloaded from

Downloaded from

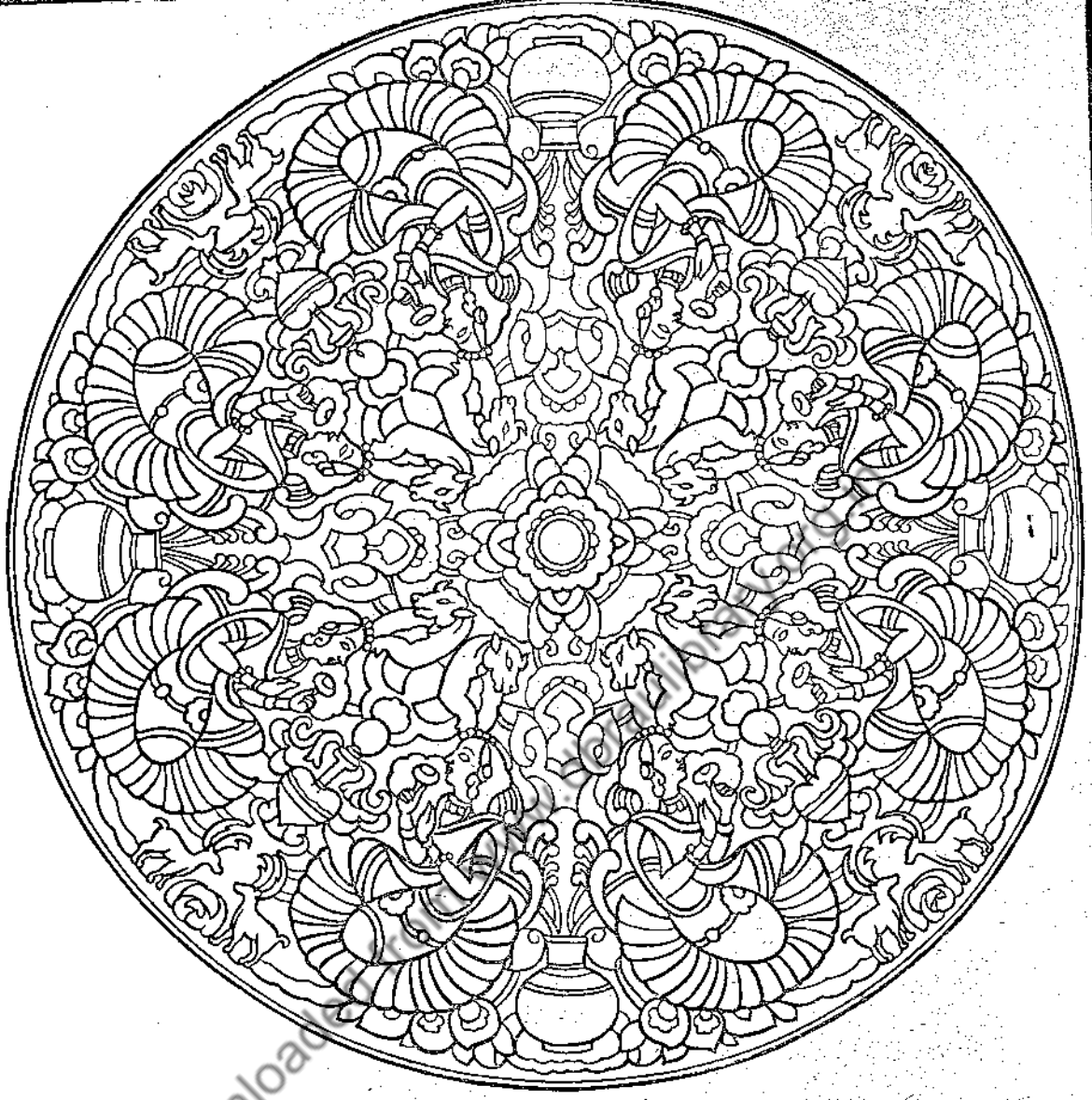

Downloaded from www.keralalibrary.org.in

रजाई के लिये आकार कल्पना

यद्यपि समष्टि रूप आकार कल्पना के अन्तर्गत इनकी भी चर्चा हो चुकी है किन्तु स्पष्टता के लिए यहाँ कुछ नमूने दे दिये गये हैं।

प्लेट नं० ८०

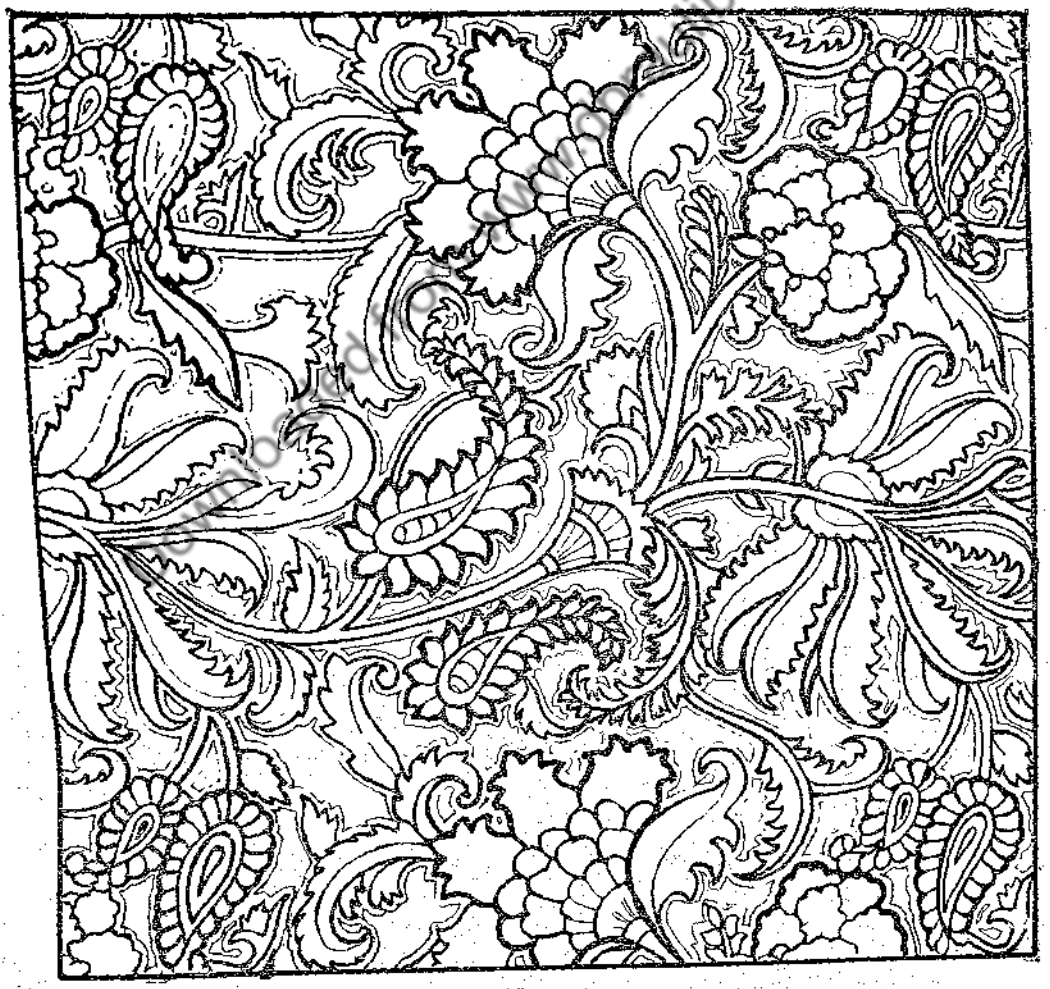

प्लेट नं० ८१

प्लेट नं० ८२

प्लेट नं० ८३

फर्श तथा छत के लिये आकार कल्पनाएँ

फर्श और छत दोनों की स्थिति पूर्णतया भिन्न है। एक पर हमारे पाँव पड़ते हैं और दूसरी को देखने के लिये हमें आँखें ऊपर उठानी पड़ती हैं। अतएव हम कह सकते हैं कि यदि फर्श की आकार कल्पना छत पर की आकार कल्पना से सादी और अपेक्षाकृत अधिक बड़ी हो तो सुन्दर दिखाई पड़ेगी। यहाँ छत की आकार कल्पनाओं का सिर्फ चौथाई भाग ही दिया गया है।

फर्श पर निन्यानवे प्रतिशत आकार कल्पनाएँ वर्गाकार बनती हैं और उनमें अधिकतर कल्पना-जन्य ज्यामितीय आकारों का ही प्रयोग होता है। छत पर के आकार वर्गाकार और वर्त्तुलाकार दोनों होते हैं और उनमें अपेक्षाकृत काम भी अधिक होता है। कभी-कभी एक वर्ग के भीतर भी वृत्त बनाकर दुहरा प्रभाव उत्पन्न किया जाता है। ऐसे आकारों में बीच के वृत्त के सन्तुलन के लिये किनारे के आकार में अधिकतर बेलें इत्यादि बनाई जाती हैं।

देश काल के भेद से इन आकारों में भी अन्तर आ जाता है। अजन्ता की छत पर बने आकारों में ज्यामितीय फल, फूल, पत्तियाँ, पक्षी-पशु तथा मनुष्य सभी के रूपों का समावेश हुआ है। कोने पर के लिये तो खास तौर पर मनुष्याकृतियों को लिया गया है। उधर मुसलमानी प्रदेशों में मनुष्य अथवा पशु पक्षियोंकी आकृतियों का अङ्कन धर्म विरुद्ध समझा जाता था अतएव वहाँ पर कल्पनाजन्य आकारों की ही धूम मची। दोनों को सामने रखकर अन्तर स्पष्ट हो जाता है।

Downloaded from www.dhamalibrary.org.in

प्लेट नं० ८४

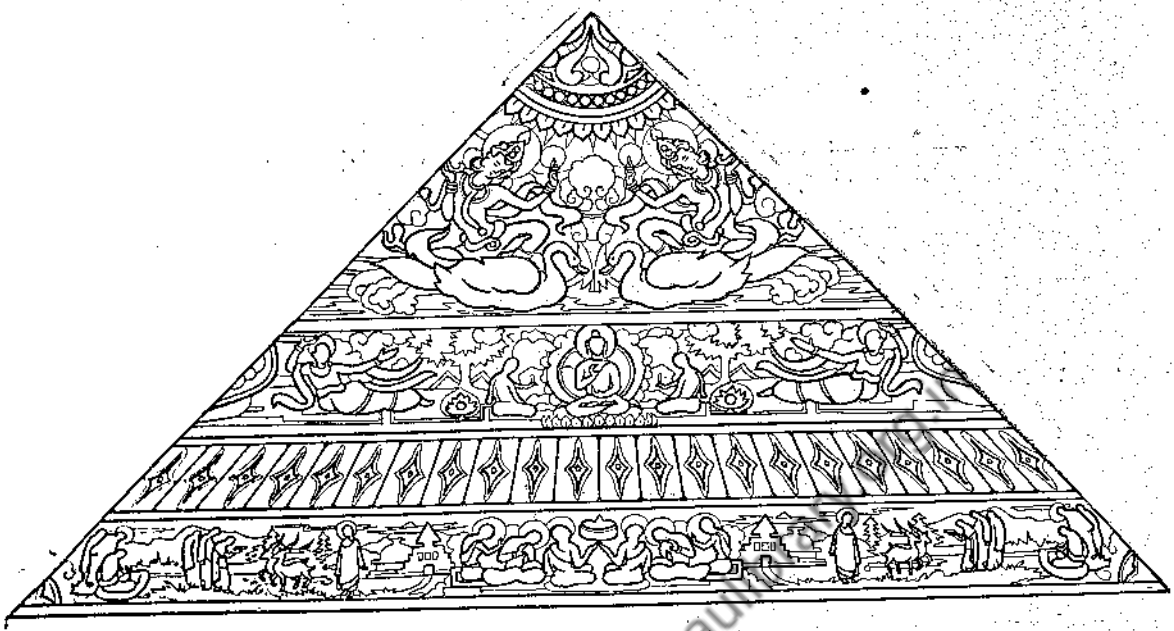

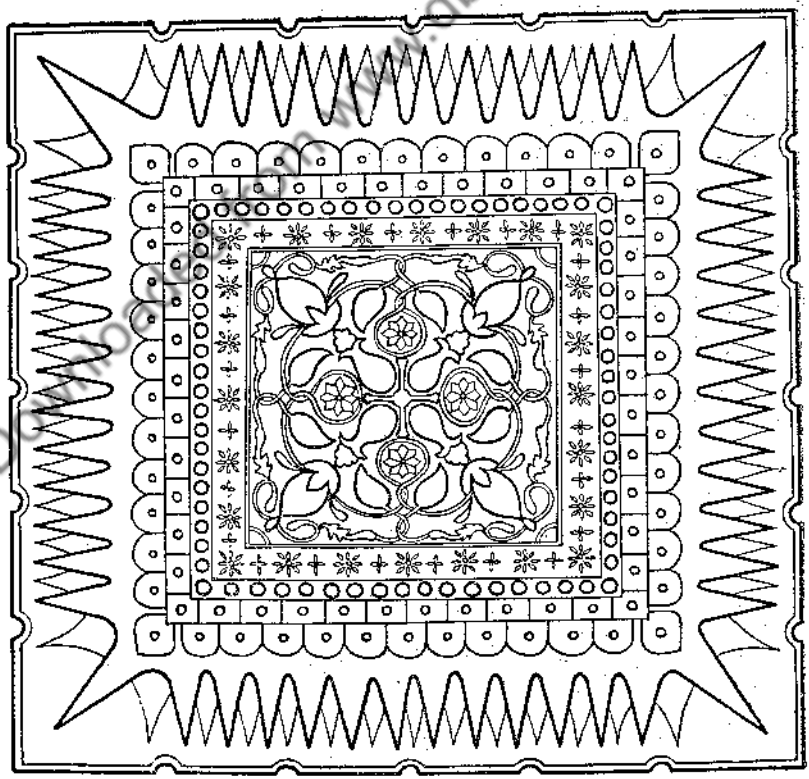

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्लेट नं० ८५

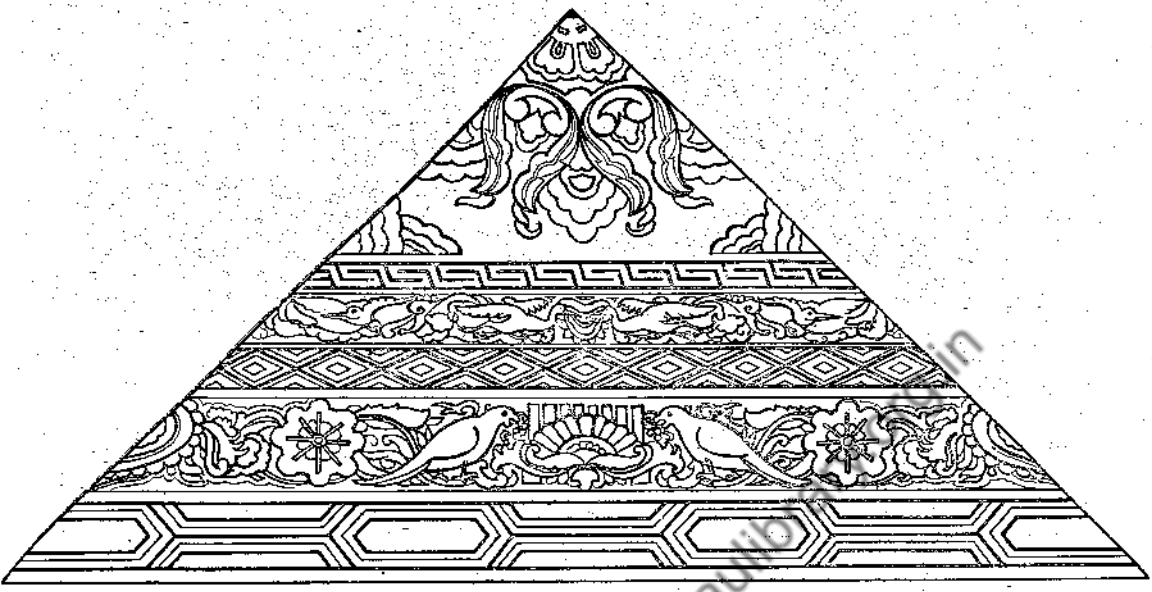

Digitized by eGangotri http://www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ८६

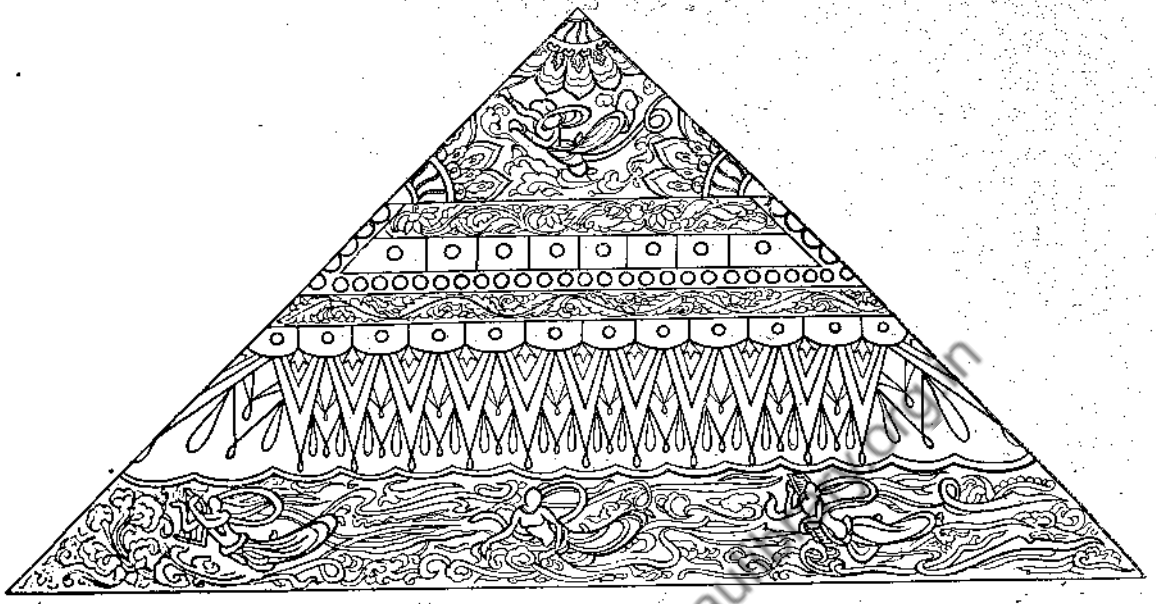

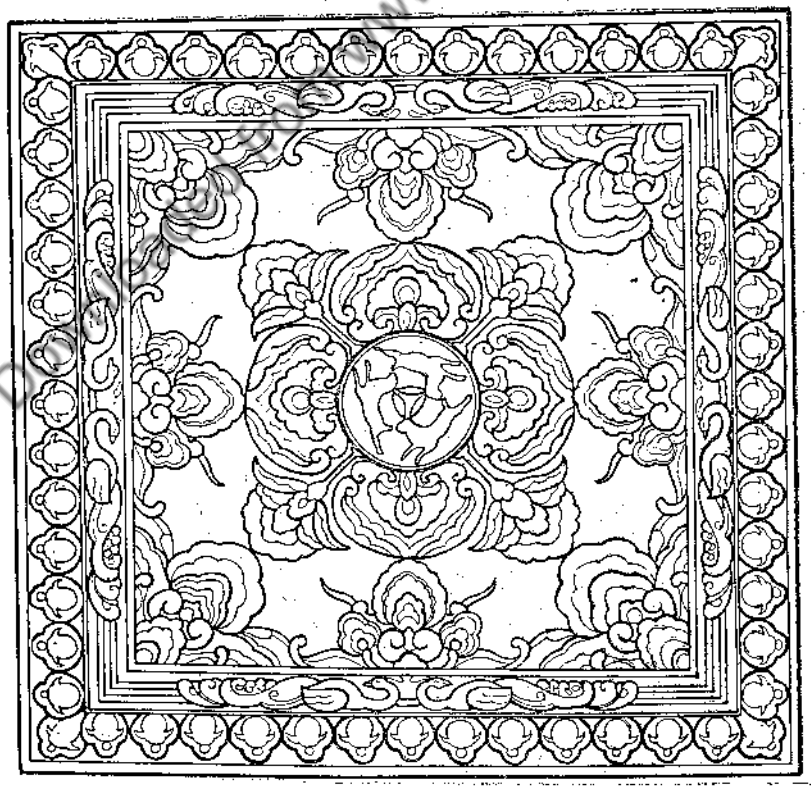

Digitized by eGangotri www.dbraubooks.com

प्लट नं० ८७

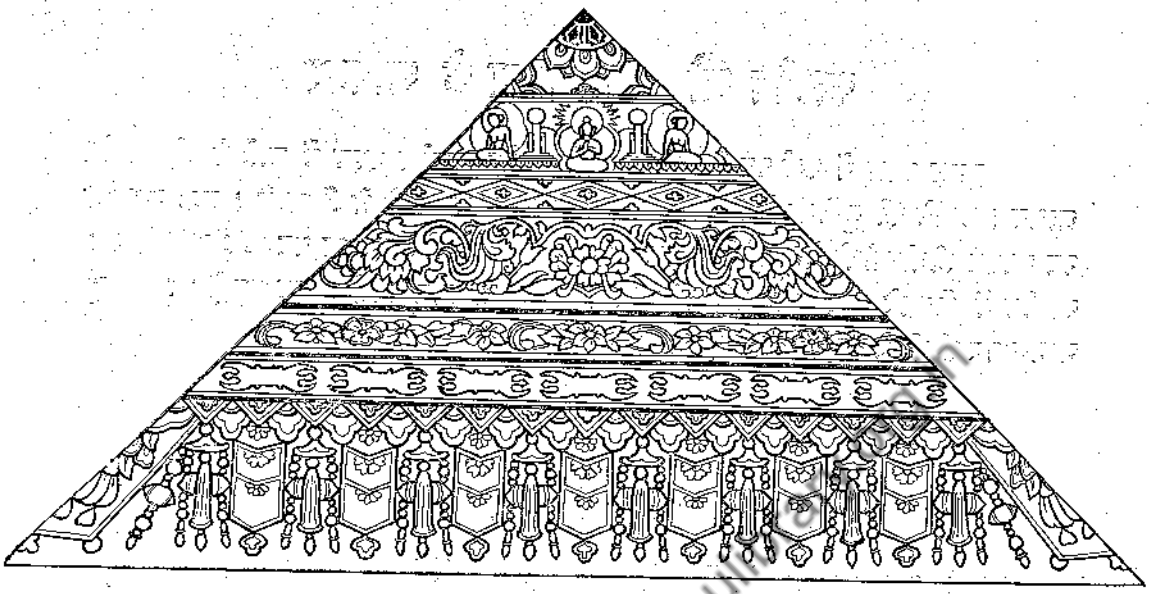

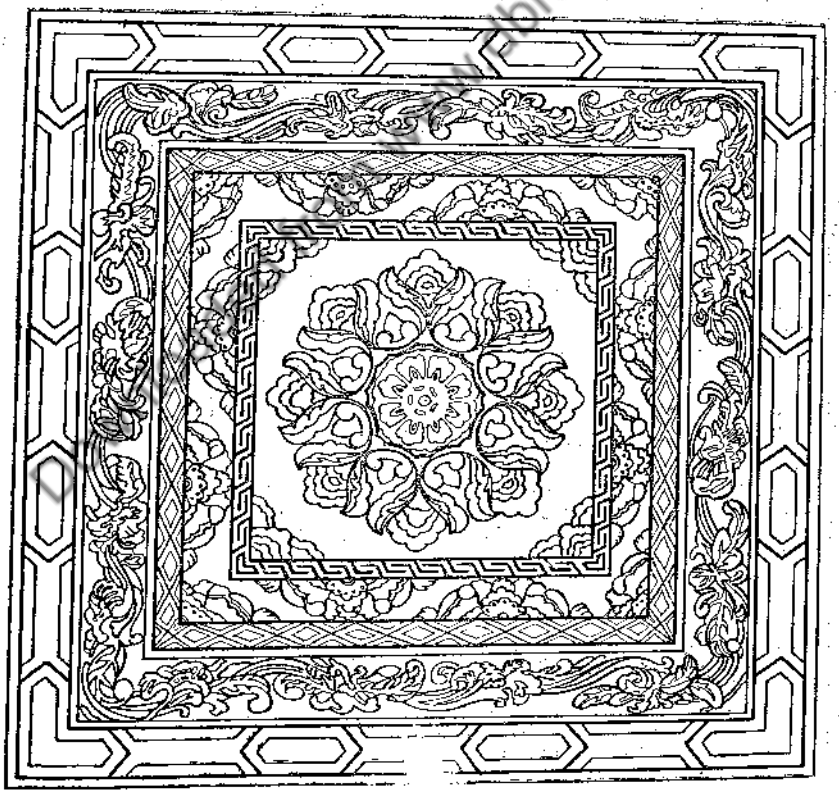

कालीन और जाजम पर के आकार

मुग़ल काल में फर्श पर बिछाने के लिये अमीर कालीन काम में लाते थे और गरीब जाजम। बनाने की सुविधा के विचार से दोनों फलक एक दूसरे से भिन्न थे। अतः कालीन पर अक्सर सीधी-सीधी रेखाओं से आकार बनाए जाते थे और जाजम पर फूल पत्तियों से। कालीन में किनारे पर फूल पत्तियों और पशुओं के आकार कोई अपवाप नहीं था किन्तु जाजम पर सीधी रेखाएँ अपवाद ही थी।

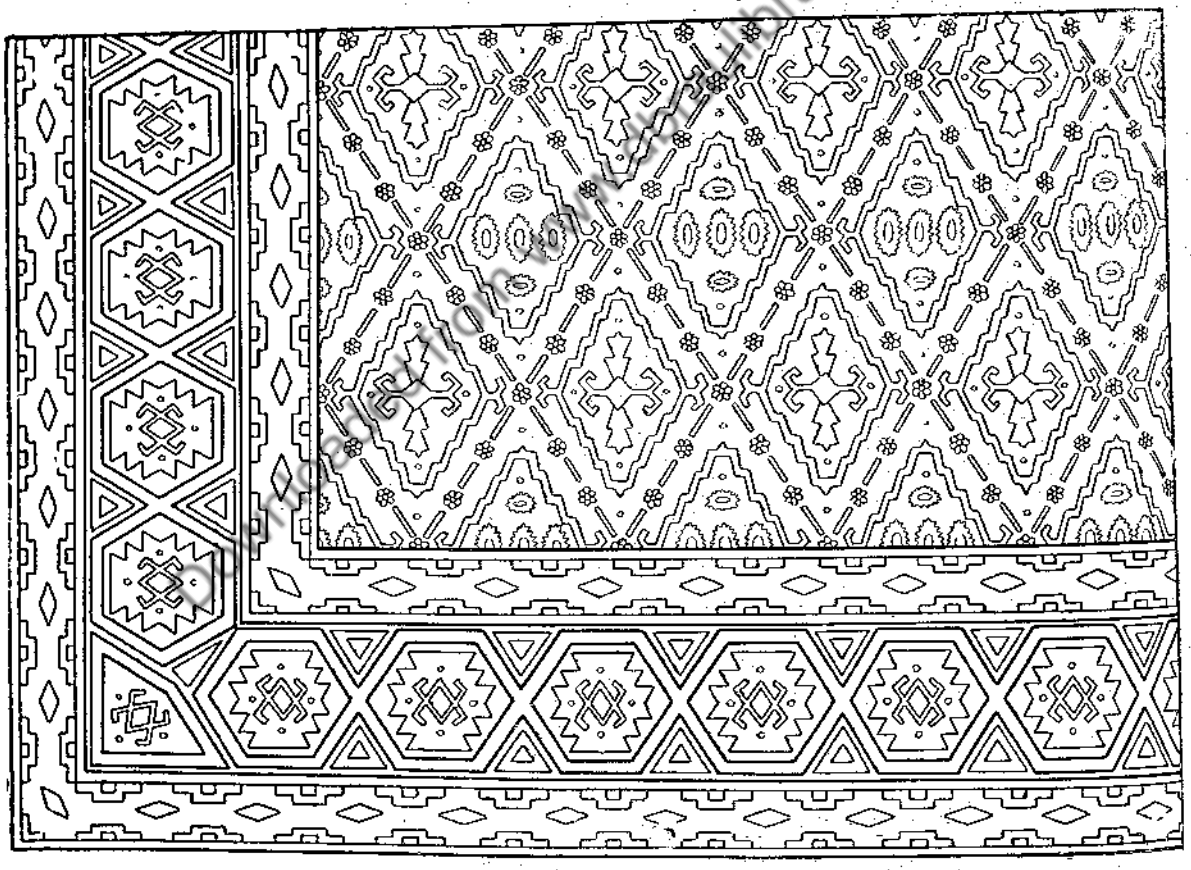

प्लेट नं० ८८

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ८६

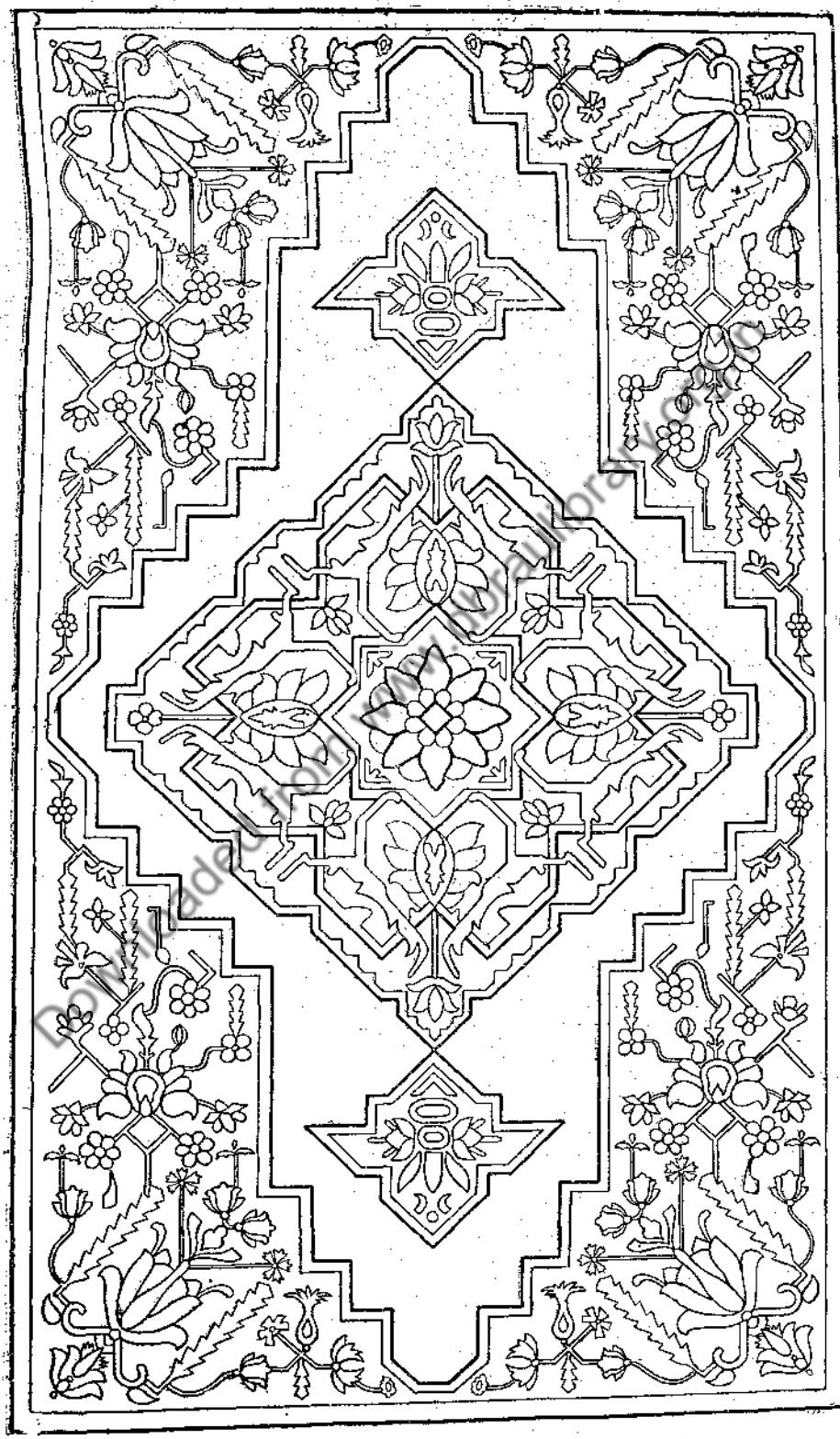

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ६०

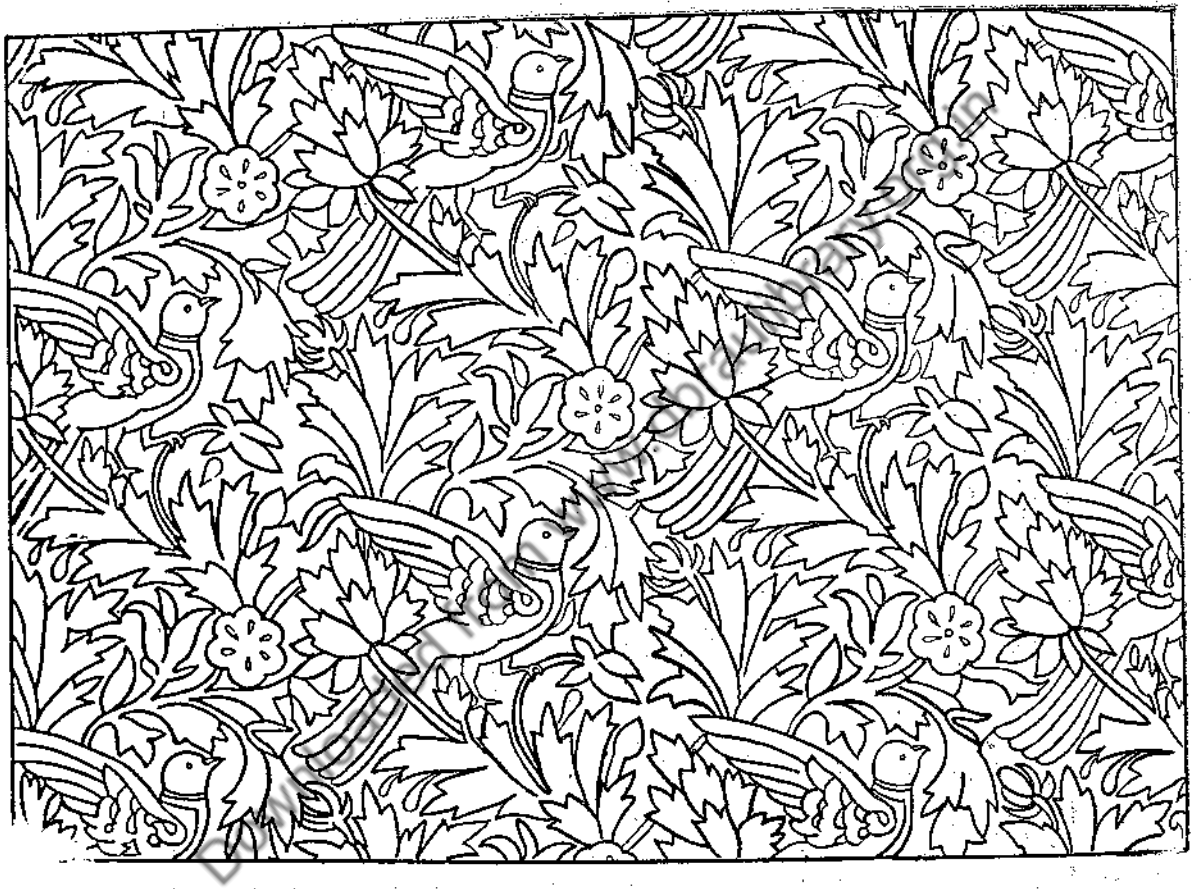

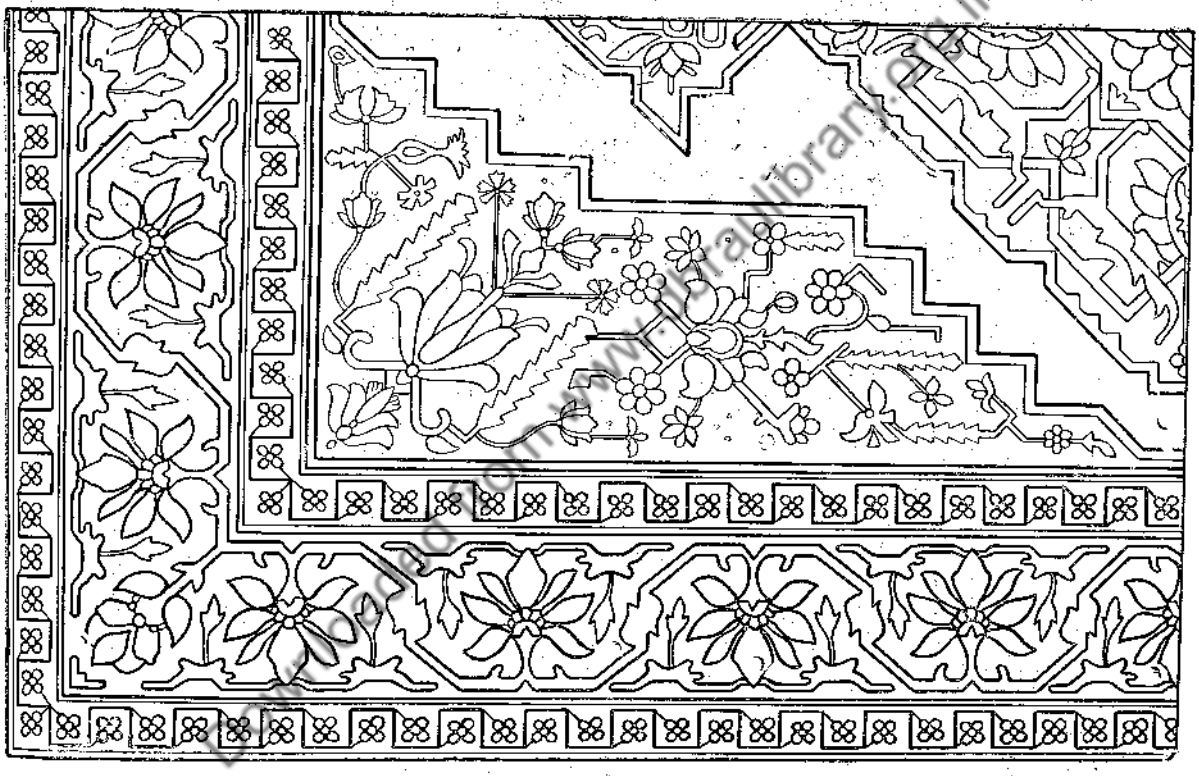

प्लेट नं० ९१

प्लेट नं० ६२

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

विविध आकार कल्पना

विविध

इस अन्तिम भाग में हमारा यह प्रयत्न रहा है कि कैसे एक दिये हुए स्थान (चाहे वह चौकोर को या पटकोण अथवा अनिश्चित सीमाओं वाला) को सुन्दरता से भरा जा सकता है। यह विद्यार्थी का अभ्यास और अनुभव ही बताएगा कि एक आकार के सन्तुलन के लिए कैसे दूसरे छोटे-छोटे रूपों को रखा जाता है। अध्ययन की सुविधा के लिये कुछ नमूने दे दिये गये हैं।

प्लेट नं० ६३

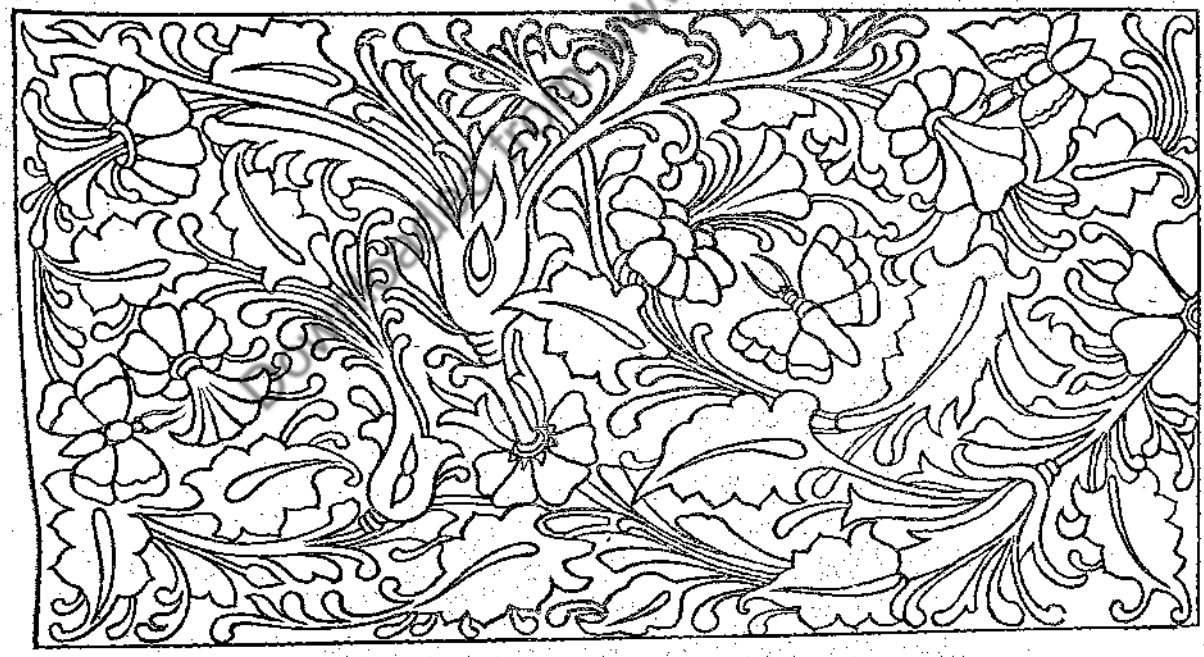

www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ६४

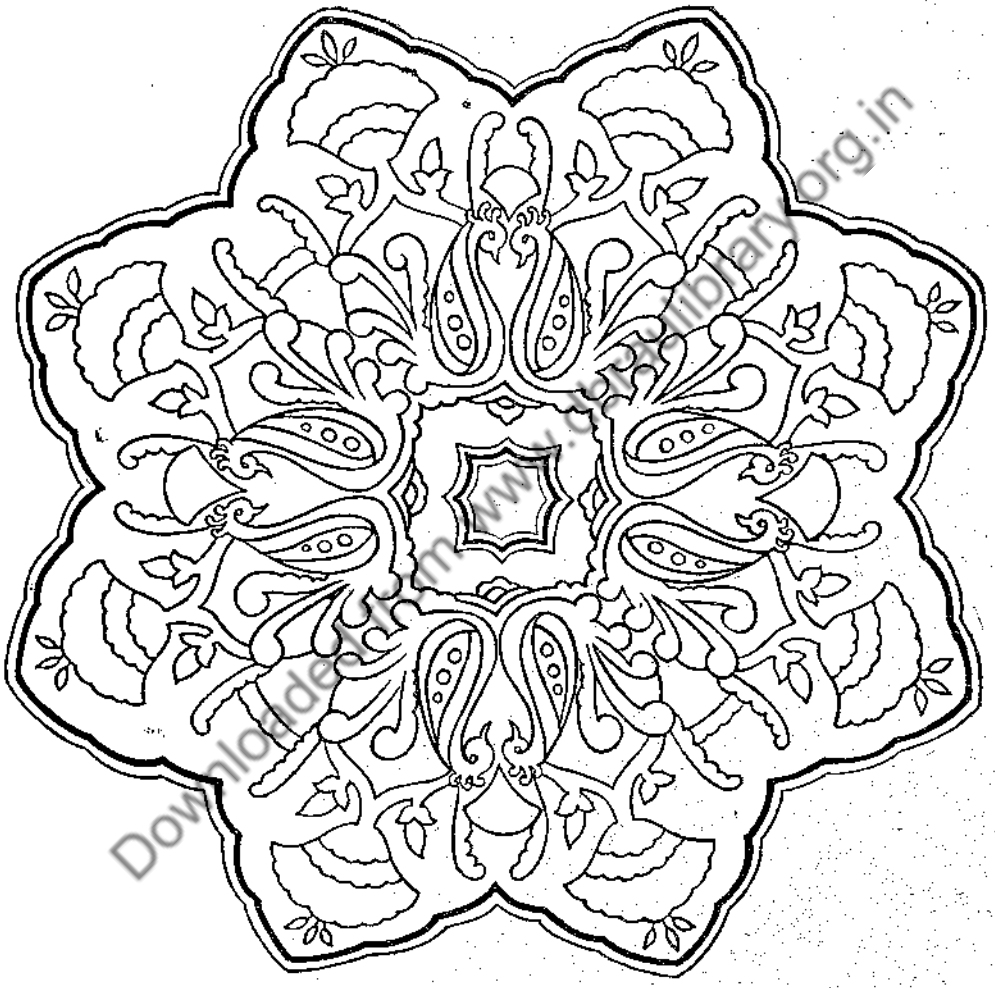

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ६५

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ६७

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ९८

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in

प्लेट नं० ६६

प्लेट नं० १००

Downloaded from www.dbraulibrary.org.in